बुन्देली
दरसन
अंक-3
2010
बुन्देली मेला
नगर पालिका परिषद्, हटा, जिला-दमोह

बुन्देली दरसन

अंक-3

2010

सम्पादक

डॉ. एम.एम. पाण्डे

सेवानिवृत्त, विकासखण्ड शिक्षा अधिकारी

हटा, जिला-दमोह (म.प्र.)

नगर पालिका परिषद्, हटा, जिला-दमोह

■ **संपादन**
डॉ. एम.एम. पांडे

■ **आवरण चित्र**
बुन्देली मेला 2009 की झलकियाँ

■ **आवरण अवधारणा**
नरेश गुप्ता

■ **छायांकन**
मनोज जैन, घनश्याम प्रजापति

■ **रेखा चित्र**
मनोहर काज़ल

■ **कम्पोजिंग**
इनसेट कम्प्यूटर्स, जबलपुर
मो. 9425158136

■ **मुद्रक**
स्टेण्डर्ड आफसेट जबलपुर
मो. 9425800132

■ **प्रकाशक**
नगर पालिका परिषद
हटा, जिला-दमोह (म.प्र.)

अनुक्रमणिका

क्र.	शीर्षक	लेखक	पृष्ठ
44	हरदौल चरित	लक्ष्मी ताम्रकार	58
45.	दूल्हा वेशधारी के ......!	उमेश विश्वकर्मा 'आहत'	59
46.	कलयुगी कुलटा माँ की बेटी को उल्टी सीख	राजा राम मिश्रा 'अवधेश'	59
47.	भीकमपुर के भिकारी (एक भूली-बिसरी बुंदेली लोक कथा)	आदित्य कुमार तिवारी	60
48	विलुप्त होती बुंदेली संस्कृति	डॉ. आर.वी. पटल 'अनजान'	62
49	बात सुन लैयो ज्ञानी की	पं. ज्ञानी महिराज	64
50	टसू रंग कपोल	मणि 'मुकुल'	64
51.	दानी राजा अमान सिंह	पं. बाबूलाल तिवारी	65
52.	बैठी किसान की लली	प्रदीप कुमार मिश्रा	65
53	बुंदेलखण्ड को शब्द देने वाले रचनाकार : डॉ. श्यामसुन्दर दुबे	डॉ. मनमोहन पाण्डे	66
54.	फागुनी दोहे	डॉ. जमना प्रसाद 'जलेश'	67
55.	साहसी प्रेमचंद सिंघई	सुरेन्द्र कुमार अग्रवाल	68
56.	बुंदेलखण्ड की अमर वीरांगना झाँसी की रानी लक्ष्मीबाई	श्रीमति पद्मजा राज हजारी	69
57	बुंदेली वैवाहिक लोकगीत	कु. सौम्या पांडे	72
58	बुंदेलखण्ड के साहित्यकारों का स्वतंत्रता संग्राम में योगदान	उदय शंकर दुबे	73
59.	अब नइ कोऊ काऊ के लाने	भजन लाल महोबिया	76
60.	भोला दामाद	डॉ. श्री नारायण पाठक	77
61.	जी की तपन मिटानी	डॉ. राजकुमार तिवारी 'सुमित्र'	80
62.	बुंदेली साहित्य : गद्य एवं पद्य की विकास धाराओं का क्रमिक विश्लेषण	डॉ. दुर्गेश दीक्षित	81
63.	दिन नीरे लगत बसन्तन के	प्रेमनारायण पाठक 'अरूण'	85
64.	नानकपुर के नकटा	अश्विनी कुमार तिवारी	86
65.	आल्हा : बुंदेलखण्ड की अनूठी पहचान	डॉ.राहुल मिश्र	89
66.	लोरी स्वरूप और उत्स	डॉ. श्यामबिहारी श्रीवास्तव	91
67	इनसें तुलसी गंगा हरी	दिनेश चन्द्र दुबे	93
68.	बुंदेली चार मुक्तक (राधिका सम्बंधी श्रृंगार परक)	डॉ. शिवाजी चौहान 'शिवा'	94
69	ससुरार में भौरो पैलो दिन	वीरेन्द्र शर्मा (कौशिक)	95
70.	गाँव में	साकेत 'सुमन' चतुर्वेदी	96
71.	बुंदेली के समय व मौसम का बोध कराने वाले शब्द	डॉ. सरोज गुप्ता	97
72	बुंदेली मेला	नवलकिशोर सोनी 'मायूस'	98
73.	बेड़नी	मनोहर काजल	99
74.	कलकल बहे है पिया नदिया सुनार	उमेश विश्वकर्मा 'आहत'	103
75.	लाग करें सब हाँसी	प्रेमशंकर ताम्रकार 'घायल'	103
76.	हटा नगर के प्रवेशद्वार	माखन लाल नेमा	104
77.	केशव की समकालीन परिस्थितियाँ और उनकी कलम	डॉ. कैलाश बिहारी द्विवेदी	106
78	राना लिधौरी के बुंदेली हायकू	राजीव नामदेव (राना लिधौरी)	108
79.	महाकवि ईसुरी-बुंदेली महाकाव्य-एक अनुशीलन	डॉ. सुशीला	109
80.	छन्द	डॉ. एस.बी.एल.पाण्डेय	111
81.	बुंदेली भाषा में समाज संरचना के भाव	डॉ. रामनारायण शर्मा 'कथाभूषण'	112
82.	दोहे स्व. निहाल तांबों	कामता सागर	114
83.	बसंत की छटा	भारतेन्दु अरजरिया	114
84.	परम्परा बुंदेली पुरानी पद्धति के एक निर्धन कृषक-लछाई की सत्य कथा (लछई के लिडेर)	भानुप्रताप शुक्ल	115
85.	बुंदेली मेला हटा (दमोह) म.प्र. 2009 (पुरस्कार वितरण)		116
86.	खेल विधा		117
87.	व्यंजन मेला - 2009		118
88.	बुंदेली मेला आयोजन समिति वर्ष - 2010		120
89.	प्रतिक्रियाएँ		122

सम्पादकीय ....

'बुन्देली दरसन' का यह तीसरा पुष्प आपकी अंजुरी में है। पिछले वर्ष के अंक की पांखुरियों की महक, अभी आपके आस-पास विद्यमान होगी। आपकी प्रतिक्रियायें सदैव मुझे इस सुगंध का अनुभव कराती रही हैं। बुंदेली पर केन्द्रित अन्य पत्रिकायें भी प्रकाशित हो रही हैं। हमारा उद्देश्य है कि हम अपने आस-पास को जानने का उपक्रम अपनी पत्रिका के माध्यम से करें। हमारा अपना बुन्देली अंचल है- सुदूर बुन्देली अंचल की अकसर छवियाँ, हमारे लेखक, हम तक प्रेषित करते रहते हैं-किन्तु हमारे अपने आसपास को हम अच्छी तरह से नहीं पहचान पाते हैं। दिया तले यद्यपि अंधेरा होता है; किन्तु हम इस अंधेरे को भी उजेले में बदलना चाहते हैं। इसलिए हमारा प्रयास है, कि हम पहले अपने को जाने। इसको जानने से हमें एक आत्म-गौरव की अनुभूति होगी।

हमारा अपना अंचल जिस प्राकृतिक सौन्दर्य से मंडित है- हमारी स्थानिक परम्परा में जिस इतिहास का गौरवपूर्ण सृजन करती हैं- हमारे क्षेत्र का जिन विशिष्ट प्रतिभाओं ने इस अंचल को राष्ट्रीय पहचान दिलायी है- उनका स्मरण भी हमें करना चाहिए। इस तरह जब छोटे-छोटे अंतरीयों की पहचान के, सूक्ष्म बिन्दुओं की पड़ताल हम करेंगे तब समग्र बुन्देलखण्ड को हम संपूर्णता में अनुभव कर पायेंगे।

हमारा यह उद्यम, सदैव रहेगा कि जो कुछ हमसे छोटे से अंचल में परिवर्तन शीलता के चिन्ह परिलक्षित हो रहे हैं- वे भी हमारे अध्ययन के विषय बने। इस तरह से हम अपने सतत विकास पर सम्पूर्ण दृष्टिपात भी कर पायेंगे। पत्रिका का यह अंक आपको कैसा लगा- इसे जानने की भी उत्सुकता हमारी रहेगी।

श्री ज्ञानी महिराज, स्नेह ने मुद्रण में जो सहयोग दिया, अतः वे साधुवाद के पात्र हैं।

'बुन्देली मेला' के शिल्पि कुंवर पुष्पेन्द्र सिंह हजारी बुंदेली के सपूत सिद्ध हैं। नगर पालिका परिषद हटा के अध्यक्ष श्री बाबूलाल तंतुवाय ने पत्रिका प्रकाशन कर स्तुत्य कार्य किया है। समस्त पार्षदगण प्रशंसा के पात्र हैं।

– डॉ. एम. एम. पाण्डे

बुन्देलखण्ड के व्यंजन और वैज्ञानिकता

– डॉ. प्रेमलता नीलम

किसी भी देश, प्रान्त, नगर, गाँव की लोक संस्कृति को रहन-सहन, खान-पान बोली, भाषा से पहचाना जाता है। प्रत्येक जनपद के लोक जीवन एवं संस्कृति में अंतर होता है। चाहे मालवा क्षेत्र हो या ब्रज, निमाड़ी, बघेली, बुन्देली इन सभी क्षेत्रों की बोली, पहनावा, खान-पान में अंतर है। हमारे बुन्देलखण्ड में भी लोक संस्कृति की विलक्षण पहचान है। जैसे वेशभूषा, आभूषण, वैवाहिक रस्में, खेल एवं रसानु-भूति पूर्ण व्यंजन प्रचलित हैं। बुन्देली व्यंजन स्वाद के साथ-साथ पौष्टिक तत्वों से युक्त है। छः पौष्टिक तत्व पाये जाते हैं जैसे प्रोटीन, कार्बोज, वसा खनिज-लवण, विटामिन और जल। ये सभी तत्व हमारे बुन्देली व्यंजन अर्थात भोज्य सामग्री में बराबर विद्यमान हैं। और लोकसंस्कृति की पहचान हैं एक कहावत प्रचलित है-

मऊआ मेवा, बेर कलेवा, गुलगुच बड़ी मिठाई।
इतनी चीजें चाहो तो बुन्देलन में करो सगाई॥

अर्थात, जनपद की पहचान लोकरंजन, लोक संस्कृति से होती है। हर्षवर्द्धन काल, तोमर काल, बुन्देल काल, पुनरुत्थान युग तथा आधुनिक काल बीसवीं सदी के शतक से लेकर आज तक बुन्देल खण्ड की लोकसंस्कृति में लोकगीत, लोक साहित्य, लोक आभूषण, लोक पहनावा और लोक व्यंजन की परम्परा ने वैज्ञानिक एवं मनोवैज्ञानिक दृष्टि से प्रमुख स्थान स्थापित कर जन मानस के जीवन को सुख समृद्धि के साथ ही स्वस्थ जीवन भी प्राप्त हुआ है। खेती हर किसान के भोजन से लेकर वैवाहिक पंगत (ज्योनार) के व्यंजन, तीज त्यौहार के व्यंजन और प्रतिदिन सुबह, दोपहर, शाम की बियारी में विविध प्रकार की रसोई तैयार कर पौष्टिकता युक्त भोजन गृहणियाँ परोसती है। विज्ञान इतिहास कारों के अनुसार रामायण काल, महा भारत काल में शक्ति वर्धक भोज्य वस्तुओं का सेवन हुआ जैसे गेहूं, चाँवल, चना से बने भोज्य पदार्थ, जंगली फलों से बनी चटनी, मधुर पेय पदार्थ, आम, बेल आदि। दूध, दही, मक्खन, घी जैसे पदार्थों का प्रचलन आरम्भ हुआ। मौर्य शुंगकाल में महाभारत की तरह व्यंजन का प्रयोग होता था। दूध, दही, मठा, पनीर, मक्खन का सेवन अधिक था इससे शारीरिक सौष्ठव में वृद्धि होती है। वैज्ञानिक दृष्टि से दूध सम्पूर्ण आहार की श्रेणी में आता है जो शरीर को हृष्ट-पुष्ट बनाता है। हर्षकाल में साठी, चाँवल, तंदुल, आटा, सत्तू, जंगली कन्दफल यही आहार श्रेष्ठ माना गया। चंदेलकाल-बुन्देलखण्ड की सुख समृद्धि उन्नति का काल सिद्ध हुआ। खाद्य सामग्री की उपज इस काल में उन्नत थी। अतः कृषक वर्ग भी राजा-रजवाड़ों की श्रेणी में माने जाते थे। इसी समय से बुन्देली व्यंजन की विविधता दृष्टिगोचर हुई। गेहूं, चाँवल, चना, सभी प्रकार की दालें, ज्वार, बाजरा, मक्का, कुदई। दूध से बने मिष्टान, गन्ना, ईख से बने गुड़, शक्कर और इनसे बने रसीले व्यंजन, पकवान। जलाशयों से प्राप्त कमल गटा, ककड़ी, सिघाड़े। फलों में बेर, बिही, आम, सीताफल, मकोरा, आँवले सर्वाधिक पाये गये। तोमर काल में व्यंजन इस प्रकार से प्रचलन में आये जैसे बरा-बरी, लपसी, कसार, सेव के बने लड्डू, मोती चूर के लड्डू मंदा शक्कर के शकर कंद, लुचई, खाजे, फेंनी, गूझा, बिढ़ई, भाड़े, रोटी, कढ़ी, महेरी, ठड़ूला, डुबरी, सिमइंयाँ, खीर, मीड़ा, बेसन गटा (बेसन के आलू) लपटा, माल पुआ, पनबरा, बफोरी, बुन्देल काल से आरंभ हुआ, सगाई बारात का भोजन जिसे समूंदी रोटी और पक्की रोटी नाम दिया गया। 16वीं 17वीं सदी में तुलसी, केशव, हरिराम व्यास की रचनाओं में जेवनार का उल्लेख है जिसमें सभी प्रकार की दालें जिनसे प्रोटीन प्रायः होता है जो शक्ति दायक भी है। भात, अर्थात चाँवल, कढ़ी, बरी, मगौरा, पापर कोंच कचरियाँ, बिजौरा खाँड़, घी, भाड़े, मिर्च का चूर्ण और बरा आम का अचार जिसे समूंदी रोटी कहते हैं। तथा पक्की रोटी अर्थात पक्की रसोइ, पक्यात होने पर (सगाई होने पर) तैयार होती है। वह है, तिरकारी बरी की (उड़द की बरी) लुचई (पुड़ी) कचौड़ी, पपरियाँ, खाजे, मालपुआ, लड्डू, मोहन भोग खीर, रायता, चटनी, खांड़ (शक्कर) का प्रचलन आज भी है। पक्की रसोई के बाद दूध से बने पेय का सेवन जरूर होता है। कलेवा अर्थात नास्ता में गर्म जलेबी, लड्डू, कचौड़ी, बुंदी। गाँवों में डुबरी, लटा, भुने चना, सत्तू, बेर से बना बिरचुन, गुड़ से पगे गेहूं गुड़ से पगे बेसन के सेव, मिष्ठान के रूप में आज भी प्रचलन में है। तीज त्यौहार में, खुरमा, बतियाँ, पपरियाँ, गुझियाँ, गुलगुला, लड्डू, बर्फी का चलन आज भी है। आम को पना, इमली को पना

भोजन के साथ जरूर परोसा जाता है कहावत है- ''इमली की चटनी, आम को पनौ बताओ हटा बारे कैसो बनौ।'' बुन्देली सभी व्यंजनों में पौष्टिक तत्वों की प्रचुरता है। ठोस व्यंजन में गकरियाँ भरता का आहार पौष्टिकता से युक्त हैं। सुबह से कृषक और मजदूर वर्ग गकरियाँ ग्रहण करके काम पर जाता है तब ऊर्जा का संचार अत्यधिक होता है कम से कम आठ घंटे के बाद ही भूख का अनुभव होता है। ठोस पदार्थ में लुचई कचौरी, डुबरी, लटा, पुआ, गुलगुला, आते है कार्यक्षमता बढ़ती है। बुजुर्गों ने कहा है- ''मऊआ, बेर, चना, चबैना, बिन गरी, चिरौंजी, परे न चैना।'' यह बुन्देल खण्ड की नायिका ने सुरुचि पूर्व विशिष्ट भोज्य तैयार कर रखे अपने प्रिय सम्माननीय साजन के लिए किन्तु वे गाँव नहीं आये किनारे से निकल गये लोककवि कहते है-

''मऊआ मोरे भुंजे घरे हैं, लटा धरे है कूट,।
ग्योड़ें होकें साजन कड़ गये, कौन बात की चूक।''

काव्यात्मक रूप में शाम (बियारी) के व्यंजन का उल्लेख रचनाकार ने यूं किया है।

''डुबरी, महेरी, लचका, लपटा, कढ़ी वरी, दार और भात।
वरा फरा से चुरभुर पापर, करौंदा, आँवले चटनी संग सुहात।
कुदई, कनूका, मक्का, जुनरी, बाजरा, बिर्रा रोटी की अजब बहार,
कुमढ़ खीर, सिमैया, हलुआ, गकड़ भुरता, तुरई लौकी रसदार।
अंगर भुजा, चीला तबा के, ठडूला बना परसे सुगर बुन्देली नार
गन्ना चोखें, सिंघाड़े खावें आटे के लड़ुआ घी गुर डार।

बुन्देलखंड में भोजन संबंधी कुछ लोकमान्यताएँ भी प्रचलित हैं जैसे पुराना पान, नया घी स्वास्थ्य की दृष्टि से सुखदायक है लोककवि ने कहा है।

''पान पुरानों घी नओ, उर कुलवंती नार, जे तीनइ जब पाइये जब हों प्रसन्न करतार।'' इसी तरह खान पान के लिए निम्न व्यंजन निरोगी काया रखने के लिए प्रतिपादित हैं मौसम के अनुसार भोजन में लेने के लिए

''चैत'' मीठी चीमरी, वैसाख, मीठो मठा,
जेठ मीठी खीर, खाँड़, भाँदो भुंजे चना
क्वार मीठी काकरी ल्याब मीठी टोर के,
कातिक मीठी कुदई दही डारो मोर कें।
अगहन खाओ जूनरी, भुर्रा नीबू जोरकें,
पूस मीठी खीचरी गुर डारो ऊमें फोर कें।''
बार हौं महिना खाओ दरिया काम करो दौर-दौर कें।

स्वास्थ्य की दृष्टि से मौसम के अनुरूप कब कौन-सा भोजन लेना चाहिए और कौन-सा नहीं लोक प्रचालित कुछ वर्जनाएँ भी प्रसिद्ध हैं।

''चैत गुर वैसाखै तेल, जेठे मउआ आसाढ़े बेल,
सावन भाजी, भादों मही, क्वाँर करेला, कातिक दही,
अघनै जीरों पूसै धना, माघै मिसरी और फागुन चना।
इतनी चीजें खेहो तो मरहो न तो पर हो सही।''

भोजन पकाने की विधियों पर भी निर्भर है भोजन की पौष्टिकता तेल, घी में तली भोज्य वस्तुओं में पौष्टिक तत्वों की प्रधानता गायब हो जाती है। भाप द्वारा कम आंच में पकाया भोज्य पदार्थ पौष्टिकता युक्त होता है। उदाहरण के लिए ''कच्ची रोटी बेंजाँ खोटी।,, ''चाँवर की कनी उर भाल की अनी।''अर्थात कच्ची रोटी, कच्चे चाँवल स्वास्थ्य के लिए हानिकारक हैं। उत्तम आहार से ही उत्तम मानसिक, शारीरिक विकास होता है। कहा भी गया है, ''जैसो खाओ अन्न ऊँसई भओ मन।'' और- जैसो पानी पीजिए, वैसी वानी बोलिए।''

लोक संस्कृति में जमीन पर बैठकर भोजन ग्रहण करने की प्रथा है बैठकर भोजन लेने से पाचन योग होता है किन्तु वर्तमान परिवेष में लोकमान्यताओं को ध्यान में न रखकर बहुत सी बीमारियों को आमंत्रण दिया है। प्राचीन काल में भोजन, पेय शुद्ध होता था, तभी रोग दोष से मुक्त होते थे। बुन्देल खण्ड के राजाओं ने अनेको लड़ाईयाँ लड़ी, अपनी दम पर और विजयी हुये। यह खान-पान का ही प्रभाव था बुन्देली व्यंजन से स्वस्थ विचार, आचार का संचार होता है। बुन्देली वीर बुन्देलों की धरती, इसीलिए वैभवशाली रही है और रहेगी। भोजन के बाद प्रथा है वीड़ा खाने की-

''महोबा को पान,
बुन्देल खण्ड की शान।''
'जय बुन्देल खण्ड'

- काव्य कुंज
एलोरा कॉलोनी, दमोह

बुन्देल संस्कृति में लोक जीवन

– शेख मुस्तफा कुरैशी

भारत वर्ष के मध्य में यमुना, नर्मदा, चम्बल तथा टोंस नदियों के बीचों बीच का भाग बुन्देलखण्ड के नामसे जाना जाता है, यहांके रहन-सहन में सरलता, सादगी, स्नेह, मर्यादाओं का भरपूर समावेश, एक सामाजिक ईकाई से बांधते हैं, प्रमाण में क्षेत्र की सीमायें समय-समय पर बदलती रही है, परन्तु लोकगीत के माध्यम से स्पष्ट होता है।

इत जमुना उत नर्मदा, इत चंबल उत टोंस
छत्रसाल सो लरन की, रही न काहू होंस॥

इस क्षेत्र का नामकरण ''बुन्देला'' वंश के अधिपत्य के आधार पर किया गया है, जिसका उदय 14वीं सदी में हुआ, चौहान शासकों की अमिट छाप अब भी इस क्षेत्र में देखी जाती है, एवं राजपूत, चंदेल वंशजों के भी प्रमाण मिलते हैं, इसी वजह से राजपूती शानों, शौकत एवं स्वाभिमान यहां की सांस्कृतिक नसों में बसी है, शौर्य गाथाओं का सिलसिला बुन्देलखण्ड की सांस्कृतिक विरासत का अभिन्न अंग है, बुन्देलखण्ड के जनमानस का लोक कलाओं से पूरी तरह जुड़ा होना ही हमारी लोक संस्कृति की सफलता है, जो विभिन्न परिवर्तनों के बावजूद अपने मूल रूप में अभी भी सुरक्षित है, आम आदमी की सक्रिय भागीदारी और उसके अभिव्यक्त करने में ससक्त प्रस्तुति, इन वीर गाथाओं से स्पष्ट होती है-

बारह बरस लौं सूकर जीवे, और सोरा लौं जिये सियार।
बरस अठारह लौं छत्री जिये, आगे जीवे तो धिक्कार॥

लोकगीत, लोक नाट्य, लोक नृत्य, दीवारी, झागें, झगड़ा की फागें, पारिवारिक संबंधों की प्रस्तुति, लोक वाद्यों के उपयोग से प्रभाव बढ़ जाता है। रामायण, महाभारत, आल्ह खण्डों में वर्णित लड़ाईयाँ, जिनका संबंध धार्मिक ग्रंथों से मिलता हैं, इसी में आत्मीय और पवित्र प्रस्तुति से जुड़ी विधाएँ, नौरता है, एक किवंदती के माध्यम से, प्राचीन काल में (सुअटा) नामक दैत्य कन्याओं को उठा ले जाता है, उससे रक्षा हेतु कन्याओं ने दुर्गा जी की आराधना की, माँ दुर्गा ने उनकी आराधना से प्रसन्न होकर उस दैत्य का वध किया, तभी से यह आराधना प्रथा में आई, तो क्वांरी लड़कियों का नव दुर्गा प्रारंभ होने से अंतिम नौ दिन तक खेला जाता है, वे घर दहलान में ''नौरता'' बनाती हैं, मिट्टी के चौरे, विभिन्न रंगों में रंगकर, हाथ पैर बनाकर दैत्याकार आकार देती है, दोनों ओर सूर्य, चन्द्र तथा नीचे दूध का कुण्ड बनाये जाते हैं, नवरात्रि प्रारंभ से लड़कियां गीत गाती हुई स्नान को जाती हैं, ''नौरता'' का स्नान करते समय बालिकाएं नाम लेकर गीत गाती हैं।

रातों कौन बेटी ने रातों उन्हाव, तो रातो अन्हैयों बेटी नौ दिन
सीता ने रातों अन्हाव तो, रातों अन्हैयों बेटी नौ दिन
दस दिन करो श्रृंगार, दसय दसरो भैया जीतियो न रे सुअटा।
पूजन के समय गाती हैं- मौरी गौरी मांगे भांग-धतूरे सो कहाँ पाऊ लाल सों
मोरे भईया, भतीजे हाट गये हैं बाट गये हैं।
कररि कुंजल, चौक बसे ले मौरी गौरा जो तुम मांगो सोंई चढ़ई हों।

इन गीतों में बेटी की बिदाई, भाई-बहिन का स्नेह, कारुणिक वात्सल्य का समावेश इतना मधुर होता है कि आंतरिक अनुभूति प्रदान करते हुए उमंग से भर देते हैं। जैसे-

हमारे पिया बदरिया हो गए,
बरसे न एकऊ बेर,
चैत बड़ौ घामौपरो रे,
छिन-छिन लगत पियास,
मन मोरौ अब जा कहै,
उड़ चलो पिया के पास,

आभूषणों के श्रृंगार के सौन्दर्य में नृत्य में जो प्रस्तुति होती है,

इंदयारी है रात, भौजी को बूंदा चमक रओ।
रात अंधेरी है, फिर भी भौजी को बूंदा चमक रओ॥

कहावतों में - ओई की रोटी ओई की दार।
ओई की टटिया लगी द्वार॥
खेती में - खेती तो करें, मेहनत करें सवाई।
राम चाहे तो मानुपको घाटा कबहू न आई॥

इन सब के माध्यम से बुन्देलखण्ड के लोक जीवन की शैली उजागर होकर सामने आती है, जिसमें समस्त जन सुख-दुख में आनंद विभोर होकर विकसित समाज जीवान्त पलों में एक सी अनुभूति प्राप्त कर जीवन यापन करते हैं।

– रमा कवि वार्ड, हटा (दमोह)

अपने शत्रु पर कभी दया नहीं दिखानी चाहिये। दया दिखाने पर उसका जो दुष्परिणाम होता है उसका उदाहरण देते हुए उन्होंने लिखा है-

अपनो मन भायो कियों, गहि गौरी सुलतान।
सत्रह बार छोड़यौ नृपति, कुमति करी चहुवान॥
कुमति करी चहुवान, ताहि निंदत सब कोऊ।
असुर बैर इकवार पकरि काढ़े दृग दोऊ॥
दोउ दीन को बैर आदि अंतहि चलि आयौ।
कहि नृप छता विचारि कियौ अपुनों मन मायौ॥

स्वारथ और परमारथ को परिभाषित करते हुए वे लिखते हैं-

निज स्वारथ सो पाप नहिं, परमारथ सो पुन्न।
दिये इकाई सुन्न ज्यों, होतु छतादस गुन्न॥

भगवान श्री राम के प्रति एक रचना अवलोकनीय है-

जयति बाल रघुनाथ औधपति अजिर बिहारी।
जयति बाल रघुलाल जानु कर पंकज चारी॥
जयति बाल रघुलाल, किलक कर चन्द बुँलावन।
जयति बाल रघुलाल, संभु उर मोद बढ़ावनं॥
जय बाल लाल दशरथ के, सब समर्थ असरन सरन।
कहँ छत्रसाल रघुलाल के, पाद पदुम तारन-तरन॥

भगवान श्री कृष्ण के प्रति एक छन्द दृष्टव्य है-

इच्छा पै अच्छरनि सखिय, बृजमाह बसाइय।
बाल-विलास दिखाय रास रस रंग रचाइय॥
अक्षर के परतक्ष धाम लीला दरसाइय।
सखियन विरह जनाय जोग माया उडसाइय॥
सुर में भ्रमाय भाल में लाल हेरि प्रेमिन पगिय।
सखियन समेत 'छत्रसाल' उर जुगल रूप जग जनिब॥

हनुमंत लाल के प्रति-

महाराज करो चिरराज 'छता' जनुपालहु मोह हरो मम माया।
प्रभु नाम प्रताप तयो सिर छत्र, रहो जन माथ सदा प्रभु छाया॥

अपनी 77 वर्ष की अवस्था में मुहम्मद खाँ बंगस जफर जंग द्वारा जैतपुर पर किये गए आक्रमण का सामना करने में अपने आपको असमर्थ पाकर उन्होंने इस नाजुक अवसर पर बाजीराव पेशवा से सहायता लेने में कोई संकोच नहीं किया। उन्होंने बाजीराव को लिखा था-

जो बीती गज राज पर, सो बीती अब आय।
बाजी जात बुन्देल की, राखो बाजी राय॥

बाजीराव पेशवा एक लक्ष घुड़सवारों की विशाल सेना लेकर सहायता हेतु आया और उसने पन्ना राज्य को बंगस के हाथों में जाने से बचा लिया। छत्रसाल ने इस उपकार के बदले में बाजी राव को अपना तीसरा पुत्र मान कर पन्ना राज्य का तीसरा भाग प्रदान कर अपने वचन का पालन किया। इस प्रकार अंत-अंत तक छत्रसाल ने अपनी राजनैतिक पटुता एवं चातुर्य द्वारा पन्ना राज्य को बंगस के हाथों में जाने से बचा लिया।

वियोगी हरि जी के शब्दों में- ''लक्ष्मी काली और सरस्वती इन तीनों महाशक्तियों की साधना, एक साथ ही यदि किसी साधक से बनी है तो वह बुन्देलखण्ड का रक्षक वीर शार्दूल छत्रसाल है।'' महाराज छत्रसाल का बुन्देलखण्ड में वही स्थान है जो महाराणा प्रताप का राजस्थान में छत्रपति शिवाजी का महाराष्ट्र में या गुरू गोविन्द सिंह का पंजाब में चारों एक ही पथ के पाथिक थे।

- अवस्थी चौराहा, किलेका मौदान
टीकमगढ़ (म.प्र.) 472001
दूरभाष- 07683-242530

फागुन तक आ जाना

डॉ. जमनाप्रसाद 'जलेश'

अर्थ बहुत रखता है महुआ का गदराना,
फागुन के आने पर गोरी का शरमाना।
बौरों की गंध उड़ी अंग-अंग महका है,
फागुनी बयारों में कौन नहीं बहका है ?
बहुत भला लगता है अंखियों का झुक जाना।
टूट-टूट जाते हैं अंगिया के बंद काज,
बौराई कोयल ने छेड़ छंद साज।
तन को भा जाता है रंगों में रंग जाना।
कंगना की खनक आज भड़काए विरह आग,
सब मिलकर खेलें रंग गाते हैं मधुर फाग।
याद बहुत आती है फागुन तक आ जाना।
अर्थ बहुत रखता है महुआ का गदराना।

- 4, सिविल वार्ड, दमोह
(म.प्र.) 470661

जल - ज्योति

– आचार्य धर्मेन्द्र भूषण तिवारी
(स्वामी अमृतानंद महिराज)

बुन्देलखण्ड का भूपट अगणित आश्चर्यों से भरा पड़ा है। जल का आश्चर्य, अग्नि का आश्चर्य, वृक्षों का आश्चर्य, रत्नों का आश्चर्य, पशुओं का आश्चर्य, पक्षियों का आश्चर्य, मानवी कला में शिल्प कला का आश्चर्य, गायन-वादन का आश्चर्य, कविता का आश्चर्य, मल्ल विद्या का आश्चर्य, नर देवत्व का आश्चर्य, ऐसे-ऐसे अनेकों आश्चर्य हैं कि एक पूरा आश्चर्य महाकाव्य लिखा जा सकता है।

मैं आज पाण्डव कालीन दो प्राकृतिक जल आश्चर्यो की आंशिक गाथा लिखने का प्रयास कर रहा हूँ।

1. पाताल कुंड भीमकुंड

महाभारत महाकाव्य के वन पर्वानुसार पाण्डव जब लाक्षागृह से निकलकर माता कुन्ती के साथ नैषिधप्रदेश में आये उस समयं विन्ध्य पर्वत का मध्यभाग अधिकांश रूप से उनका निवास स्थल रहा है। जिसके सैकड़ों प्रमाण इस क्षेत्र में पाये जाते हैं। भीम कुंड उन्हीं स्थानों में से एक हैं।

ज्येष्ठ माह के शुक्ल पक्ष दशवीं दिन सोमवार को माता कुंती को प्यास ने कुछ ज्यादा ब्याकुल बना दिया था। गर्मी का समय, प्रचण्ड सूर्य का ताप, चिंता से व्यथित ह्दय, प्रौढ़ अवस्था, शरीर भी कृश हो गया था, वे शिखिर की तलहटी में एक पत्रहीन वृक्ष की छाया में बैठ गयीं। युधिष्ठिर के पूँछने पर उन्होंने मंद स्वर से कहा कि प्यास के कारण अव चला नहीं जा रहा। अग्रज की आज्ञानुसार सभी भ्राताओं ने चारों तरफ खोज की परन्तु कहीं भी जल के दर्शन तक नहीं हुये। सभी महारथी बेवस से एक दूसरे को निहारने लगें। धर्मराज ने भीम की ओर दृष्टिपात किया। आशय समझ कर भीम ने वसुन्धरा को प्रणाम करके छितिपट पर अपने गदा का प्रहार कर दिया। वायुपुत्र का अस्त्र पृथ्वी पट को फाड़ता हुआ अनजानित गहराई तक चला गया। गदा के बाहर खींचते ही उस कुंड में जल के दर्शन होने लगे परन्तु गहरे जल तक पहुंचने का मार्ग सुलभ नहीं था। गहरे जल को देखते ही अर्जुन ने बाजू से बाण चलाकर मार्ग बना दिया फिर क्या था। सभी भ्राताओं ने नीचे उतरकर आचमन स्नान एवं निर्मल जल का श्रद्धा से पान किया। कुछ काल पश्चात जव वन में मनुष्यों का प्रवास हुआ तव से यह कुंड मानव दृष्टि में आया। कुंड की आकृति देखने से सहज अनुमान लग जाता है, कि यह निश्चित ही भीम कुंड है। ऊपर से कुंड की गोल आकृति वाजू से वाणाकृति का प्रवेश मार्ग। कुंड का नीले रंग का स्वच्छ जल अपने आप श्रद्धा उत्पन्न कर देता है। कुंड में एक साथ हजारों व्यक्तियों के साबुन लगाकर स्नान करनें एवं वस्त्र धोनें के वाद भी जल का एक अंश भी गंदा नहीं होता। जल की गहराई का कुछ पता नहीं, लगता है नीचे समुद्र भरा हो। उस समय की लोकोक्ति इस प्रकार है।

कुंड थाँह जानन को जन ने गोताखोर बुलाये।
दो हजार गज गऐ नीचे तक तऊँ थाँह न पाये॥

इस समय कुंड की ख्याती बहुत दूर तक फैली है। दर्शनार्थियों का मेला भरा सा रहता है। कुंड की परिधि में एक संस्कृत विद्यालय भी है। रुकने की सुंदर व्यवस्था हैं। यह कुंड जिला छतरपुर के थाना ग्राम बाजना से तहसील विजावर रोड पर बाजना से तीन किलोमीटर की दूरी पर स्थित है।

2. जटाशंकर

पाँचों पांडव भीमकुंड से विन्ध्य श्रेणी की तलहटी में ईशान कोंण की ओर आगे चले। वहाँ से करीब पचास किलोमीटर की दूरी पर पांडवों को पर्वत की कंदरा में एक सिद्ध पुरूप के दर्शन हुऐ। माता के सहित पाण्डवों ने पद प्रणाम करके सिद्ध पुरूप की पूजा अर्चना की। उस स्थान पर पाँच दिन विश्राम करके सभी ने शिवार्चन किया वहीं पर एक चट्टान के नीचे पाषाण शिवलिंग की प्रतिष्ठा कर दी। चट्टान के ऊपर एक पीपल का वृक्ष था। पीपल की जड़ों से निर्मल जल की धार वह रही थी। उसी जल से सदाशिव का अभिषेक होने लगा। उसी समय एक भील शिकारी आया जिसके सम्पूर्ण शरीर में सफेद दाग वाला कुष्ठ रोग उसी समय समाप्त हो गया। भील ने श्रद्धानुसार सभी को प्रणाम किया और अपने श्रम से चट्टान के नीचे छोटा सा शिवालय बना दिया। कुछ काल पश्चात यह स्थान लोगों की दृष्टि में आया और श्रद्धालुओं, दुखियों का तांता

लगने लगा। आज यह स्थान विश्व प्रसिद्ध हो चुका है। जटाशंकर धाम से विख्यात यह स्थान विन्ध्य पर्वत की मनोरम कंदरा में शोभायमान है। शिवलिंग के ऊपर पर्वतका झरना सदा बहता रहता है। शिवलिंग मंदिर का विकास भी हो गया है। शिव अभिषेक का जल मंदिर के नीचे एक कुंड में भरा रहता है। लाखों लोग निरंतर स्नान करने आते रहते हैं। सदाशिव की महती कृपा से सफेद दाग वाले अनेकों व्यक्ति रोग से सदा के लिये छुटकारा पा चुके है। शिवमंदिर के ठीक बाजू में छोटे-छोटे तीन कुंड है। जिनमें सदा गर्म जल भरा रहता है। आश्चर्य तो इस बात का है कि उन कुंडों का जल निकाल निकाल का हजारों व्यक्ति स्नान करते रहते है। परन्तु उन कुंडों का जल एक इंच भी खाली नहीं होता। जबकि वे तीनों कुंड ढाई फीट से ज्यादा लंबे चौड़े गहरे नहीं हैं। अब तो जटाशंकर धाम काफी विकास की ओर अग्रसर है कुंड से ऊपर समतल पर पहुंचने के लिये सीढ़ियाँ बनी है, नीचे आने के लिये भी सीढ़ी मार्ग है। ऊपर-नीचे मध्य में अनेकों धर्मशालायें है। सैकड़ों दुकाने है, नीचे बस स्टैण्ड है ऊपर से नीचे आने के लिये सड़क मार्ग है। अब तो यह स्थान चारों तरफ से बस मार्ग से जुड़ चुका है। कुंड के ऊपर एक अति प्राचीन आम का वृक्ष है जिसकी छाया में पहुंचते ही भूत प्रेत से ग्रसित व्यक्ति अपने आप ठीक हो जाता है। वहीं पर संतानदाता वट वृक्ष है जिसके नीचे मनोती माँगने से निसंतान व्यक्ति को शिव कृपा से संतान सुख प्राप्त होता है। शिव कृपा से जटाशंकर धाम में व्यक्ति की सभी प्रकार की मनोकामनाओं की पूर्ति होती है।

जटाशंकर धाम की जय॥

नोट - जटाशंकर धाम जिला - छतरपुर, तहसील - बिजावर, थाना- शाहगढ़, ग्राम पंचायत - बड़ागांव के अंतर्गत आता है।

- नल-नगर, रनेह (हटा) दमोह, म.प्र.
मो. 9981448234

मत कसो ....

कामता सागर

मत कसो प्राण की वीन इतनी प्रिये।
स्वर बिखर जायेंगे गीत झर जायेंगे॥

टूट जायेंगे मन मूर्च्छना के मधुर।
ये आंसू अलापों से भर जायेंगे॥

पीर कितनी भरोगे हृदय सीप में।
मान का एक मोती तो तुम्हें दे चुका॥

नेह की नींद से भर रहे ये नयन।
जागरण का जगत तो विदा ले चुका॥

प्यार के पाँव चलते हुए थक गये।
वेदना के विहग बोलते हुए उड़ गये॥

कामना की कली जब खिली फूटकर।
भावना के भ्रमर भांवरें दे चुके॥

प्राण के पुष्प हैं कल्पना की कली।
इन्हें पुण्य का पानी चाहिए॥

रूप सी चांदनी धूप सी धारणा।
एक अनकही सी कहानी चाहिए॥

आदि आनंद के अच्छरों से लिखो।
अन्यथा अंत के तन सिहर जायेंगे॥

कामना की कपोती उड़ी पंख भर।
किन्तु शून्य में क्या क़िसी को ठिकाना मिला॥

द्वार पर मैंने पुकारा बहुत राधिके।
किन्तु जाना हुआ भी अजाना हुआ॥

भूल पाये न पद पंथ पहिचान के।
प्यार का वह पनघट मगर खो गया॥

जन्म से भी मिला मृत्यु से भी मिला।
एक आना मिला एक जाना मिला॥

पर तुमसे मिला न विष भरा बोल भी।
तो (सागर) के गिरधर कहाँ जाएंगे॥

- बाई का बगीचा, जबलपुर

अद्भुद मूर्ती - एक बीरा कंकाली।

[पुरातत्व वेत्ताओं के अन्वेषण योग्य]

-पं. उमेश कुमार चौबे

ऐक बीरा कंकाली की अद्भुत मूर्ती - नगर, ग्राम - रनेह के अंचल ग्राम हिनौती में उपेक्षित अवस्था में पड़ी है। इस मूर्ति को हिनौती ग्राम के मालगुजार बृजबल्लभ चौबे मथुरा से अपने साथ लाये थे, यह मूर्ति गुप्त कालीन है यद्यपि यह मूर्ति खण्डित अवस्था में है, परंतु शक्ति के चमत्कार अभी भी संपूर्ण अंचल में आस्था के केन्द्र हैं।

प्रतिमा कठोर लाल पाषाण से निर्मित करीब तीन फीट ऊंची है, सिर पर नाग फणों की छाया, पीछे बंधा हुआ केशों का गोल जूटा, सिर युद्ध टोप से सुरक्षित, एक कान से दूसरे कान तक कपोल, ठोड़ी को घेरती हुई बंधी दोनेदार कुलिस की दुपट्टी लड़ी, कुछ ऊर्ध्व खुला मुँख, स्पष्ट दंत पक्ति, लम्बी नासिका, विशाल उन्नत लालट, भाल पर तीसरा नेत्र, लम्बी भौहें, खुले हुये विशाल नेत्र, बायीं ओर के उठे हुये प्रथम हाथ में पकड़े हुये खाली कुछ उल्टा मधु पात्र, मुँख से तीन इंच की दूरी पर खाली पात्र पर अपलक दृष्टि, ऊपर अधर पर खिंची हुई तरूण मूछ, वीर रस से परिपूर्ण अट्टहासी मुद्रा, गले में कंठमाल एवं कुछ झूलता हुआ चंद्रहार, हदय के ऊपर दोनों पयधरों के मध्य तक सटा हुआ मणिहार, चोली से ढके ऊभरे हुये पुष्ट उरोज, भुजाओं पर बाजू बंद, दायी ओर की प्रथम भुजा खंडित उसमें खड्ग ही होनी चाहिए, कमर के पास मुड़ा हुआ दायीं तरफ का दूजा हाथ, कलाई में रूद्राक्ष की माला, कटार की नोंक नीचे की ओर, हाथ से कसकर पकड़े हुये कटार की मूठ, बायीं ओर के दूसरे हाथ से केश पकड़े लटकाये हुये दानव का सिर, दानव सिर बायें पांव के घुटने पर रखा हुआ, बायीं ओर की दोनों भुजाओं के नीचे से दायें पांव के तलवे तक लटकी हुई नर मुंडों की माला, दोनों जाघों पर कसा हुआ कुलिश कड़ियों का कवच, कमर में करधनी, गुत्ताङ्ग के शिश्न एवं दोनों अंडकोष स्पष्ट दृष्टि गोचर, दोनों पैर खंडित, अर्द्ध उठी हुई आवेशित मुद्रा, इस प्रतिमा की विलक्षणता सच-मुच अद्वितीय है।

पौराणिक कथा अनुसार यह दृश्य उस समय का है जब कंकाली ने रक्त बीज के शोणित का पान किया तब उन्हें यह भान हुआ कि मैं ब्रह्म भी हूँ और शक्ति भी। तो उनका वेष तो कंकाली का रहा परंतु शरीर पुरुष का हो गया ऐसी यह एक वीरा प्रतिमा अपने आप में अति अद्वितीय है शायद कहीं हो। सरकार को चाहिए कि ऐसी दुर्लभ प्रतिमा की उसी स्थान पर सुरक्षा व्यवस्था की जाये ताकि जनमानस की श्रद्धा यथावत बनी रहें और दुर्लभ प्रतिमा सुरक्षित भी रहे ऐसी अपेक्षा के साथ।

-नल-नगर, रनेह (हटा) दमोह म.प्र.
मो. 998161154

'बुन्देलखण्ड के लोक पर केन्द्रित पत्रिकायें'

- अमितकाम दुबे

बुन्देलखण्ड में साहित्यिक पत्रिकाओं का इतिहास टीकमगढ़ से प्रकाशित होने वाली पत्रिका 'मधुकर' से प्रारंभ होता है। इस पत्रिका के सम्पादक प्रख्यात लेखक श्री बनारसी दास चतुर्वेदी थे। बनारसी दास चतुर्वेदी टीकमगढ़ नरेश के आमंत्रण पर वहां पहुंचे थे। उन दिनों बनारसी दास चतुर्वेदी अधिकांशत: कुण्डेश्वर में निवास करते थे। 'मधुकर' पत्रिका में बुन्देलखण्ड से सम्बंधित लेखों और कविताओं का प्रकाशन होता था। बुन्देली बोली में ही लोक कथाएँ इस पत्रिका में प्रकाशित की जाती थी। मधुकर पत्रिका का पृथक बुन्देलखण्ड राज्य की प्रस्तावना वाला एक विशेषांक प्रकाशित हुआ था। जिसमें बुन्देलखण्ड का विस्तृत विवरण छापा गया था। मधुकर ने बुन्देलखण्डी बोली को व्यापक विस्तार दिया। डॉ. हरिसिंह गौर केन्द्रीय विश्वविद्यालय सागर के हिन्दी विभाग से संलग्न बुन्देली पीठ ने भी 'ईसुरी' नाम की एक पत्रिका का प्रकाशन किया था। यह पत्रिका आज भी प्रकाशित हो रही है। इस पत्रिका में बुन्देलखण्ड की शोधपरक सामग्री का प्रकाशन होता है। डॉ. कांतिकुमार जैन के संपादकत्व में यह पत्रिका खूब फली-फूली तथा चर्चित हुई। बुन्देलखंड क्षेत्र के अज्ञातनाम रचनाकारों के विषय में इस पत्रिका ने पर्याप्त सामग्री प्रकाशित की। बुंदेली शब्द कोष का धारावाहिक प्रकाशन भी इस पत्रिका ने किया। आज भी यह पत्रिका बुंदेलखंड के लिये संदर्भवान बनी हुई हैं। छतरपुर की बुन्देखण्ड ऐकेडमी से प्रकाशित होने वाली 'मामुलिया' पत्रिका भी विशेष स्मरणीय है। इसके सम्पादक लोक साहित्य मर्मज्ञ डॉ. नर्मदा प्रसाद गुप्त थे। गुप्त जी ने इस पत्रिका को एकेडमी स्तर पर प्रतिष्ठित किया। पूरी तरह से बुन्देलखण्ड की सांस्कृतिक वैभव को समर्पित इस पत्रिका ने बुन्देली राग रागिनियों, बुन्देली प्रबंध काव्यों, बुन्देली आख्यानक काव्यों आदि का शोध परक विश्लेषण प्रस्तुत किया। डॉ. नर्मदा प्रसाद गुप्त बुन्देली संस्कृति के गहन अध्येयता थे। इसलिए इनके व्यक्तित्व की छाप इस पत्रिका पर थी। इस पत्रिका ने बुन्देली लोक जीवन के व्यापक विमर्श की भूमिका निर्मित की।

इधर अनेक स्थानों पर बुन्देली उत्सव मनाने की परम्परा प्रारंभ हुई। इन उत्सवों ने बुन्देली लोक संस्कृति को पुन: पहचान दी है। इन उत्सवों और आयोजनों के माध्यम से इनकी स्मारिकाओं के रूप में कुछ वार्षिक पत्रिकाओं का प्रकाशन भी प्रारंभ हुआ। 'बसारी' छतरपुर में आयोजित होने वाले बुन्देली उत्सव की मुख पत्रिका के रूप में 'बुन्देली वसंत' पत्रिका का प्रकाशन होता है।

इस पत्रिका के सम्पादक डॉ. बहादुर सिंह परमार है। बुन्देली बसंत में गीत, कविता, लघुकथाएँ, शोध परक आलेख, संस्मरण, कहानियाँ आदि प्रकाशित होती है। ये सब बुन्देली परिवेश से सम्बंधित रचनाओं के रूप में प्रस्तुत होती है। बुन्देली बसंत के माध्यम से बुन्देलखण्ड का स्थापत्य बुंदेलखण्ड का इतिहास, बुंदेलखण्ड के धार्मिक ग्रंथ, बुंदेली बोली के स्वरूप आदि पर अच्छी सामग्री प्रकाशित हुई है। इस पत्रिका ने अपना लेखक समुदाय भी बनाया है। इसी क्रम में हटा, दमोह में आयोजित होने वाले बुंदेली महोत्सव की स्मारिका के रूप में 'बुंदेली दरसन' का प्रारंभ हुआ। इसके संपादक डॉ. मन मोहन पाण्डे हैं। फिलहाल इसके दो अंक प्रकाशित हुए है। दोनों अंकों में बुंदेलखण्ड से सम्बंधित सामग्री का प्रकाशन किया गया है। इस पत्रिका के माध्यम से इस क्षेत्र की सांस्कृतिक और साहित्यिक चेतना को प्रस्तुत किया जा रहा है। पत्रिका के सुधी सम्पादक इस पत्रिका को विवरणात्मकता से बचा रहे है। वे उसे शोध की दृष्टि से मूल्यवान बना रहे हैं। पत्रिका निसंदेह अपनी पहचान बनायेगी।

इसी तारतम्य में इस वर्ष से दमोह नगर में भी दमंयती बुंदेली महोत्सव मनाया गया है। इस महोत्सव की मुख्य पत्रिका के रूप में 'बुंदेली अर्चन' का प्रारंभ हुआ है। इस पत्रिका के सम्पादक मंडल में दमोह नगर के प्रबुद्ध रचनाकार जुड़े हुए है। संपादक के रूप में श्री नारायण सिंह ठाकुर तथा अतिथि सम्पादक के रूप में डॉ. श्यामसुंदर दुबे इस पत्रिका के साथ हैं। 'बुंदेली अर्चन' का उद्देश्य है कि बुंदेलखण्ड की लोक संस्कृति और लोक साहित्य की उसकी विभिन्न विशेषताओं के परिप्रेक्षय में प्रस्तुत किया जावे। जिसमें बुंदेलखण्ड के अछूते पहलू पर रचनायें प्रकाशित है। यह पत्रिका भविष्य में महत्वपूर्ण भूमिका निभायेगी।

ग्वालियर से भी 'आखर माटी' पत्रिका प्रकाशित हुई हैं। जिसमें बुंदेलखण्ड के परिवेश की सुचिंतित पड़ताल की गई है। इन सभी पत्रिकाओं के माध्यम से बुंदेलखण्ड की सही पहचान बन रही है। बुन्देलखण्ड की अस्मिता और उसके आंतरिक परिवर्तनों को चिन्हित करने वाली ये पत्रिकाएँ नि:संदेह रूप से इतिहास की रचना कर रहीं हैं। आवश्यकता है कि इन पत्रिकाओं में प्रकाशित अच्छे लेखों को कभी पुस्तकाकार रूप में प्रकाशित किया जावे। लोकवार्ता, चौमासा, जैसी लोक पत्रिकाओं में भी बुंदेली साहित्य का प्रकाशन होता रहा है। इन पत्रिकाओं के माध्यम से बुंदेली लोक जीवन अखिल भारतीय स्तर पर अपनी पहचान कायम कर रहा है।

- चंडी जी वार्ड, हटा

सत्यव्रता - नर्तकी

[रायप्रवीण जन्म वि.सं.- 1642, स्वर्गवास वि.सं. 1701]

– पं. ज्ञानी महिराज

विक्रम संवत् 1657 में राम नवमी के दिन ओरछा नगर के विश्व प्रसिद्ध राम राजा मंदिर में श्री राम जन्मोत्सव धूमधाम से मनाया जा रहा था। पूरे नगर में अपार हर्षोल्लास था। सभी बाल वृद्ध तरूण नर-नारी राम राजा के दर्शन हेतु दौड़े चले आ रहे थे। मंदिर प्रांगण जन समूह से ठसा ठस भरा था। मंदिर के प्रमुख द्वारा के कपाट बंद थे। राम राजा के जयकारों से आकाश गूंज रहा था। ठीक दिन के बारह बजे घंटी की ध्वनि के साथ पुजारी द्वारा मंदिर के कपाट खोल दिये गये। अपार जन समूह करतल ध्वनि के साथ एड़ियाँ उठा कर प्रभु के दर्शन करने लगा। आरती के बाद सभी ने पुजारी जी के साथ स्वर मिलाकर 'भए प्रगट कृपाला' छंद स्तुति का गायन किया। थोड़ी देर बाद दर्शनार्थी प्रसाद लेकर अपने अपने ठिकानों की ओर लौट गये। कोलाहल समाप्त होने के पश्चात मंदिर प्रांगण में एकत्र हुये गायक, वादक फर्श पर अपने अपने वाद्य यंत्र लेकर बैठ गये। पंडित विरागी महाराज ने सारंगी एवं उस्ताद अब्दुल मियॉं ने तबला संभाल लिया। विजना वाले महाराज अनिरूद्ध सिंह जू ने मृदंग कस कर, स्वर मिलाया। राज्य के सेनापति आचार्य महाकवि केशव अपने हाथ में स्वरचित रामचंद्रिका पुस्तक लेकर कम्बलासन पर विराजमान हो गये। स्तुति के रूप में पंडित बिरागी महाराज ने ध्रुपद का गायन किया। राग के प्रभाव से सभी दर्शक झूमने लगे। आचार्य ने देखा कि वनवासी राम मंदिर के पास एक नव यौवना बैठी बैठी ताल लय के साथ झूम रही है। पारखी आचार्य की नजरों ने अविकसित अनमोल हीरा की कनी को पहिचान लिया। राग समापन के बाद वे उठकर चन्द्रवदनी कुमार्या के पास आकर धीरे से बोले कि देवी कहां से पधारी हो ? सुन्दरी सुकन्या ने सहम कर कहा कि पायँ लागू महाराज मैं बेबस असहाया ग्वालियर की हूँ। आचार्य ने पूछा कि, तुम्हारा नाम क्या है ? तुम्हारे माता-पिता कहां है ? तुम्हारी जाति क्या है ? यहां अकेली कैसी बैठी हो ? किशोरी ने कहा, महाराज मेरा नाम प्रवीण है। मेरी माँ बचपन में मुझे अकेला छोड़कर स्वर्ग सिधार गयी। अभी तीन माह पहिले मेरे पिता का स्वर्गवास हो गया। मैं अपने माता-पिता की अकेली संतान थी। मेरा घर द्वार भी नहीं हैं। मैंने तानसेन महाराज के यहां 6 माह नृत्य का अभ्यास किया है। इस समय वे भी बादशाह अकबर के दरबार में चले गए। अब मैं केवल इन्हीं राम राजा के सहारे हूँ। किशोरी का दुख सुनकर आचार्य का हदय द्रवित हो गया। वे बोले कि प्रवीण क्या तुम नृत्य कला में कुछ प्रवीणता दिखाना चाहती हो। प्रवीण ने कहा, हां महाराज।

फिर तत्काल प्रवीण ने अपनी पोटली से घुंघरू निकालकर पांव में बांधे और बिना श्रंगार किये ही संगीत सभा में उपस्थित होकर प्रथम प्रभु श्री राम राजा को और बाद में सभी सभासदों को प्रणाम किया। उल्लसित आचार्य बोल उठे बिरागी महाराज, तानसेन की शिष्या है, संभलकर संगति करना।

मुस्कराकर बिरागी महाराज ने, राग बागेश्वरी में "ठुमक चलत रामचंद्र बाजत पैजनियाँ" पद का गायन प्रारंभ किया। जैसे ही उस्ताद ने तबला पर धाप मारी वैसे ही प्रवीण ने घुंघरू का स्वर मिला दिया। फिर क्या था, सभी उस्ताद अपना-अपना जौहर दिखाने लगे, परन्तु प्रवीण की प्रवीणता के सामने सभी नतमस्तक हो गये। सभी के मुख से एक साथ निकला धन्य हैं ! धन्य हैं! संगीत सभा का शाम को समापन हुआ। मानसिक विजय प्रवीण की झोली में आई, क्योंकि प्रवीण ने आचार्य के हदय पर भी विजय पा ली थी। आचार्य ने रामराजा के चरणों में देखकर हदय की वेदना प्रकट की, कि काश मैं प्रवीण से तीस वर्ष बड़ा न होता।

उस रात्रि प्रवीण आचार्य के भवन में मेहमान के रूप में रही। दूसरे दिन यह चर्चा फैलते-फैलते उस समय ओरछा राज्य के कार्यवाहक महाराज इंद्रजीत के कानों तक पहुंची। महाराज इन्द्रजीत ने तुरंत प्रवीण को राजमहल बुलवा लिया। उस रात्रि राजमहल में संगीत सभा का आयोजन हुआ। उस सभा में प्रवीण का मुकाबला राज्य नर्तकी विचित्र नयना एवं तानतरंग से था। दो पदों में ही दोनों नर्तकी प्रवीण के सामने नतमस्तक हो गयीं। प्रवीण जैसी रूपवान, अनुपम सुंदरी थी वैसी ही नृत्य, गायन एवं कविता में अति सूक्ष्म कुशल थी। महाराजा इन्द्रजीत प्रवीण पर हृदय से मुग्ध हो गये और फिर उन्होंने प्रवीण को "राय प्रवीण" नाम देकर प्रेयसी के रूप में अपने महल में स्थान दे दिया।

राय प्रवीण ने भी महाराजा इन्द्रजीत को प्रेमी पति के

रूप में स्वीकार कर लिया और महाराज को छोड़कर अन्य के समक्ष नृत्य न करने का संकल्प ले लिया।

राय प्रवीण ने कविता लिखकर ऐसा पत्र महाराजा इन्द्रजीत को दिया।

अब तक रही समान नर्तकी नाची खायी खेली।
राखन निज पत हेतु जगत में अगणित आफत झेली॥
अब तो नांचू सिया पिया ढिग या पद आपु नचै हों।
रायप्रवीण प्रतिज्ञा पति पद काहुहि मुख न दिखै हों॥

रायप्रवीण के रूप, सौन्दर्य, नृत्य गायन की प्रवीणता की चर्चा बादशाह अकबर के कानों तक पहुंची। महान, कहलाने वाले अकबर का मन भी रायप्रवीण की सुंदरता पर डोल गया। वि.सं. 1659 में अकबर ने रायप्रवीण को आगरा में उपस्थित होने का आदेश ओरछा भिजवा दिया। संदेश सुनकर इन्द्रजीत अकबर से युद्ध करने तैयार हो गये और रायप्रवीण को आगरा जाने को मना कर दिया। परन्तु रायप्रवीण के यह समझाने पर कि पतिवृता स्त्री का धर्म डिगाने का सामर्थ्य आज तक किसी में नहीं रहा। व्यर्थ के खून खराबे से अच्छा है, कि मैं खुद जाकर बादशाह को समझाआऊं। इन्द्रजीत की आज्ञानुसार आचार्य केशव के सानिध्य में रायप्रवीण आगरा के राजदबार में बादशाह अकबर के समक्ष उपस्थित हुई। सभा के मध्य रायप्रवीण डोली से नहीं निकली और वहीं से उसने बादशाह से बातचीत करने की आज्ञा मांगी, आज्ञा मिलने पर, रायप्रवीण ने कविता में कहा कि-

विनती रायप्रवीण की सुनिये शाह सुजान।
जूंठी पातर भखत है, वायस बारी श्वान॥
तीनों में से आपु जो हो कहने तैयार।
तौ फिर इस सतवृता को नहिं है कछु इंकार॥

इन वाक्यों को सुनकर बादशाह अकबर का सिर नीचे हो गया और शाह ने यह कहकर बिदा कर दिया।

भारत भू की नारियाँ सकल विश्व विख्यात।
तुम सी नारी का सुयश शशि रवि नजर दिखात॥
मेरी माता सम हुई हृदय बसी तस्वीर।
बख्शी मैंने आज से मोधा की जागीर॥

रायप्रवीण आगरा से ससम्मान ओरछा लौट आई। महाराजा इन्द्रजीत ने किला महल ओरछा के बाजू से रायप्रवीण महल बनवाया। वि.सा. 1701 में रायप्रवीण का देहान्त हो गया। महाराजा इन्द्रजीत ने वि.स. 1705 में वहां मकबरा बनवाया और उसी के पास अपने मकबरें का निर्माण करवाया। धन्य है! ऐसी है बुंदेलखण्ड की सतपंथी नारियाँ।

– नल नगर, ब्रह्म कुंज, रनेह (हटा), दमोह
मो. 9893902928

उमर की गागर रीत गई

–कामता सागर

नैनो के सागर सूख गये,
उमर की गागर रीत गई।
गगन में हंसत तो जो चंदा,
मिलन की बेरा बीत गई।
लजीले पेलां बेला बोल,
रये नसनस में अमृत घोल।
सूरज छुअत कलिन के प्रान,
देखतई डारी टूट गई।
अधर पे रये अधूरे गीत,
ने छिड़ पाओ जीवन संगीत।
लयी थी अभी-अभी पतवार,
तीर पे तरनी छूट गई।

द्वारे के खुले ने बंदनबार,
बीन के भयेते झंकृत तार।
जे को हो न सको अभिषेक,
पाराजै बैरन जीत गयी।
पंथ पे अबई धरेते पांव,
दूर थो मन भावना को गाँव।
मचलत रये मिलवे खों प्रान,
प्रीत की गंगा रीत गई।
नैनों के सागर सूख गये,
उमर की गागर रीत गई॥

– बाई का बगीचा
जबलपुर

बुंदेली शब्दों का लालित्य और व्यावहारिकता

– डॉ. रमेशचन्द्र खरे

विन्ध्या की घाटी और बुंदेली माटी की सोंधी गंध में रची-बसी उसकी आंचलिक बुंदेली ललित भाषा का लालित्य, किसी ग्राम्या के अकृत्रिम लावण्य से कम नहीं। उसकी लुनाई की समता, नगरीय संस्कृति की औपचारिकता में आवृत्त नागरी हिन्दी नहीं कर सकती। हम उसे आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी व्याकरणिक खड़ी बोली हिन्दी के बौद्धिक स्तर से न मापें। यह तो हृदय से हृदय का संवेदनशील, रससात्मक सहज संवाद है। जैसे अवधी, बृज, राजस्थानी या मध्यप्रदेश की छत्तीसगढ़ी, बघेलखंडी, मालवी में आंचलिकता है, वैसे ही माँ के आंचल में दुलार पाती बुंदेली है जिसे कई स्वनामधन्य कवियों ने अपने श्रम् से सँवारा है। मुंशी अजमेरी जी के शब्दों में-

'तुलसी, केशव लाल, बिहारी, श्रीपति, गिरधर,
रसनिधि, रायप्रवीण, पजन, ठाकुर, पद्माकर'
कविता मंदिर कलश, सुकवि कितने उपजाये,
कौन गिनावे नाम, जाँय किसके गुण गाये,
यह कमनीय काव्य कला की जन्मभूमि है।
सदा सरस बुंदेलखण्ड साहित्य भूमि है।'

डॉ. ग्रियसेन के बुंदेलखंडी भाषायी सर्वेक्षण और लोक साहित्य में, बुंदेलखण्ड की सीमा स्वरूप, महाराज छत्रसाल बुंदेला की साम्राज्य सीमा ही मान्य है-

'इत यमुना उत नर्मदा, इत चंबल उत टोंस
छत्रसाल से लड़ने की, रही न काहू होंस।'

ऐसे प्रदेश की सभ्यता और संस्कृति उसकी अपनी भाषा में अक्षुण्ण है। उ.प्र. के बुंदेली के वीरत्व से ऊर्जास्वित झाँसी संभाग के अलावा म.प्र. के सागर संभाग में सागर और दमोह तो सीधे ब्रिटिश साम्राज्य के भाषायी स्तर से प्रभावित हुए पर छतरपुर, टीकमगढ़ और पन्ना जिले रेल सुविधाओं से कटे हुए, अपने रियासती परिवेश में स्वतंत्रता पूर्व तक बुंदेली को अपने मूल रूप में संजोये रखे। बुंदेली साहित्य, मुख्यत: शौर्य प्रधान है। उसमें ओजगुण टपकता है। पर जहाँ श्रृंगार और भक्ति का प्रसंग आता है, अनवरत माधुर्य और प्रसाद गुणों की झलक है। उसके देशज शब्दों के लालित्य के बारे में डॉ. बलभद्र तिवारी का कथन है- 'लालित्य के प्रति सहज रूचि और भाव प्रवणता का अतिशय उद्रेक, साहित्य के प्रत्येक काल में दृष्टिगत होता है। कथा काव्य काल की कृतियों में उस लालित्य और भाव प्रवणता का सहज स्वरूप मुखर हुआ है, पर रीति-भक्ति काल के समस्त ग्रंथों में इसकी विशिष्टता और सघनता का आभास केशव की रामचन्द्रिका के प्रसंगों में मिलता है। 'कविप्रिया' और 'रसिक प्रिया' में इसके सुंदर उदाहरण हैं। सांस्कृतिक उन्मेष काल में छत्रविलास, कामरूपा कथा महाकाव्य महिमा समुद्र, स्नेह सागर, विरह विलास, विरह वारीश में तथा श्रृंगार काव्य काल में रसायन, गंगा लहरी जगद विनोद में विकसित होता गया। यह बुन्देली समाज की अपनी कलाप्रियता और सौंदर्यप्रियता को अभिव्यक्त करती है। बुन्देली संस्कृति में लालित्य, ओज और कल्पना का सहज समावेश मिलता है।'

(लेख- 'बुंदेली समाज और संस्कृति: एक विहंगम दृष्टि' 'ईसुरी अंक 4 '86-87) खंड-3, इतिहास और संस्कृति पृ-3

बुंदेली का पूर्व रूप 'भाषा' माना जाता है। जिसे संस्कृत के बाद 'देसिल बअना' के रूप में 17वीं सदी तक इसी संज्ञा से अपनाया गया। यही बुंदेली की जनक है। रीति-भक्ति काल में केशव ने इसमें प्रचलित अरबी, फारसी, उर्दू का भी नगण्य सामंजस्य बिठाया। बुंदेली के कई शब्दों के तो संस्कृत में भी मूल नहीं मिलते। इनकी व्युत्पत्ति अतीत के अंतराल में खो गई है। इनके लिए तत्कालीन ऐतिहासिक संदर्भों में जाना होगा। जैसे बंदरों को भगाने का एक शब्द है 'हुड़जा', जो तत्कालीन हूण राजा तोरमाण की बंदरों जैसी क्रियाओं से सम्बंध रखता है। यह 'हुड़जा' हूण का अपभ्रंश है। यही बुन्देली संस्कृति के लोक पक्ष की खोज है। कथित बुंदेली बोली कही जाने वाली पश्चिमी हिन्दी के प्रचुर साहित्य ने उसे भाषायी लालित्य तक पहुंचाया। बुंदेलखण्ड में आल्हा के जनकवि जगनिक लोकनायक हरदौल और लोककवि ईसुरी की गाथा जन जन में चर्चित है। बुन्देली जन-जीवन मृदंग की थापों और ईसुरी की फागों से जब तब गूंज उठता है। उनकी नाजुक ख्याली, बिहारी या किसी उर्दू शायर से कम नहीं जिसमें निश्छल श्रृंगारिक भाव-ऊष्मा है। इसी भाषा का लालित्य ईसुरी की फागों में अमूल्य धरोहर के रूप में संचित है। श्रृंगार

प्रेम, करूणा, सहानुभूति, कसक जैसी मार्मिक अनुभूतियाँ यहां हृदय को गुदगुदाते हुए दिल को छूती हैं। एक रूप दृश्य देखिये अविस्मरणीय-

'हम खों बिसरत नई बिसारी/हेरन हँसी तुम्हारी
जुबन विशाल, चाल महतारी/पतली कमर इकारी
भौंह कमान बान से तानें/नजर तिरीछी मारी
ईसुर कत हमाई कोदउ/तनक हेर लो प्यारी।'

इस स्थूल श्रृंगार में भी भाषा की बुंदेली कहन निराली है। 'हम खों'-हमारे लिए, 'बिसरत नई बिसारी'-भुलाये नहीं भूलती, 'हेरन'- दृष्टि, 'महतारी'-मतवाली, 'इकारी'- इकहरी, दुबली, 'कत'-कहने, कोदउ- की तरह, 'हेरे लो'-देख लो, शब्दों का बुंदेली लहजा ही उनका लालित्य है। बुंदेली में बहुधा शब्दों का बहुवचन बनाते समय, 'न' प्रत्यय का प्रयोग होता है- लड़कन बिटियन, भैयन, बहिनन, गाँवन, नगरन, स्कूलन, किताबन, कापियन, धुतियन, पोलकन, नदियन, पहारन हजारों शब्द हैं जो 'न' के नाद सौंदर्य से पंचम वर्ग के अंत्यानुप्रास की अलंकारिक छटा बिखेरते हैं। यहां तक अंग्रेजी शब्दों में भी यह 'न' बेहिचक जुड़ता है- एक मित्र ने बताया- उसने 'केसटन' की दुकान खोली है। मैंने नासमझ जिज्ञासा दर्शाई- 'क्या मतलब?' वे बोले- 'इतना नहीं समझते। गार्नों के 'केसिट्स'-केसटन।' पंत की कोमलकांत पदावली की तरह बुंदेली की कामिनी सी कमनीयता सायास नहीं, नैसर्गिक अनायास है जो कवियों ही नहीं आम आदमी की भाषा में बसी है। बिहारी की नायिका सी उनकी लचक मनमोहक है। दो बधिर ग्रामीण वृद्धाओं की बातचीत सुनिये-

'काव्य, बड़ी बऊ! किते अ जा रई!, बजारे अ जा रई?
'ऊं हूँ, बिना! बजारे अ जा रये।'
'नोंनी कई। मैं समझी, बजारे अ जा रई।'

इस सहज सुनी-अनसुनी वानी में भी कहीं बुंदेली लालित्य है।

फगुनाहट में 'फाग' ही नहीं, लोकगीत 'राई' के बोलों के मिश्री घोलों में भी बुलंद बुंदेली के श्रृंगार की वही मनुहार है। मेला जाते हुए प्रियतम से-

'ढीले गाढ़े न होंय, ढीले गाढ़े न होंय।
पोलका उमाने के लाइयो।'

इस 'उमाने' में बुंदेली शब्द चयन, मांसल सौंदर्य की आँखों की आँखों में उपयुक्त माप जोख की रसग्रंथि है-

'शब्द ही रस ग्रंथि है, शब्द ही विष बेल
शब्द की लालित्य लीला, मेल ही का खेल।'

संयोग श्रृंगार ही नहीं, विप्रलंभ में भी बुंदेली 'फाग' की कसकती मार्मिक पीड़ा अभिव्यक्त है-

'अब रितु आई बसंत, पान, फूल, फल डारन
बागन, बनन, बंगलन, केलिन, बीथी नगर बजारन
हारन, हद पहारन, पारन, धवल धाम जल धारन
तपसी कुटी कंदरन माही, गई बैराग बिगारन
ईसुरी अंत कंत हैं जिनके तिन्हें देतु दुख दारुन।'

बुन्देली के संस्कार गीतों में- जन्मोत्सव के 'बधाई गीत', विवाहोत्सव के 'गारी गीत,' वर्षा ऋतु के कजरी और मल्हार, त्यौहार गीतों में फाग और दिवारी मेलों में बुंबुलियों या 'भोला गीतों' में कांवरियों के स्वर- 'नरबदा मैया हो! ऽऽ' बड़े सुहावने लगते हैं। इनके शब्दों की अपनी अलग देशज छटा है खेतों और खानों की खनक है, नगाड़ों की गमक है, ठेठ बुंदेली का ठाठ है, रस की गांठ है जिसे जरा सा दबाते ही मिठास चूं पड़ती है। ऐसा शब्द लालित्य और कहाँ ? तुलसी कवितावली में राम के वन गमन में चित्रकूट पदार्पण से ही बुंदेली जन जीवन और भाषा का जनाग्रह दृष्टि गोचर होने लगता है- 'गिराग्राम सिय रामजस, गावहिं सुनहिं सुजान।' राजमहल से निकलते ही 'धरि धीर दये मग में पग द्वै' के साथ से सीता पूंछती है 'चलनों अब केतिक' और माथे पर हीर कणी सी पसीने की बूंदे छलकला आई। इनकी सुकुमारता का वर्णन करने में अवधी-बुंदेली की जुगलबंदी यहां बेमिसाल है। उसी परंपरा को पद्माकर और इसुरी ने आगे बढ़ाया है। डॉ. श्याम सुन्दर दुबे के अनुसार- 'ईसुरी जब रजउ के रूप का वर्णन करने लगते हैं तो सौंदर्य का अपरंपार झरना फूट पड़ता है। वे रजऊ के एक एक अंग का ऐसा लासानी वर्णन करते हैं कि उनके सामने श्रृंगार के श्रेष्ठ से श्रेष्ठ कवि भी पानी भरने लगते हैं। रजऊ की हेरन, हँसन, चलन के अनेक क्रियात्मक बिंबों का चमत्कारिक अनुभव ईसुरी की फागों में केंद्रित है।'

(बुंदेली गूंज-मिलाई। बुंदेलखण्ड: ईसुरी के झरोखे से)

अनूठी बुंदेली उपमाएँ भी उनके बोधगम्य अर्थ के लालित्य को बढ़ाती हैं। सा, से, सी, जैसी वाचक शब्दों से उपमान, उपमेय को सहज बनाता है। बुंदेली में दीं सी टिरकत, गिंजाई सी चलत, बंदरा सो बमकत, लपसी सी चाटत, मरी सी धरी, बेड़नी सी नाचत आदि अनेक बुंदेली उपमाओं का ललित श्रृंगार हैं। बुंदेली के सर्वनाम तक-नांय, मांय इतई, उतई, ईखों, ऊखों रसमय हैं।

ईसुरी भी प्रेमिका/पत्नी 'रजऊ के होने' और न होने के विवाद से परे 'ईसुरी अंक-5' बुंदेलखण्ड के बुलंद व्यक्तित्व अम्बिका प्रसाद दिव्य ने उन फागों के अंग्रेजी अनुवाद सहित उनके जीवन पर 'प्रेम तपस्वी, उपन्यास ही लिख डाला। इसके पूर्व भी 'निमियाँ' से प्रारंभ उनके 13 ऐतिहासिक उपन्यासों में बुंदेलखण्ड बोलता है, उसकी संस्कृति और भाषा मुखरित होती है। उसके बुंदेली पात्र अपनी आंचलिक बोली में वाणी रस घोलते हैं। सर जार्ज अब्राहम ग्रियसन ने अपने 'लिंग्विस्टिक सर्वे ऑफ इंडिया' के ग्यारहवें खंड के भाग-1 में 'इंडो आयन फेमिली' के सेंट्रल ग्रुप की 'वेस्टर्न हिन्दी' शाखा के अंतर्गत बुंदेली विवरणी प्रस्तुत की है। परंतु प्रदत्त बुंदेली सूची, सहायकों की अज्ञानता के कारण भ्रामक है। बुंदेली पीठ, सागर वि.वि. की 'ईसुरी' पत्रिका में बुंदेली पर्यायवाची शब्दों की चयनिका धारावाहिक प्रकाशित की गई हैं, जिसमें खेती-किसानी, व्यवसाय, त्यौहार आदि वर्गीकरण से एक शब्द कोष का निर्माण प्रस्तावित है। करीब 1650 बुंदेली शब्दों की सूची यहाँ दी गई है।

बुंदेली शब्द लालिपत्य की ललक केवल भावनात्मक स्तर पर ही नहीं, लोकानुभव से संपन्न लोक व्यवहार में भी देखी जाती है। मिट्टी के सोंधेपन से जुड़ाव, लोक कल्याणकारी, बुंदेली लोक साहित्य का नित्य रूप है जो व्यावहारिक धरातल पर वैज्ञानिक कसौटी पर भी खरा उतरता है। 'अंगूठे के अभिशाप' के बावजूद जीवंत यथार्थ के प्रकृति बोध का वरदान यहां के संस्कारों में रमा रहा। घाघ और भड्डरी यहाँ के मौसम वैज्ञानिक ही थे जिनके प्रकृति के सूक्ष्म निरीक्षण के फलस्वरूप वर्षा, कृषि, ज्योतिष, स्वास्थ्य, समाजशास्त्र के कई अनुभव उनकी लोकोत्तियाँ और कहावतों में जन जन की जबान पर हैं। ये लोक की उक्तियाँ ही हैं जो व्यक्तिगत स्तरों से परिणाम सिद्ध हो, लोकोन्नत होती हुई सूत्र वाक्य बनी हैं। इनकी पारंपरिक मान्यता बड़े जीवन सत्योद्घाटन करती है।

अपने शोध के दौरान श्री अम्बिका प्रसाद 'दिव्य' की अप्रकाशित साहित्य समिधाओं के बीच मुझे उनका 'लोकोत्ति सागर' भी मिला जिसमें हजारों लोकोत्तियाँ हैं। उनकी प्रकृति के अनुसार उनके निम्नांकित सात भेद किये गये हैं-

1. ढकोसला (बेमेल कुतूहल)
2. ओटपाय (कुचाल)
3. खुंस (क्रोधावेश में दोष दर्शन)
4. भेरि (क्रोध दिलाने वाली क्रिया जनक)
5. अचका (अतिशयोक्ति)
6. ओलना और
7. गहड्डा (आनंदवर्धन उक्तियाँ) ये लोक प्रचलित हैं-

'एक आँख तो धुंआ कानी, दूजी लई मिचकाय
भीत पै चढ़ के दौड़न लागे, मरबे के अटपाय।'
एक तो बसे खसक के गाँव, दूजे बड़न-बड़न सों न्याव
तीजे खड़े द्रव्य सों हीन, खुंस के ऊपर खुंस तीन।

उन्होंने प्रचलित कहावतों का भी वर्गीकरण किया हैं-

1. आलोचनात्मक-धोबी को कुत्ता घर को नें घाट कों।
2. शिक्षाप्रद-राजा करे सो न्याव, पांसो परे सो दांव।
3. पोषणात्मक-गेवड़े खेती, गाँव सगाई, विरले भी होय भलाई
4. अंग्रेजी प्रभाव-पोलोचना, बाजेघना (EPTY VESSELS MAKE MORE SOUND)

तत्कालीन 'मधुकर' पत्रिका में तो बुंदेली शब्द या कहावतें भेजने वाले को एक वर्ष मुफ्त पत्रिका देने की संपादकीय टिप्पणी थी। (16 मार्च 1941)

घाघ और भड्डरी की लोक व्यवहार पर खरी उतरी लोकोक्तियाँ तो ग्राम्य अंचल में आज भी जीवंत हैं

वर्षा 1. 'शुक्रवार की बदरिया, रहे शनिश्चर छाय
ऐसी बोले भड्डरी, बिन बरसे नें जाये।'

2. 'जो पै पवन पुरवैया आवे
उपजे अन्न मेघ फिर लावे।'

3. 'अग्नि कोन की बहै समीरा (आग्नेय दिशा)
पूरे काल दुख दये सरीरा।'

4. 'दच्छिन बहे जल थल अलकौरा
ताव समय जूझे बहुवीरा।'

'नक्षत्र विज्ञान' भी यहाँ मार्ग दर्शक है-

'जो कँऊ बरसे स्वांत निसात (स्वाति नक्षत्र)
चलेन रांटा, बजैन तांत
जो कँऊ बरसे होती (हस्ति नक्षत्र)
गेऊँ लग है छाती।

तिथि संकेत- 'माघ सप्तमी ऊजरी, बादर मेघ करंत
तौ असाढ़ में भड्डरी, घना मेघ्र बरसंत।'

पर- कृष्ण असाढ़ी प्रतिपदा, को अंबर गरंत
छत्री छत्री जूयिया, निहचे काल पडंत। (युद्ध अकाल)

कबीर की तरह ही बुंदेली कवि कागद लेखी पर नहीं। 'आंखन देखी' पर विश्वास करता है। बुंदेली कठिन जीवन

संचर्न अनुभवों की भट्ठी में पकी है। स्वास्थ्य विज्ञान की स्वाभिमुक्ति की कुंजी इसी में है। शतायु या अल्पायु का रहस्य भी इसी नियमावली में छुपा है-

'सावन ब्यारी कबहुन कीजे, भादों ब्यारी नाव न लीजे
क्वांर के दो पाख, जी जतन जतन सों राख
कातक मास दिवारी, हैलक हैल ब्यारी।'

इसके साथ ही बारह मासों में सेवनीय और असेवनीय खाद्य पदार्थों की सूची भी बुंदेली वैद्यों के गहन अनुभव की परिचायक है। ये सेवनीय सूत्र हैं-

'मीठी चैते चीपरी, बैसाख मीठो मठा
जेठ मीठी डोबरी, असाढ़ मीठो लटा
सावन मीठी खीर-खाँड़, भादों भुंजे चना
क्वांर मीठी कुदई काकरी, ल्याव कोरी सेर कै
कातक मीठी कुदई, दही डारी मोर के
अगहन खाव जुनरी, भर्ता मीठू जोर के
माघ मीठे जोंड़ा बेर, फागुन होरा बालें।'

ऐसे ही सेवनीय शतायु सूत्र और भी हैं-

'कातक दूध, अगहन में आलू। पूस पात और माघ रतालू।'
फागुन में शक्कर जो खायें। चैत्र आंवला कच्चा खायें।
बैसाख जो खांय करेला। जेठ दाख, असाढ़ केला।
सावन निशि में जब तक खावें। भादों ब्यार कबहु नहिं पावें
क्वांर कामना देय बचाय। सो शत वर्ष आयु हो जाय।'

पर इस विधान के साथ जरूरी है असेवनीय निषेध का ध्यान।

'चैत गुड़, बैसाखे तेल, महुआ जेठ, असाढ़े बेल
सावन साग न भादों मही, क्वांर करेला, कातक दही
अगहन जीरा, पूस धना, माघ में मिश्री, फागुन चना।'

ये बुंदेली वर्जनाएँ सावधान जन जन को अल्पायु से बचाती हैं। यह व्यावहारिकता ही बुंदेली को लोकभाषा की गरिमा देती है। और एक बोली को लालित्य पूर्ण लोक साहित्य में पदोन्नत करती है।

विशुद्ध बुंदेली काव्य से परे भी बुंदेलखण्ड के यशस्वी कवियों ने अपने खड़ी बोली हिन्दी काव्यों में प्रस्तुत आंचलिकता को बुंदेली के लालित्य की गरिमा से अरुणाभ किया है। डॉ. श्याम सुन्दर दुबे का 'धरती के अनंत चक्करों में' ऐसा ही काव्य है जिसे डॉ. विजय बहादुर सिंह ने 'खेत की भाषा में लिखी गई कविताएँ' कहा है। उसमें 'पहलौटी बिदा की बहुरिया', 'गियान धियान', कनयुची साँझ, धुकर पुकर, अबारी बेरा, अंगर खंगड़, 'गारुन की मरोड़' जैसे सैकड़ों शब्द हैं जो खड़ी बोली बुंदेली की जुगलबंदी करते हैं। वे एक ... निबंधकार भी हैं। अतः उनका गद्य भी इसी बुंदेली की ... को छूता है। वैसे शुद्ध बुंदेली गद्य का आविर्भाव काल ... के भीतर ही है। बसारी, छतरपुर के बुंदेली बसंत स्मारिका ... विगत आठ अंक भी बहादुर सिंह परमार के कुशल संपादन ... बुंदेली के नवोत्कर्ष के परिचायक हैं। उसके बुंदेली गद्य ... में डॉ. दुर्गेश दीक्षित डॉ. नर्मदाप्रसाद गुप्त, गुणसागर, सत्यार्थी ... रामस्वरूप दीक्षित, वीरेन्द्र शर्मा, कौशिक, डॉ. गंगाप्रसाद गुप्त ... बरसैया, आदि प्रतिष्ठित नाम हैं। दमोह के डॉ. छविनाथ तिवारी ने 'बुंदेल शब्द सामर्थ्य' पर शोधकार्य कर बुंदेली रथ के अश्वों की दुलकी चाल के लालित्य की लगाम थामी है। ... शास्त्री, यही नियंत्रण का काम करके अनुशासित करता है। बुंदेली में भी अब दिन ललित बसंती आन लगे।' दमोह के दमयंती बुंदेली मेला 2010 की स्मारिका 'बुंदेली अर्चन' ... साहित्यिक पत्रकारिता की बुलंद अर्चना है।

- एम.आई.जी.बी- 97, विवेकानंद नगर,
दमोह (म.प्र.)-470661
मो. 9893340604

लोक गीत

- श्रीमति माधुरी बड़बैयां

1. करलो करलो री नेवली सिंगार लिवावे आ गये साजनवां
   बहुत दिनों लो रही मायके गुइंयों के संग खेली,
   अबतो सासरे जानें, परहे दुल्हन बनी नवेली
   तुमतो करो न बहाने बेकार। लिवावे आ गये साजनवां
2. घड़ी टिया सोदन की आई, घड़ी चूक ने पाई
   मानत नइंयां काऊ कें साजन, अपनी टान टनाई,
   उनसे झगड़े में नइंयां, कोनऊ सयार.लिवावे आ गये साजनवां
3. नाउन आई महावर ले के दुल्हन कही करे ना
   बाजन लागे विदा के बाजे साजन धीन धरे ना
   वे तो ठाड़े हवेली के द्वार लिवावे आ गये साजनवां
4. छोड़ जाओ पुतरियाँ पुतरा और सखिन के लाने
   इनको सेंत तुमें का करने कोन काम के लाने
   तुमतो जात सजन घर आज लिवावे आ गये...
   करलो करलो री .... साजनवां

- हजारी वार्ड दमोह

"बुंदेली साहित्य : एक सिंघावलोकन"

– डॉ. श्यामसिंह डोंडेरिया

डॉ. उदयनारायण तिवारी का मत है–

"भाषा का एक सामाजिक दायित्व भी है और इसी से प्रेरित होकर साहित्य की सृष्टि होती है। जब भाषा तथा भाषा शास्त्र के अध्ययन की गति मंद पड़ जाती है तब साहित्य रचना में भी शिथिलता आ जाती है।"

"बुंदेली" अभिजात्य वर्ग की भाषा नहीं हैं, वह पाण्डित्य की चेतना और अहंकार से शून्य है, परम्परा के प्रवाह में जीवित रहने वाली लोक भाषा है। आडम्बर रहित, कृत्रिमता से दूर स्वाभाविक अभिव्यक्ति, भावुक उद्‌गार लिए, हृदय को छूने वाली आत्मीयता से ओत-प्रोत है– "बुन्देली" सभ्यता के दूषित प्रभाव से मुक्त ग्राम्य, वन-प्रांतर की यह सरस भाषा है। "बुंदेली" ग्रामाचंलों के लोकमानस को सहजता से प्रकट करने की भाषा है। बुंदेली भाषा की सरल-सहजता, स्वाभाविक शैली, शब्द-लोच, अपनत्व भरी आम लोगों में बोली जाने वाली, सभी के समझ में आने वाली भाषा की जीवन्तता इसमें अंतर्निहित है। बुंदेली लोक साहित्य में स्वानुभूति, लौकिक अनुभूति बनकर प्रस्फुटित हुई है, जिसमें लोक-संस्कृति उमंग-उमंग पड़ती है। ग्राम्य जीवन का यथार्थ काव्य-रचनाओं में परिलक्षित होता है। पछुआ बयार, रिमझिम फुहार, खपरैल से उठता धुआँ, माटी की सोंधी गंध, बीज बोता हुआ किसान, गोधूलि बेला, रंभाती हुई गायें, चक्की के गीत, पनघन की बातें, नदियाँ-कछार की पहर, जंगल की भोर, करमा और ददरिया, तीज-त्यौहार मड़ई-मेले, ऋतु-उत्सव, बिरहा के गीत, सोहर-बधाव, विवाह-गीत, निश्छल-सहजता, सरलता और आत्मीयता से हमारा मन मोह लेते हैं। हार-पहार, नदी-कछार, बेर-करौंदा, चाकर-पींपर, धाय-धुवैन, चार-चिरौंजी, मकुई, झरवेरी, आमा-जामुन विही से आत्म विस्मृत कर देने वाले राग बुन्देली लोक गीतों में है। टिकली, फुंदरी पैजन, करधन, बहुंटा, चुरवा, बिछुआ, बाजूबंद जेवरों की आवाज बुन्देली लोकगीतों में गूंजती है। बड़की-छुटकी, चहुरिया दिद्‌दा बप्पा, नाती-नतुरा के संबंध बुन्देली गीतों में जीवन्त हैं। दानवा, भुइया, संझावाती, तुलसी का चौरा, गोरसी, अदहरा, चूल्हा-चौका, पटा-पीढा नारा-पेरवां, सिंगौटा, चरही, खरिया, खुरपा, हँसिया, तुतारी, ढेरा, ढेकुहीं, मोट-सभी शब्दों की गूँज बुन्देली गीतों में सुनाई देती है। बुंदेली लोकोक्तियाँ, कहावतें, सैर, दोहा सवैया और छंद गागर में सागर समाए हुए हैं।

"बुंदेली" एक सुविस्तृत क्षेत्र की लोकभाषा है। इसे लगभग 67, 500 वर्गमील में निवास करने वाले लगभग एक करोड़ से भी अधिक नर-नारी बोलते हैं। बुंदेली लगभग चार सौ वर्षों तक राजभाषा के रूप में व्यवहृत रही है। बुन्देली एक सुविस्तृत क्षेत्र की लोकभाषा होने के कारण इसके एक ही शब्द का उच्चारण विभिन्न भागों में विभिन्न प्रकार से किया जाता है और एक ही वस्तु के अनेक नाम प्रचलित हैं।

"बुंदेली" पश्चिमी हिन्दी की एक महत्वपूर्ण बोली है। बुंदेली लोकभाषा बुंदेलखण्ड में बोली जाती है। किन्तु यह सम्पूर्ण बुन्देलखंड में प्रचलित नहीं है। इण्डिया गजेटियर के अनुसार– "बुंदेलखण्ड की सीमा उत्तर में यमुना नदी, उत्तर तथा पश्चिम में चम्बल नहीं, दक्षिण में मध्यप्रदेश के जबलपुर, सागर जिले तथा दक्षिण पूरब में रीवा अथवा बघेलखण्ड एवं मिर्जापुर के पर्वत हैं। डॉ. उदयनारायण तिवारी के अनुसार "बाँदा इस सीमा के अंतर्गत है, किन्तु यहाँ की बोली बुंदेली नहीं अपितु पूर्वी हिन्दी की बघेली है। इसके अतिरिक्त झाँसी कमिश्नरी के अन्य जिले झाँसी, जालौन तथा हमीरपुर बुन्देली भाषी हैं। चम्बल नदी वस्तुतः ग्वालियर की उत्तरी तथा पश्चिमी सीमा निर्धारित करती है किन्तु उत्तर में बुंदेली नदी तक ही नहीं बोली जाती, अपितु उसके पार आगरा, मैनपुरी तथा इटावा के दक्षिणी में भी बोली जाती है। पश्चिम में भी इसकी सीमा चम्बल नदी है, क्योंकि पश्चिमी ग्वालियर में ब्रजभाषा तथा राजस्थान की विभिन्न उपभाषाएँ बोली जाती है। दक्षिण में इसकी सीमा बुन्देलखण्ड की सीमा से बहुत दूर तक आगे चली जाती है। उधर यह केवल सागर, दमोह तथा भोपाल के पूर्वी भाग में ही नहीं बोली जाती अपितु मध्यप्रेदश के नरसिंहपुर, होशंगाबाद तथा सिवनी तक पहुंच जाती है। बालाघाट के लोधी तथा छिंदवाड़ा के मध्य भाग की जनता भी एक प्रकार की मिश्रित बुन्देली बोली बोलती है। इसी प्रकार नागपुर के मैदान की भाषा यद्यपि मराठी है, तथापि यहां भी मिश्रित बुन्देली बोलने वाली अनेक जातियाँ बस गई है।"

"बुन्देली" शौरसेनी अपभ्रंश के एक रूप 'मध्यदेशीया'

से विकसित पश्चिमी हिन्दी की एक बोली है। बुन्देली की व्युत्पत्ति इस प्रकार है- शौरसेनी अपभ्रंश (मध्यप्रदेशीया) पश्चिमी हिन्दी बुन्देली के उद्भव की स्थिति हिन्दी की अन्य प्रादेशिक बोलियों के उद्भव से भिन्न नहीं है। सं. 500 वि. से 1000 वि. तक अपभ्रंश काल है। 11 वीं से 14 वीं सदी के काल को संक्रमण काल कहा जाता है। इस काल में अपभ्रंश ने सरल होकर, ऐसा रूप ग्रहण किया, जिससे आधुनिक कालीन हिन्दी की प्रादेशिक बोलियों का आरंभ होता है। इस काल में जो बोलियाँ विकसित हुई, उनमें "अपनापन" की विशिष्टता निहित है, भले ही उनका आधार तत्कालीन अपभ्रंश भाषाएं रही हो। संक्रमण काल के विवेचित साहित्य के भाषा रूप को अपभ्रंश के उत्तरकालीन रूप एंव तत्कालीन लोक प्रचलित बोलियों का एक समन्वित रूप कह सकते हैं। यहीं हिन्दी का आरंभिक काल था। संक्रमण काल की सभी कृतियों में संस्कृत के तत्सम, अर्ध तत्सम और तद्भव रूपों के अतिरिक्त बुंदेली, ब्रज, कन्नौजी, अवधी, मालवी, आदि सभी प्रमुख बोलियों की प्रवृत्तियाँ एवं रूप विद्यमान है। 1023 ई. में देशी भाषा बुंदेली में साहित्य की रचना आरंभ हुई। वस्तुत: उसके दो -डेढ़ सौ वर्ष पूर्व अर्थात् 9 वीं सदी के आरंभ में ही बुंदेली का उद्भव हो गया था।

बुंदेली की उपबोलियों के नामकरण के दो आधार हैं- जाति और स्थान। इसके कुछ रूप ऐसे हैं, जो विशिष्ट जातियों द्वारा ही विशेष रूप से बोले जाते हैं। ऐसे रूप उस जाति के नाम पर आधारित हैं यथा-पँवारी, लोधन्ती, राठोरी, भदावरी, बनाफरी आदि। कुछ रूप स्थान अथवा क्षेत्र विशेष में प्रचलित होने के कारण उनका नाम स्थान वाची हो गया है। तोहरगढ़ी खटोला, छिंदवाड़ी, नागपुरी हिन्दी इसी प्रकार के नाम हैं। इसके कुछ रूप परिनिष्ठित हैं, कुछ अन्य सीमावर्ती बोलियों से मिश्रित हैं। वस्तुत: बुन्देली का एक लोकभाषा के रूप में जो विकास परिलक्षित है, वह बहुरूपी है। बुन्देली का एक काव्य-भाषा, राजभाषा और लोकभाषा के रूप में गत पाँच सौ वर्षों से जो निरंतर विकास हो रहा है, वह भाषायी दृष्टि से अत्यंत ही महत्वपूर्ण है।

डॉ. बल्लभ भद्र तिवारी ने अध्ययन की सुविधा के लिए समस्त बुन्देली काव्य के इतिहास को इस प्रकार विभाजित किया है :-

1. भाषा काव्य आंदोलन-9वीं विक्रमी से 13वीं विक्रमी तक।

2. कथा काव्य काल-13वीं विक्रमी से 16वीं विक्रमी तक।

3. रीति भक्ति काव्यकाल-16वहीं विक्रमी से 17वीं विक्रमी तक।

4. सांस्कृतिक उन्मेष काल-17वीं विक्रमी से 18वीं विक्रमी तक।

5. श्रृंगार काव्य काल-18वीं विक्रमी से 1950 विक्रमी तक।

6. आधुनिक काल (स्वतंत्रता पूर्व) 1950 से 2000 विक्रमी तक।

7. अत्याधुनिक काल (स्वातंत्र्योत्तर)- 2000 विक्रमी से आज तक।

बुन्देली भाषा के प्रमुख कवियों में जनकवि जगनिक हैं। आपने दो प्रतापी देश भक्त वीरों आल्हा और ऊदल के शौर्य एवं वीरता का वर्णन एक वीर गीतात्मक काव्य के रूप में लिखा था, जिसे सर्वसाधारण "अल्हाखण्ड" कहते हैं। जगनिक का समय विद्वानों ने 1165-1203 ई. माना है। ईसुरी बुन्देली के अद्वितीय प्रतिभा सम्पन्न श्रेष्ठ कवि थे, यदि बुन्देली भाषा का मानक कवि उन्हें कहा जाये तो अतिशयोक्ति नहीं होगी। ईसुरी का रचनाकाल उन्नींसवीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध से बीसवीं शताब्दी के प्रथम दशक तक माना जाता है। आपने वन्दना, भक्तिपरक फागें, श्रृंगारपरक फागें, प्रकृतिपरक फागें, लोकजीवनपरक फागों की रचना की है। लोककवि ख्यालीराम, ईसुरी, गंगाधर व्यास के साथ बुन्देली की स्वतंत्र काव्य परम्परा की वृहत्त्रयी में शामिल हैं। ख्यालीराम का जन्म विक्रम संवत् 1906 में तथा अवसान विक्रम संवत् 1961 में हुआ। इन रचनाओं ने बुन्देली को साहित्यिक गरिमा प्रदान की। रामचरण हयारण 'मित्र' का जन्म एक साधारण स्थिति के ताम्रकार परिवार में सन् 1904 में हुआ था। ये बुन्देली लोक संस्कृति के चित्रकार हैं। आपकी बुन्देली की कविताएँ 'लोलेयाँ,' 'लोक गायनी' में संग्रहीत हैं। आलोचना के क्षेत्र में बुन्देलखण्ड की 'संस्कृति और साहित्य' महत्वपूर्ण पुस्तक है। संतोष सिंह बुन्देला अब हमारे बीच नहीं है। आपका जन्म 18 मई 1930 संवत् 1987 की जेठ वदी सप्तमी रविवार को छतरपुर जिले की पहाड़ गाँव जागीर में तत्कालीन जागीरदार श्री दीवान दिल्लीपत सिंह जूदेव के घर हुआ था। ठेठ ग्रामीण बुन्देली में रचित गीतों को उन्होंने अपने स्वर, शैली और लय से ऐसा प्रभावी रूप दिया कि वे सुघड़ होकर लोगों के लोकप्रिय गीत बन गये। आपने गाँव की संध्या

हमारे रमटैरा की तान, देखकर जै फागुन के मैह, आज मौरे करम गजब हुइगा रे, आज सबसै दूर हैं, मजबूर सै रहें आदि गीतों की रचना की है। महाराजा छत्रसाल के आश्रित कवियों में गोरेलाल उपनाम ''लाल'' का विशेष नाम लिया जाता है। लाल कवित प्रायः दग्धा में ही रहते थे। इनके प्रमुख ग्रंथ छत्र प्रशशति, छत्रछाया, छत्रकीर्ति, छत्रछन्द, छत्रसाल-शतक, छत्र हजारा, छत्र दण्ड, छत्र प्रकाश, विष्णु विलास तथा राजविनोद हैं। छत्र प्रकाश इनका सर्वाधिक प्रसिद्ध ग्रंथ है। बुन्देली साहित्य में ईसुरी की फागों की लोकप्रियता के साथ उनके समकालीन सखा श्री गंगाधर व्यास का नाम बहुचर्चित है। मध्यप्रदेश के छतरपुर नगर के एक साधारण ब्राम्हण परिवार में उनका जन्म विक्रम संवत् १८९९ में हुआ। श्री गंगाधर जी व्यास की लिखित रूप में दो सौ फागें हीं संग्रहित मिलती हैं। शेष काव्य भंडार तो लोकमानस की स्मृति में ही समाहित हैं। माधव शुक्ल मनोज का जन्म 01 अक्टूबर 1931 में हुआ। कवि मनोज मध्यप्रदेश के नवयुवक कवियों में एक विशिष्ट स्थान रखते हैं। नयी हिन्दी कविता में जीवन के चित्र बिम्ब और जटिलताओं के साथ ही साथ ग्रामीण परिवेश की ओर भी नये कवियों का ध्यान जा रहा है। मनोज की कविताएं इस नयी शैली की दिशा का भी संकेत करती हैं। उनका अप्रकाशित कविता संग्रह ''अनकटी यात्राएँ'' इसका प्रमाण हैं। बहुत से ऐसे कवि हैं जिनका साहित्य उपलब्ध है, परन्तु बहुत से कवियों का साहित्य उपलब्ध नहीं है।

सम्प्रति -
अध्यक्ष, हिन्दी विभाग
केसरवानी महाविद्यालय, जबलपुर

कुंजा का भात मांगना

-एल.एम.चौरसिया

भइया सुनलो मोरी बात
मांगवे आई आज में भात
ठानलओ भानेजन को ब्याव
नहीं तुमाये बिना इतै पै हितुआ कोऊ हमाव
मन हाँ मार गई महलन में, सो जुझार भगवा दओ
भइया जां पै होय तुमारौ, उतई जाव तुम जौ कऔ
वनी रये घर में घर कर बात, ऐई सें गयी मैं तोसें कात्
ना राखो मन में कछू दुराव
भइया राजा मानन लागे मोहां आज पराव-नहीं
जीने सुनी समाधि जाकें कुंजा भात मंगावै
ऊने हंसी करी मुरदा सें, मूरख आस लगावै
दये ना कान काऊ की बात, सबई अपने मनकौ वर्रात
अपने-अपने मन के भाव
सच्चे मन कौ जे मूरख सो जानत नहीं प्रभाव-नहीं
कोऊ चाय जो काऐ हमारे मन मैं पूरी आशा
मोहां काय काऊ हाँ तो सें, भइ ना कभऊ निराशा
काया नश्वर सो जरजात, आत्मा अमर हमेशा रात
जो उसें सच्ची लगन लगाव
सो मन के फल इतै देख लो पथरन से भी पाव-नहीं
अब तो हांत तुम्हारे भइया चाहे जैसो करियो
चाहे लाज बचइयो, चाहे जग में हंसी करइयो
काम करवे खां खूब जमात, रही बस नेंग करे की बात
मंडवा तरें भात सो ल्याव
भानेजन की विदा आन के अपने हांत कराव नहीं
बहिना जाव करौ तुम औसर, कोनऊ सोस करौ ना
मैं सब नेंग करों आकर कें, मन मैं तनक डरौ ना
मरे हां काया की है आन राखियो इतनो मन में ध्यान
मोंऐं तुम हर नेंगन में पाव
कमऊं शरीर सहित देखन को इदयों नहीं दबाव-नहीं
कुंजा लौट चली घर अपने मन ही मन हरसा के
भइया चलें तुमारे जग में, जुगन-जुगन लौ साके
बने रइयो अबलन के भ्रात, मूड पे धरिये अपनो हांत
कै जैसो मोरे लाने भाव
हर कन्या के लाने ऐसइ रखियो सदा सुभाव
नहीं तुमाये बिना इतै पै हितुआ कोउ हमाव।

-सीता राम कॉलोनी,
छतरपुर

को, कीके गुन बरने जब हों दोनउँ एकइ जैसे ?

दीनानाथ शुक्ल

अमरत-उत्सव आजं शरद को, मोय खुशी भइ भारी,
तन-मन-धन में जुटें भारती, हो तो ऐसी यारी।

धन्न गुनीजन ई नगरी के, जो कर रय सत्कार,
'शरद-बसंत-हेमन्त' धन्न भओ, मोझरकर परिवार॥

पाती मिली 'सत्य मोहन' की, लिखो 'शरद' के लाने,
'सबकी खबर' गजट में सोउ, जीवन परिचय छपवाने।

पढ़के धक्क करेजो मोरो, हीरा की पहचान,
करत जौहरी, लोककवी नइँ, कूदत ई मैदान॥

कम्बल की कम्बल से कवजू, गांठ बंधत है कैसे,
को, कीके गुन बरने जब हों, दोनउँ एकइ जैसे।

जैसे गुन के हते 'उदइ', ऊँसइ गुन के ते 'भान'
इनकी नइँती कहत चुटैया, उनके नहूँ ते कान॥

अथश्री करो न तुम तो, इति श्री बिना करें हो जात,
ईसें अपनइ अंतरंग के, ढँके-मुँदे गुन गात।

देख कुंडली कहत ज्योतिषी, ऐसे बैठे जोग,
इनकी जोत अबै ना बुझहे, लगो रहन दो रोग॥

दई पटकनी टीबी को, सँसधुकनी एक निकार,
• बुधि विवेक साहस से लीला, कर रय सोच विचार।

कालबली सोउ ई रसिया को, हँस-हँस राखत मान,
बरस पचत्तर की उमर में, अब लों दिखत ज्वान॥

मोरे 'शरद' तनक बड़बुलिया, पै बातन में सार,
ढँको-मुँदो सोउ रहत, ढूँढ़ कोउ परखे खोजनहार।

मंचों के संचालन में तो, सदा रहे जे आगे,
बड़े जतन से खोलत तन-मन गुँथे गुनन के धागे॥

इन जैसो एकउ नइँ हम में, औसर देख बुलैया,
डमरू बजत मंच सें, नेचें नाचन लगत बँदरिया।

नैनन में अँसुआ भर देउत, पै टपकन नइँ देत,
'लौह पुरूप नइँ रोत कभउँ' कह बजवा लेत॥

अपनइँ स्वागत करवैयन की, घर में लगे कतार,
दस-दस फुट के उपतइ लाउत, नोट गुँथे कोउ हार।

उनइँ से पूँछ लिखें गुन उनके, करवावें गुनगान,
बाँचे ऐसें खेंचत जैसें, तानसेन हों तान॥

सभापती, वक्ताविशेष, या मुखिया अतिथि के आसन,
कभउँ न चाहे सपने इनने, जे ऊँचे सिंहासन।

पलक पाँवड़े बिछा देत जे, अभ्यागत के लाने,
खबा पिवा के सुबा देत, लोटा धरकें सिरहाने॥

ऐइ गुनन से 'शरद भाउ' के, मित्र सुमित्र न खीझे,
चपरासी से आला हाकम, सब इनपै ते रीझे।

एक सभा में मैंने जानो, अंतस-भाव तुमारो,
जब पदविन की माला पहना, गुनियन को पुचकारो॥

मिसरी घोलें मों में बोले, ऐसी मीठी वानी,
मरूभूमि में जैसें मिल गओ, हो प्यासे को पानी।

नरपुंगव, कुलश्रेष्ठ, मान्यवर, कह संबोधन नाना,
आदर योग्य विशेषण को सब खाली करो खजाना॥

रतन चुने अनमोल, नाम के आगे 'पुरुष' लगाकें,
'ग्राम्यश्री' से 'नगर श्री' तक दइँ पदवीं मुस्कांकें।

'नगरश्री' दे दइ 'नारद' को पत्रकार वे खास,
'विजय सिन्हं' को 'कलारत्न' कह, पूरी कर दइ आस॥

'कंचनपुरुप' 'कामता' को दइ, उनने राखो मान,
गले लगा अँसुआ टपका दय, अब को करे बखान।

मैंने सोउ माँगी वे बोले, सुनो बुंदेला यार,
'दीनानाथ' स्वनाम धन्य नइ, धरत मूँड़ जो भार॥

औरन को कद बढ़ा-बढ़ा, कद अपनो कर-कर नाटो।
'शरद भाउ' ने संघर्षों में, हँस-हँस जीवन काटो॥

पता- विक्रांत इंटरनेशनल (फ्रीजो-आँवला)
फेक्टरी के सामने, 10वाँ मील, कटंगी रोड,
करमेता, जबलपुर (म.प्र.)

महाराजा वीर सिंह जू देव ओरछा - व्यक्तित्व एवं कृतित्व (सन 1605-27 ई.)

– डॉ. काशीप्रसाद त्रिपाठी

ओरछा नरेश महाराजा वीर सिंह देव के व्यक्तित्व एवं कृतित्व पर प्रकाश डालते हुए आज उनकी 443वीं जयंती अथवा 404 वीं सिंहासनारोहण वर्षगांठ मना रहे हैं। पिता महाराजा मधुकर शाह ओरछा के राजा थे, और माता महारानी गणेश कुँवर थी। जो भगवान रामचंद्र को 1574 ई. में अयोध्या से लाई थीं। यह वही विग्रह है जिन्हें उज्जैन के राजा विक्रमादित्य ने राम-जन्म भूमि पर मंदिर बनवा कर प्रतिष्ठित किया था। ऐतिहासिक तौर से भगवान राम राजा की यह प्रतिमायें सबसे प्राचीन एवं प्रथम हैं। सन 1574 के पूर्व राम राजा मंदिर-रानी महल था, जिसमें महारानी गणेश कुँवर रहती थीं। इस रानीमहल में सन 1566 ई. में वीरसिंह देव का जन्म हुआ था। वीरसिंह देव 8 भाई थे, जिनमें वह चौथे राजकुमार थे।

महाराजा मधुकर शाह निर्भीक योद्धा ध्येय धर्म आस्था के पक्के थे। उनका राज्य पिछोर, सीपरी, कछौआ, बड़ौनी, भसनेह से घसान नदी के उसपार पूर्व में डगई भूभाग तक था। उनके समय दिल्ली में मुगल सम्राट अकबर था। मधुकर शाह एवं अकबर में रामानंदी तिलक लगाने पर सदा अनवन रही। मधुकरशाह ने मुगल सम्राट की कभी परवाह ही नहीं की थी। वह अकबर से न कभी डरे न झुके। अकबर के समकाल भारत में दो ही राजा ऐसे थे, जो उसे दबे नहीं थे- एक महाराणा प्रताप दूसरे मधुकर शाह बुन्देला। मधुकर शाह सन 1592 में मुगल सेना से युद्ध करते हुये नरवर के जंगल में बीरगति को प्राप्त हो गये थे।

मधुकरशाह के निधनोपरान्त, उनके ज्येष्ठ पुत्र रामशाह ओरछा के राजा बने थे। शेष सातों भाईयों को जागीरें दी गई थीं, जिनमें वीरसिंह को बड़ौनी की जागीर दी गई थी। जो दतिया से पश्चिम दिशा में 10 किलो मीटर दूर, पहाड़ों के मध्य स्थित है। राजा रामशाह प्रभावशाली, कठोर, दृढ़ निश्चयी एवं जुझारू नहीं थे, बल्कि सरल शांत प्रकृति के थे। जिसका लाभ उठाकर वीहर बावना, कालिंजर में स्थानीय सरदार स्वतंत्र होने लगे थे। भाड़ैर काल्पी पर मुसलमान प्रभावित हो गये थे। गढ़ाकोटा में गकतूम जाति का प्रभाव बढ़ रहा था। शाहाबाद में धंधेरे, करैरा में पवांर, पाथर कछार में रघुवंशी, रामपुर में कछवाहे स्थापित हो गये थे।

वीरसिंह देव जागीरदार बड़ौनी के दृढ़ निश्चयी, पराक्रमी, दवंग निर्भीक, निडर, जुझारू, प्रभावशली, तलवार के धनी एवं कुशल व्यूह रचनाकार थे। उन्हें पिता मधुकर शाह द्वारा स्थापित राज्य की एकता का विखण्डन विखराव चुभन पैदा करने लगा था। बड़े भाई राजा रामशाह से असन्तुष्ट होकर, उन्होंने भाई प्रतापराव एवं इन्द्रजीत सिंह को साथ लेकर पवाँ, भांड़ैर, करैरा, बेरछा, ऐरच एवं जालौन क्षेत्रों पर अपना अधिकार स्थापित कर लिया था। उन्होंने केलारस हथनौरा को विजय कर मीणा एवं जाटों का दमन किया था।

वीरसिंह देव द्वारा अपनी बड़ौनी जागीर का विस्तार करने का समाचार जब सम्राट अकबर ने सुना, तो उसने आसकरण कछवाहा और दौलत खाँ को उनके दमन के लिये भेजा तथा रामशाह को भाई के दमन में शाही सेना की मदद करने का निर्देश दिया। तद्नुसार रामशाह, आसकरण और दौलत खाँ बड़ौनी पहुंचे। भाँडैर से हसन खाँ ऐरछा से अब्दुल्ला, बेरछा से हरदेव पवांर, पवां से राजा राम पवांर और मीणा जाट सरदार जी बड़ौनी में एकत्र हो गये थे। जैसे ही वीर सिंह देव को घेराबंदी का पता चला तो वह इंदुरखी के कृपाराम गौर के साथ जंगल में जा पहुंचे थे।

रामशाह ने अकबर का साथ दिया तो वीरसिंह देव उनके विरोधी हो गये तथा मुगल क्षेत्रों में लूटपाट करने लगे थे। वह सम्राट अकबर के लिये सिरदर्द बन गये थे। इसी समय सन 1601 ई. में लंबी उम्र हो जाने पर भी अकबर का पुत्र सलीम सम्राट न बन सका तो वह असन्तुष्ट होकर विद्रोही हो गया था। सलीम-मुगल सेनापति शेख अबुल फजल को अपने राज्यारोहण में प्रमुख बांधक मानता था। सलीम, पिता सम्राट अकबर की आज्ञा का उल्लघंन कर आगरा से इलाबाद किले में चला गया था जहाँ उसने अपने को भारत का सम्राट घोषित कर दिया था।

सलीम के विद्रोही हो जाने पर सम्राट अकबर ने अबुल फजल को दक्षिण से फौरन आगरा वापिस लौट आने का आदेश दिया था। तुजुके-जहांगीरी में उल्लेख है कि सलीम ने

समझा कि अबुल फजल आगरा पहुंच कर पिता सम्राट को मेरे विरुद्ध सलाह एवं सहयोग देगा तो अच्छा होगा कि शेख आगरा पहुंच ही न सके। इसके लिये सलीम ने बड़ौनी से वीरसिंह को इलाहाबाद बुलवाया। वीर सिंह अपने सहयोगियों से मंत्रणा कर इलाहाबाद गये। वहाँ सलीम ने उनसे कहा कि अबुल फजल तुम्हारे क्षेत्र की सीमा से गुजराता हुआ आगरा जा रहा है। आगरा पहुंच कर शेख मेरे विरुद्ध सम्राट को सलाह देगा। आप मेरे मित्र है। ऐसा करो कि शेख मेरे पिता से न मिल सके। इस काम में तुम मेरी सहायता कर दो तो जब मैं दिल्ली का सम्राट बन जाऊंगा तो तुम्हें ओरछा का राजा बना दूंगा। डॉ. बैनी प्रसाद ने अपने ग्रंथ 'जहांगीर' पृ. 50 पर उल्लेख किया है कि सलीम की सलाहमान कर वीर सिंह इलाहाबाद से लौटे और 500 घुड़सवारों के साथ आगरा मार्ग पर सिंध नदी के वनाच्छादित क्षेत्र के आंतरी गांव में जा पहुंचे। इसकी खबर वर्की चौकी पर असद खाँ को लग गई थी। उसने शेख अबुल फजल को सावधान भी कर दिया था, परंतु शेख शाही सेना का सेनापति था, बहादुर था परन्तु हठी भी था, जो वीर सिंह की परवाह किये बिना आगे बढ़ता रहा। जैसे ही वह नरवर और आंतरी के मध्य की परायछे चौकी पर 12 अगस्त 1602 शुक्रवार को पहुंचा तो बुंदेला घुड़ सवारों ने उसे घेर कर वीर सिंह के पास चलने को कहा, तो शेख क्रोधित होकर उन्हें गालियाँ देने लगा था। तब बुंदेला सैनिकों ने हाथी पर बैठे शेख को सांगें मार कर नीचे गिरा दिया था। उसी समय वीर सिंह ने आगे बढ़कर, नीचे पड़े शेख को साथ चलने को कहा तो शेख पुन: गालियाँ देने लगा तो क्रोध में आकर वीरसिंह ने तलवार के एक ही वार से उसका सिर धड़ से पृथक कर दिया था। कटे हुये सिर को अपने सहयोगी चम्पतराय एवं बड़गूजर के द्वारा सलीम के पास इलाहाबाद भेज दिया था। हुसैन खाँ ने भी अपने ग्रंथ मुतासरीन में ऐसा ही उल्लेख किया है।

वीर सिंह के हाथ शाही सेना का सेनापति अबुल फजल का वध किया जाना सुन कर सम्राट अकबर दुखी हुआ। उसने त्रिपुर राजा को वीरसिंह को पकड़ने का निर्देश दिया। मुगल सेना जैसे ही वीर सिंह को घेरने आई तो वह भांडेर तरफ जंगल में चले गये थे। ओरछा दरवार रिकार्ड रजिस्टर 83 में उल्लेख है कि वीरसिंह आगे-आगे चलते हुए, पीछा करने वाली शाही सेना को परेशान करने के लिए कुंओ के जल को विषाक्त करवा दिया था। जिस कारण शाही सेना उन्हें न पकड़ सकी। अकबर ने पुन: 1604 ई. में त्रिपुर खत्री राजा, मान सिंह, गौहद के जाट एवं अब्दुल्ला खाँ, हसन खाँ को वीर... के पकड़ने को निर्देशित किया था। उस समय वीरसिंह ... के किले में थे। जैसे ही शाही सेना एरछ पहुंची तो घेराबंदी... पूर्व ही वीरसिंह किले में थे। जैसे ही शाही सेना एरछ पहुंची... घेराबंदी से पूर्व ही वीरसिंह किलें में से रानीघाट होकर ... नदी के किनारे किनारे निकल कर बड़ौनी-दतिया क्षेत्र ... पहंचे थे। शाही सेना एवं सरदार उन्हें न घेर सके थे, न ... सके थे।

अबुल फजल के कत्ल एवं सलीम के बागी होने ... गम में 13 अक्टूबर 1605 को सम्राट अकबर की मृत्यु हो ... थी। सलीम जहाँगीर नाम से भारत का सम्राट बना था, जिसने वीर सिंह को आगरा बुलवाया और उन्हें अपना पक्का मित्र मानते हुए ओरछा का राजा घोषित कर दिया था। परन्तु ... रामशाह ओरछा राजगद्दी छोड़ने को तैयार नहीं थे। उन्होंने जहाँगीर के निर्णय के विरुद्ध विद्रोह कर दिया था। ... जहांगीर ने अब्दुला एवं हसन खाँ को ओरछा भेजा। जिन्होंने सन 1605 ई. में ओरछा राजगद्दी पर आसीन करा दिया था।

वीरसिंह देव 39 वर्ष की आयु में सन 1605 में ओरछा के राजा बने थे तथा 22 वर्ष राज्य करने के पश्चात सन 1627 में 61 वर्ष की आयु में स्वर्गवासी हो गये थे। 22 वर्ष ... शासन संचालन के दौरान उन्होंने स्थापत्य-कला-साहित्य निर्माण एवं जनहिताय-प्रजा सुखाय जल प्रवंधन के ... किये, जिनके कारण उनकी कीर्ति अमर हो गई। वह इतने प्रभावशाली हो गये थे कि बुंदेलखण्ड ही क्या दिल्ली ... के बड़े-बड़े सरदार, वीर योद्धा जैसे आसकरण कछवाहा, अब्दुल रहीम खान, दौलत खाँ, अब्दुला खाँ, हसन खाँ, ... खत्री, महावत खाँ, खान जहां, जयसिंह एवं राजसिंह बौने ... गये थे। उनके समय ओरछा राज्य की ओर सिर उठा कर देखने का साहस किसी पड़ौसी राजा-नवाब नहीं कर पाया ... उन्होंने जो चाहा सो किया। जिधर तलवार घुमाई उसे ... किया। गढ़ मंडला के गौंड़ राजा ने धसान नदी के पूर्व के ... के भूभाग पर अधिकार कर लिया था। खटोला के सूरजशाह गौंड़ के आधीन पूर्वी-दक्षिणी बुंदेलखण्ड में 26 किले हो ... थे। जिन्हें वीर सिंह देव ने तोड़ कर अपने अधिपत्य में ... लिया था। गौड़ों से धामौनी का किला छीन कर, उसका पुनर्निर्माण करा कर धसान नदी के पार के राज्य की देखभाल, सुरक्षा व्यवस्था का सशक्त गढ़ बना दिया था। उनके ओरछा राज्यान्तर्गत 81 परगना 125000 ग्राम आ गये थे जिनसे वार्षिक ...

लगभग 2 करोड़ रूपया थी। वीरसिंह देव के राज्य विस्तार विषयक, ओरछा दरबार रिकार्ड रजिस्टर 35 में उल्लेख है कि

इत यमुना, उत नर्मदा, इत सिंध उत टौंस।
वीर सिंह देव सों लरन की, किये हती हौंस॥

वीर सिंह देव ने राज्य विस्तार के साथ साथ अपार धन भी संग्रहीत किया था। जिसका उपयोग चमत्कारी स्थापत्यों, तालाबों, बावड़ियों, मंदिरों, किलों, महलों एवं बाग बगीचों के निर्माण में लगाया था। जिन्हें देखकर आज 400 वर्ष बाद भी लोग सराहते हैं। आश्चर्य प्रकट करते है। वह बुंदेला स्थापत्य शैली के जनक थे। उन्होंने विघटित ओरछा राज्य को संगठित, विस्तारित एवं शक्तिशाली बना लिया था। जिस कारण उनके विषय में लिखा गया है कि-

बल बोई कीरत जमी, करण करी दो पात।
सींची विरसिंह देव ने, जब देखी कुम्हलात॥

वीर सिंह देव के यशस्वी जीवन के विशेष उल्लेखनीय कार्यनिम्न हैं-

1. श्रेष्ठ दानवीर:- वह श्रेष्ठ दानवीर थे। सन 1614 ई. में मथुरा की तीर्थ यात्रा पर गये थे। वहां 81 मन सोने का तुलादान किया था। जिसे ब्रह्मणों, पंडों पुजारियों में वितरित करा दिया था।

2. साहित्यकारों एवं कलाकरों के आश्रयदाता :- वह साहित्यकारों एवं नृत्य कला प्रवीण नृत्यांगनाओं के आश्रय दाता थे। महा कवि केशवदास उन के दरबारी कवि थे। जो हिन्दी साहित्य के रीतिकालीन युग के अन्तिम कवि थे। रस मय नख शिख एवं श्रृंगार काव्य के वह अद्वितीय कवि थे। भाषा का चमत्कार दिखाते हुये उन्होंने ऐतिहासिक काव्य ग्रंथ भी रचे थे। रतनबावनी(1508 में) कवि प्रिया(1601 में) नख शिख(1602 में) वीरसिंह चरित्र(1607 में) विज्ञान गीता(1610 में) एवं जहाँगीर जस चंद्रिका की रचना(1612) में की थी।

राय प्रवीण उनके दरबार की सर्वश्रेष्ठ नर्तकी थी। नर्तकी के साथ साथ वह काव्य रचना में भी निपुण थी। वीर सिंह देव के दरबार में आने से पूर्व केशवदास एवं राय प्रवीण कछौआ में रहते थे।

3. वीरसिंह देव के स्थापत्य:- वीरसिंह देव ने चकित करने वाले बेजोड़ स्थापत्यों का निर्माण कराया था। इतना अधिक और ऐसा चमत्कारी निर्माण कार्य चंदेलों के अलावा बुंदेलखण्ड में और बुंदेलखण्ड क्षेत्र से बाहर भी किसी बुंदेला राजा ने नहीं कराये रहे। उन्होंने लीक से हटकर, बुंदेला स्थापत्य कला, शैली में सुदृढ़ किले, महल, मंदिर एवं सरोवर बनवाये थे। पर्सी ब्राउन ने तो उन्हें बुंदेला स्थापत्य शैली का जनक लिखा है।

माघ कृष्ण 5 संवत 1675, सन 1618 दिसम्बर को उन्होंने अपनी 52वीं वर्षगांठ पर 52 स्थापत्यों की आधार शिला रखी थी। उनके बनवाये स्थापत्य निम्न हैं:-

किले 7- किला झाँसी, धामौनी, करैरा दतिया, कुड़रा, गढमऊ एवं कुडार। कुडार का किला और महल भूल भुलैया सा है जो अपने तरीका का भारत में एक ही है।

महल हवेली 15- दतिया का नरसिंह महल, नौ चौका महल ओरछा, जहाँगीर महल ओरछा, चित्रकोट ओरछा, नौबत खाना ओरछा, हम्माम ओरछा, शहर पनाह ओरछा, शिकारगाह ओरछा, कूंचगढ़ी, काशी हवेली, कुञ्ज हवेली मथुरा, गया में धर्मशाला, हवेली शिवराजपुर सिंध के किनारे शिकारगाह, दिनारा की कोठी उन्हीं ने बनवाई थी जो तालाब के किनारे पर हैं।

तालाब 4 - वीर सागर दतिया नरसिंह महल के पास, वीर सागर पृथ्वीपुर के पास वीरसागर गाँव में। इसके बाँध पर बाँके विहारी का मंदिर बनवा कर मूर्ति की प्रतिष्ठा कराई थी। बाँके विहारी की प्रतिमा बाँकी ही है। उनने सिंह सागर कुडार, देव सागर दिनारा बनवाये थे।

बावड़ी 7 - बड़ौनी की बावड़ी, कटेरा की बावड़ी, दतिया की बावड़ी, उगरा बावड़ी, सिरौल बावड़ी, दिल्ली में चौपरा, चंदेबा बेर दतिया में बनवाई थी।

घाट 3 - विश्रान्त घाट मथुरा, काली दहघाट मथुरा, इमला घाट मथुरा में यात्रियों धर्मप्रेमियों की सुविधा के लिये बनवाये थे।

बगीचे 4 - फूल बाग ओरछा, बुन्देला बाग वृन्द्रावन, चतुरायन बगीची वृन्द्रावन, व्यास बगीची वृन्द्रावन में लगवाये थे।

मंदिर 12 - केशवदेव मंदिर मथुरा, चतुर्भुज मंदिर ओरछा, धूम शिवाल ओरछा, बनखंडी मंदिर ओरछा, धामेश्वर मंदिर सिंध नदी के तट पर, देवी मंदिर भाड़ैर, काशी में विश्वेश्वर मंदिर, भानु मकरंद मंदिर एरछ, गणेश मंदिर वैद्यनाथ, लाड़ली जी का मंदिर बरसाना, देवी मंदिर रामगढ़ दतिया, बांके विहारी जी का मंदिर वीर सागर बाँध पर बनवाया था। उनके बनवाये यह 52 स्थापत्य उनकी कीर्ति के कीर्ति स्तंभ बने हुये खड़े हैं। वीर सिंह देव के समान पराक्रमी, कीर्तिवान,

जुझारू, बुन्देलखण्ड में नहीं था।

वीर सिंह चरित्र (ऐतिहासिक) ले.चिरंजीलाल माथुर-पृ.59 पर, वीर सिंह बुन्देला ओरछा के सरदारों, सहायकों एवं लड़ाकों की सूची दर्शाई गई है जो उनके विश्वस्थ साथी और दरबारी थे। वह थे-मानशाह, भगवंत भैया, जुझार राय, हरदौल, पहाड़सिंह, बाघराज, चंद्रमनी, भगवानदास, नरहरिदास, कृष्णदास, माधौदास, बैनीदास, तुलसीदास, बसन्त राय, खांडे राव, कृपा राम, कन्हरदास, गौर कृपाराम, चम्पतराव बड़गूजर, केशवदास, सुन्दर प्रधान, ईश्वर रावत, नारायण दास कायस्थ, दामोदर एवं जादौराम उनके सैनिक अधिकारी थे। तात्पर्य कि वीर सिंह देव सही एवं सभी अर्थों में सिंह के समान वीर थे जिन्हें नाहर सिंह भी कहा जाता था। वह एक श्रेष्ठ उच्च स्तरीय बहुआयामी कृतित्व के धनी व्यक्ति थे। जिनके कृतित्वों से ही ओरछा ने भारत के पुरा दर्शनीय स्थलों में नाम प्राप्त किया है। इसी कारण उन्हें बुन्देल केशरी माना जाता रहा है।

-भारत भवन पुरानी टेहरी
टीकमगढ़, म.प्र.

सच्चा न्यायी

– प्रताप भूषण तिवारी

जा मांटी बुंदेल खण्ड की बिश्वा बीस निराली।
पैदा करती रतन अनेकन पीली हो चाहे काली॥
जैसे मधुकर शा पटरानीराम लला लै आई।
बैसई कमलावति छत्राणी छत्रसाल को पाई॥
वीर सिंघ मधुकर के छौना जग में नाम कमायें।
इक्यासी मन पक्के सोने को मथुरा दान कराये॥
वीर बुंदेला वीर सिंघ सा भयो न कौनऊ न्यायी।
जिनने दूर दूर देशन लों बड़ी ख्याती पायी॥
एक समैया कुँवर वीर के लेकर संग संगाती।
खेलन गऐ शिकार तुंग वन चढ़कर हौदा हांथी॥
उनने देखो पीपल नीचे बैठे इक सन्यासी।
नंगा बदन देखि बाबा को आई कुँवर को हँसी॥
सन्यासी ने शिक्षा दीनी सुनियो कुँवर हजारी।
आश्रम ढ़िंगा शिकार न करियो छोटी उमर तुमारी॥
सुनकर तीखी बात कुँवर को आ गई गुस्साँ भारी।
इक तो राजकुमार हते ऊपर से बहुत अनारी॥
नायक से पूँछे बिने उनने कुत्ता ढ़िगा बुला लये।
अँगुली उठा संत के ऊपर पूरे श्वान लुहा दये॥
फिर का कोऊ समझ न पाये काल नचत सौ आ गये।
बूढ़े सन्यासी को कुत्तों ने पूरो रन बन कर दओ।
संगी साथी आंख मींच लयी कुँवर बहुत सुख पाये।
मलकत मलकत हौदा बैठे लौट महल में आये॥
पलक झपकते नगर ओरछा फैली घरघर चर्चा।
घर मंदिर के दीपक बुझ गये बंद भई हरि अर्चा॥

सज्जन संत सती नर नारी भारी शोकमना रये।
नगर त्याग जावे के लाने निज निज जतन बना रये॥
राजा ने जब खबर सुनी तो नैनन नींद उड़ानी।
ब्यारू की तो कौन कहे नृप पियो न औंठन पानी॥
होतभ्याने महाराजा ने अपने दास पठाये।
गुरू द्विज मंत्री संत महाजन छोटे बड़े बुलाये॥
सिंघासन पर बैठ वीर सिंह नयनन नीर बहाओ।
बोले कहो सजा कैसी हो होकर निडर सुनाओ॥
हांथ जोर परजा सब बोली मालिक आप हमारे।
निज मुख करो न्याय आप खुद सब कछु जानन हारे॥
मंशा समझ सबई स्यानों की कुँवर तुरत बुलवा लओ।
जल्लादों को आज्ञा देकर खंभे से बंधवा दओ॥
फिर बोले ऐसे पापी को सजा कौन सी कहिऐ।
जैसी करनी करी धूर्त ने बैसी होनी चाहिऐ॥
ऐसो न्याय सुनत राजा को बिलख उठे नर नारी।
खबर सुनत महलन के भीतर मुरछित भई महतारी॥
लेकिन सत न्यायी राजा दिल तनक दया न आयी।
उनने धरम राज खाते में अपनी छाप छपायी॥
बेई कुत्ता लुहा कुँवर को तन रन बन करवा दओ।
सबकी नजरन एक धरी में जमपुर धाम पठा दओ॥
ऐसे सत न्यायी महाराजा भए बुंदेली धरा में।
कथा लिखी है वीर सिंघ चरितामृत मान जिरा में॥
कहत प्रताप पुत्र ज्ञानी के जैसो बनो सुना दओ।
'बुंदेली दरसन' पत्री में अपनो नाम लिखा दओ॥

- नल - नगर, रनेह (हटा)
दमोह (म.प्र.) मो. 975247288

बुंदेलखण्ड में किसानी के प्राचीन संसाधन

-डॉ. कुँजीलाल पटेल (मनोहर)

आज से कुछ दशक पहले तक ग्रामीण अंचलों में खेती किसानी, मेहनत-मजदूरी बंजी-व्यापार आवागमन आदि सब कुछ पारम्परिक रहा है। खेती किसानों के सारे संसाधन एवं उपकरण लकड़ियों के होते थे। लकड़ी और मिट्टी से मानवीय जीवन के सारे उपकरण बनाये जाते थे। हँसिया, खुरपी, कुल्हाड़ी, टोंगियाँ, झारौ, परबाई, करैया, लोइया, निहाई, थैंतौ, कुसिया, पाँस, साम, हल्ल, बरछी, भाला, कीला, गुलमेखा, बसूली, अरकसिया, फर्रका, चटकना, परात, दियट, आदि वस्तुओं में लोहे का प्रयोग होता था। उस समय मनुष्य की आवश्यकताएँ बिल्कुल सीमित हुआ करती थीं। इसीलिए लकड़ी, लोहा, और मिट्टी के सामानों के आधार पर जीवनयापन की सारी सुविधायें जुटाली जाती थी। कामकाज का जातियों के आधार पर श्रम विभाजन समाज में सामंजस्य स्थापित करता था।

ग्रामीण अंचलों में जीवन की तीन आवश्यकताएँ रोटी, कपड़ा और मकान मुख्य थी। रोटी मानें दाल रोटी, कपड़ा माने देशी उन्ना लत्ता और मकान मानें देशी कच्ची मिट्टी का खपरैल घर, इतनी आवश्यकताओं में ग्रामीण अंचलों पर आसानी से जिंदगी सादगीपूर्ण वातावरण में 'ना ऊधौ का लेना और ना माधौ का देना' के आधार पर आसानी से सुखापूर्वक गुजर जाती थी। स्थानीय लोगों के आपसी सहयोग से सारे कामकाज सम्पन्न हो जाते थे। शादी विवाह जैसे बड़े-बड़े कामकाज तन मन धन सहित आपसी जन सहयोग से सम्पन्न होते थे। उस समय सभी गांव आज की सहकारी संस्थाओं से लाख गुना अच्छे थे।

मनुष्य जन्म से ही अनुकरणवादी रहा है। आज से दो-ढाई दसक पूर्व से पारम्परिक खेती के संसाधनों का ही अन्त नहीं हुआ, बल्कि हजारों कलाओं और लाखों बुंदेली के शब्दों का हमेशा के लिये उन्मूलन भी हो रहा है। खेत-खलिहानों में हल, बखर, रहंट, तरसा, ढेंकुली, दाँय, कोपर, पचा, जुँआ आदि उपकरण कहीं-कहीं देखने को मिलते हैं। यह अन्दाजा सहज ही लगाया जा सकता है कि जितने उपकरण खत्म हो गये है, उनके सहायक पुर्जे कितने रहे होंगे ? जितने पुर्जे इन उपकरणों के होते हैं उनसे ज्यादा शब्द बुंदेली शब्दभण्डार से हमेशा के लिए विलुप्त हो चुके हैं। इसलिये आज जरूरत है ग्रामीण क्षेत्रों में अन्तिम सांसे गिन रहे वृद्धजनों से सुन-सुनकर, पूछ-पूछकर इन विलुप्त होते शब्दों को संकलित कर बुंदेली शब्दभंडार में सम्मिलित करने की। इस संबंध में मेरे एक छोटे से प्रयाशानुसार कुछ शब्दों की जानकारी प्रस्तुत आलेख के माध्यम से अन्य सुधीजनों को इंगित करने के लिए काफी होगी।

पारम्परिक खेती का प्रमुख तथा मुख्य उपकरण हर या हल है। यह लकड़ी का बढ़ई द्वारा बनाया जाता है। हल को खींचने के लिए उसे जुआँ से बांधा जाता है। हल के अन्य उपकरण हरेनी, गड़खील, गँगरौ, कँटि, कुसिया आदि मुख्य हैं। किसान इसी से अपने खेतों में जुताई-बुवाई का काम करता आ रहा है। खेती का दूसरा उपकरण बखर या बक्खर है जिससे खेत की बखराई या बखरनी की जाती है। बक्खर लोड़, डड़िया, हरैनी, दतुआ, पछखील, मुठिया, निचखुट, पाँस, कुरौरौ आदि पुर्जों से बनता है। खेत में कांस और दतुआ खत्म करने के लिए बखर से बखनी करना पड़ती है।

खेती बाड़ी की सिंचाई के लिए किसान तरसा, दौरिया, ढुकरू एवं रहँट या राँट का प्रयोग प्राचीन काल से करता आ रहा है। सार्वधिक पुर्जे रहँट में होते हैं। आज रहँट कहीं भी दिखाई नहीं देते। रहँट में भौंरी, भौरा, सिंगारे, बदरौट, गदेली, अहूँटन, बैंड़ा नांन, माझी, जेर चौइया, बखिया, ग्याँगरौ, गुनौ, माल, किलवारी, अरा, पई, भैंसा, मलमलौआ, कोंठा, गुर्रा, नंदन, साम, सामा, पनरा, पनरिया, तरौधा, घरियाँ, बकोड़ा, जूना, पचरिया, ओंगन, थमला, नीछर, बिरौल आदि इसके सहायक अंग होते है। रहँट के साथ ही उसके आंगिक शब्द आज के लोक प्रचलन से विलुप्त हो गये हैं। रहँट की भांति रबैया या गड़ैया भी सिंचाई का एक साधन था, जो केवल उथले कुँओ अथवा कुइयों में चलता था। कहीं-कहीं ऊंचाई पर स्थित पटियों तक पानी पहुंचाने के लिये गुड़ैया का प्रयोग करना पड़ता था।

किसान आवागमन तथा ढोबाकड़ोरी के लिए मुख्यत: बैलगाड़ी का उपयोग करता रहा। बैलगाड़ी तीन प्रकार की गड़वा, धंचरा गाड़ी और तंगड़िया बनाई जाती थी। गाड़ी में धुरा,भौंरी, परगज, चका या पहियाँ, पुठी, गर्रा आड़िया, पटिया, बांगर, ज्वाँरी, नक्की, उलरूआ, सामा, हल्ल, पट्टे, सैला, पचाई, जोत, पटरी, चखील, दाव या दबना, जाखरी या पाखरी, किरौ, उटना, आदि पुर्जे होते हैं।

जिस स्थान पर खेत से काटकर गहाई के लिए फसल

रखी जाती है उस जगह को खरयान, खरयाना, या खलिहान कहा जाता है। खेते से लाँक की पुरी या करपा बनाकर पहले खलियान में सैका लगाया जाता है। खरयान के बीच में लकड़ी की मैड़ी गाड़ी जाती है। उसके चारों और लाँक की पुरी खोलकर खड़ी करदी जाती है। मेंड़ी में गड़ाउन लगाकर बैलों के गले में बांधकर घुमाया जाता है, जिसे लाँक टोरना और दाय करना कहा जाता है। लाँग टूटकर बारीक भुसभुसी हो जाती है। फिर उसका ढेर करते हैं जिसे सेड़ लगाना कहते हैं। तिवारो लगाकर टुकनियाँ या उसेंड़ों में भरकर उड़ावनी करते है। भुसा अलग उड़ जाता है, अनाज अलग हो जाता है। फसल की कुछ गाँठे गेहूं के साथ रह जाती है जिसे डठरूवाई कहते हैं। बारीकभूसा लरोंसी तथा उससे मोटे ढेर को भुसा कहते हैं। फिर नाज की छरवाई होती है, इसके बाद अनाज का ढेर लगाते हैं, जिसे रास कहते हैं, भुसा का ढेर भुसौर कहलाता है।

बुंदेलखण्ड में ग्रामों के अधिकांश लोगों के घर कच्ची दीवारों के होते हैं। गीली मांटी के गोंदा बनाकर उनसे दीवार बनाई जाती है, जिसे चोय धरना कहते हैं। दीवारों के ऊपर बीचोबीच लंबा लकड़ी का लठा, उसके आड़े मध्य से साधने के लिए म्यारी रखी जाती है। घर का कम लंगा है तो एक ही म्यारी से काम चल जाता है। बीचोंबीच अतराई इसके बाद ऊपर से नीचे को ढलान बनाने के लिये कुरवा या कुरैया लगाई जाती हैं। दिवार के बाहर कुरैया को साधने के लिए लकड़ी के मरूआ तथा खपरछैंका वकौंड़े तथा कांस की जोरियों से बांधे जाते हैं। कुरैयों के ऊपर पतली-लंवी सिजवा, धवा, करधई, कैमा, धवई, आदि घरियों से घर की दोनों पलानी छाई जाती है। खपरा और घरियाँ या उल्टे खपरों के बीच गई होती है, जिससे पानी बहकर नीचे उरौतिया से गिरता है। इस प्रकार बनाता है किसान के गांव का मकान/घर को अच्छा बनाने के लिए छपाई, लिपाई और पुताई की जाती है।

जरूरत के अनुसार घर से लगकर दुगई, उसारौ, मोटी लकड़ी के थमला-थुनियाँ लगाकर या पीलपारे बनाकर माल, अतराई, कुरैया, बांधकर, उस पर खाडूखपरा छाकर बना लिये जाते हैं। आंगन को बखरी बनाने के लिए चारों ओर एक दो घर बनाकर बांकी जगह इकवाई-परदिया उठाकर उसकी दोई पलानी पर दो-दो, चार-चार खपरा छा दिये जाते हैं। द्वारों मे चौखट लगाकर किवारे, किवरियाँ आदि सुरक्षा के लिए लगा दिये जाते हैं। मालपानी धनधान्य रखने के लिये मिट्टी के बण्डा, कुठियाँ, डारियाँ, खौंडा पिटरे आदि बनाये जाते हैं। सभी के मुंहाने सकरे बनाकर उन्हें ढकने के लिए गीली मिट्टी के चीपनुमा ढकनों से मुहानों को ढक दिया जाता है।

किसानों की खेती बाड़ी सम्बंधी कार्यों में सहायता के लिए गांवों में परजाप्रथा का प्रचलन हैं। परजा कहलाने वाले लोग किसान के कामकाज में सहायक होते है। लकड़ी संबंधी कार्य बढ़ई, लोहा, संबंधी कार्य लुहार, मिट्टी के बर्तनों का कार्य कुम्हार, कपड़े धोने का काम धोबी, बुलाउआ टिरउआ तथा हजामत का कार्य खवास, पूजापाठ का कार्य पंडित, पानी भराई का कार्य ढीमर, बांस के बर्तनों का कार्य बंसकार, जूता, चप्पलो को कार्य चौधरी करते रहे हैं। ये सभी परजापौन या कमीन कहलाते हैं। कृषि उपज से उनको अनाज दिया जाता है। अनाज की मात्रा बिजवार अथवा जोत के हिसाब से दी जाती है। इसे कमनौत कहा जाता है। इसके अतिरिक्त तीजत्योहारों तथा शादी विवाह के अवसरों पर कमनौत के लोगों को सपरिवार निमंत्रित कर भोजन कराया जाता है तथा नेगचार में नामना देने के प्रचलन है। नामना में रूपयों, पइसा तथा वस्त्राभूषण दिये जाते है। लेकिन सहकारिता की यह व्यवहारिकता अब पूर्णत: खत्म हो रही है।

बुंदेलखण्ड का किसान साजसज्जा का बड़ा ध्यान रखता है, वह अपने बैलों को विशेष अवसरों पर खासतौर से सुसज्जित करता है, जैसे विवाह-बरातों, मेलों-ठेलों, तथा हकाई में सपरिवार जाने के पूर्व तँगड़िया या छोटी बैलगाड़ी को अच्छी तरह से सजाया जाता है। पटियों के ऊपर प्यार बिछाकर उसके ऊपर पाखरी बांधी जाती है। गर्मियों के गाड़ी के ऊपर घरौंदा के आकार में बांस की फंसटियाँ लगाकर उसके ऊपर कसकर तिरपाल बांधी जाती है।

किसान अपने बैलों को नहला-धुलाकर उन्हें नाथ, चौरासी, घुंघरू, गलगलियाँ, घंटा, घंटियाँ, मौरी, मोरपंखों के गजरा पहनाता है। रंगीन कपड़े का पलैंचा कांदौल से लेकर पिछले पांव के ऊपर तक लटकाकर बांध देता है। बैलों को सींग सजाने की परम्परा भी रही है। इस प्रकार किसान अपने बैलों को विशेष अवसरों पर नाँदिया की तरह सजाता है। बैलों के चारों पैरों के खुरों में नाल ठुकवाये जाते हैं जिससे बैल फिसलते नहीं है और खुर हमेंशा सुरक्षित रहते है।

बुंदेलखण्ड का किसान तीजत्यौहारो, सामाजिक तथा धार्मिक पर्वो को बड़ी शालीनता और तन्मयता पूर्वक पूरी आस्था से सपरिवार मनाता है। उसका पूरा जीवन, निष्कपट, ईमानदार, भाग्यवादी तथा परमसुखी और पूर्णत: आत्मनिर्भर रहता है। बुंदेली किसान के प्राचीन संसाधन अथवा उपकरण अव धीरे धीरे विलुप्त होने लगे है।

- 33/558, रेडियो कॉलोनी के सामने,
छतरपुर (म.प्र.) मो. 9425879773

सिक्कों एवं माचिसों में समेटे बुंदेलखण्ड की धरोहर

-रजनी नामदेव

कभी आपने देखा है 'बाइस रूपए का सिक्का' या 'पचपन पैसे का सिक्का' या फिर 'बिना मूल्य का सिक्का' जैसे फिल्म 'शोले में' अभिताभ बच्चन के पास था, नहीं, न ? तो आइये सिक्कों के संग्रह के शौकीन राना लिधौरी के पास। टीकमगढ़ निवासी साहित्यकार राजीव नामदेव 'राना लिधौरी' को सिक्के एवं माचिसे संग्रह करने का बहुत शौक हैं, उन्होंने लगभग 2500 विभिन्न प्रकार की माचिसों के संग्रह के साथ-साथ लगभग 500 प्रकार के विभिन्न नए एवं पुराने सिक्कों का भी संग्रह किया है। जिसमें 24 देशों के 70 सिक्के एवं 3 बहुमूल्य मिस प्रिंट सिक्के सहित देश के पुराने एवं नए 200 प्रकार के सिक्के उनके संग्रह में मौजूद है। विदेशों में चीन, अमेरिका, नेपाल, फ्रांस, इंग्लैंड, इटली, यू.एस.ए., यू.ए.ई. सिंगापुर, कोरिया, हाँगकाँग, डेनमार्क, इस्राइल, नीदरलैंड, न्यूजीलैंड, स्पेन, इटालिया, बेल्जीय, बेल्ग्रीफ, इसपाना, आदि विदेशों के सिक्कों के अलावा देश के पुराने मुगलकालीन एवं गजाशाही सिक्कों सहित चार आना 3 प्रकार के, दो आना 2, एक आना 1, आधा आना 3, पाव आना 5 प्रकार के सहित नये सिक्कों में पाँच रूपए के 7, दो रूपए के 13, एक रूपए के 21, पचास पैसे के 14, पच्चीस पैसे के 7, बीस पैसे के पाँच, दस पैसे के 14, पाँच के 6, तीन पैसे के 1, दो पैसे के 2, एक पैसे के 4 प्रकार के सिक्के है, इनके अलावा कुछ अनोखे मिस प्रिंट सिक्के जैसे 22 रूपए, 55 पैसे का सिक्का एवं 'बिना मूल्य का सिक्का' आदि भी उनकी संग्रह में शोभा बढ़ा रहे है। राना लिधौरी बताते है कि 'बिना मूल्य वाले सिक्का अभी भी उनके संग्रह की शोभा बढ़ा रहा है।

अनोखे बहुमूल्य 'मिस प्रिंट' सिक्कों के बारे में थोड़ी सी जानकारी :-

(1) 22 रूपए का सिक्का :- एक दो रूपए का सिक्का है जिस पर दो बार 2-2 छप गया है। इस प्रकार यह सिक्का पढ़ने में 22 रूपए आता है।

(2) 55 पैसे का सिक्का :- सन 1982 में ढला यह सिक्का यूं तो देखने में पाँच पैसे का सिक्का के आकार का है, लेकिन इसमें गलती से 55 पैसे (दो बार 5,5) छप गया है तथा सिक्के के दूसरी तरफ अशोक चिन्हन भी दो बार छप गया है।

(3) बिना मूल्य का सिक्का :- एक, एक रूपए का सिक्का है जिस पर कि कहीं भी उसका मूल्य अंकित नहीं है और दोनों तरफ ही अशोक स्तंभ का चिन्ह छपा है अर्थात सिक्के में 'टेल' नहीं है। यानि कि दोनों तरफ चित है पट्ट नहीं। जैसे कि फिल्म 'शोले' में अभिताभ बच्चन के पास था। फिल्म में तो वह सिक्का नकली था, लेकिन राना लिधौरी के पास इस वक्त वैसा ही असली सिक्का मौजूद है जो उनके संग्रह की अमूल्य धरोहर है। जिसे लोग दूर-दूर से देखने आते है।

राना लिधौरी के 'माचिसों एवं सिक्कों का संग्रहालय' देखने लोग दूर-दूर से आते है एवं उनकी मदद भी नये-नये सिक्कें एवं माचिसे देकर करते है। पूरे बुंदेलखण्ड में उनका यह संग्रहालय आकर्षण का केन्द्र बना हुआ है, राना लिधौरी के संग्रहालय एवं उनका इन्टरव्यू 'दूरदर्शन' एवं 'सहारा चैनल, ई.टीव्ही.म.प्र.आदि विभिन्न टी.व्ही. चैनल पर प्रसारित किया जा चुका है सैकड़ों पत्र-पत्रिकाओं में उनके सचित्र विवरण छपा है। इतनी अधिक संख्या में माचिसों एवं सिक्कों का संग्रह करके भी राना लिधौरी संतुष्ट नहीं है, वे चाहते है कि जिस प्रकार भारत के कोने-कोने की माचिसे उनके संग्रह की शोभा बढ़ा रही है उसी तरह विश्व के कोने-कोने के देशों की माचिसे भी उनके संग्रह में शामिल हो। वैसे कई विदेशी माचिसे इनके संग्रह में शोभायमान हैं। कई विदेशी पत्र-मित्र भी इनकी मदद कर रहे हैं। राना लिधौरी यह प्रयास कर रहे है कि उनका नाम ग्रीनीज बुक ऑफ वर्ल्ड रिकार्डस में शामिल हो जाये।

गौरतलब हो कि राना लिधौरी सुप्रसिद्ध कवि एवं शायर भी है जो कि म.प्र. के राज्यपाल डॉ. बलराम जाखड़ जी द्वारा सन 2005 में सम्मानित हो चुके है, दो काव्य संग्रह, अर्चना एवं रजनी गंधा प्रकाशित एवं 13 विभिन्न संग्रह प्रकाशन हेतु तैयार है। आकांक्षा, सृजन, संगम, अनुरोध और दीपमाला पत्रिकाओं का संपादन कर चुके है देश की 350 से भी अधिक लब्ध प्रतिष्ठित पत्र पत्रिकाओं में लगभग 3000 से भी अधिक रचनायें छप चुकी है। आप म.प्र. लेखक संघ के जिलाध्यक्ष भी है एवं टीकमगढ़ जिले से प्रकाशित एकमात्र साहित्यिक पत्रिका

'आकांक्षा' के संपादक है। वर्तमान में आप टीकमगढ़ नगर में नई चर्च के पीछे, शिवनगर कॉलोनी में निवास कर रहे है माचिसों एवं सिक्कों का संग्रह साहित्य लेखन एवं टीकमगढ़ जिले का नाम भारत ही नहीं वरन विदेशों तक में रौशन कर रहे है।

उनका पूरा पता मैं नीचे लिख रही हूँ ताकि लोगों उनसे मिलने एवं संपर्क करने में सुविधा हो। पता है :- राजीव नामदेव 'राना लिधौरी' (संपादक "आकांक्षा" पत्रिका) अध्यक्ष म.प्र. लेखक संघ, नई चर्च के पीछे, शिवनगर कॉलोनी, कुवंरपुरा रोड, टीकमगढ़ (म.प्र.) उनका मोबाइल नम्बर 9893520965 है। आप उनसे समय लेकर कभी भी मिल सकते है एवं उनका यह अनोखा संग्रहालय देख सकते है।

- C/o श्री सी.एल. नामदेव
नई चर्च के पीछे, कुँवरपुरा रोड,
शिवनगर कॉलोनी, टीकमगढ़ (म.प्र.)

पैला की पंगत की रंगत

–शंकर दयाल खरे 'शंकर'

पैलाँ की पंगत की रंगत,
भूलत नईं भुलाई।
दौना-पतरी की हरयाई,
मोरे मनें समाई॥

कैउ सैकरा जैंबे बारे,
पंगत में बैठत ते।
बूड़े-बड़े प्रतिष्ठाबारे,
कभउँ-कभउँ ऐंठत ते॥
उनखाँ सोऊ मना लेत ते,
कर-कर कें मनुहाई।
पैलाँ की पंगत की रंगत,
भूलत नईं भुलाई॥

आँरा-आम मिरच और चटनी,
कोउ "रामरस" परसें।
पानी पीबे गड़ईं लियाबें,
कोऊ अपने घर सें॥
पापर, लुचईं, कचरियाँ परसें,
औ, पचमेर, मिठाई।
पैलाँ की पंगत की रंगत,
भूलत नईं भुलाई॥

सूकी-रसेदार तिरकारी,
कोऊ लै-लै आवें।
लैंन लगी परसन की, परसा
जिनसें परसत जावें॥
जैबेबारे जैंउत-जैंउत,
करत जाँय बड़वाई।
पैलौं की पंगत की रंगत,
भूलत नईं भुलाई॥

सन्नाटे-सँग साँन-साँन कें,
सबइ स्वाद सें खावें।
बूड़े और बिना दाँतन के,
फिर-फिर ओइ मँगावें॥
दो-दो दिन लौ हौंय पंगतें,
फिर कउँ होय बिदाई।
भूलत नईं भुलाई॥

पंगत बैठत उठती बेराँ,
बजत हतो रमतूला।
अपनों नेंग माँगबे खातर,
मचल जात तो दूला॥
दूलै दै-दै नेंग मनाबै,
बिटियाँ की भौजाई।
पैला की पंगत की रंगत,
भूलत नईं भुलाई॥

मँड़वा नैंचें दूला बैठो,
निरख रईं सब नारी।
भीतर गाँय सुरीले सुर में,
जैंवनार कीं गारीं॥
हँसी-मसकरी खूबइ होबै,
ऐंन होय पौंनाई।
पैलाँ की पंगत की रंगत,
भूलत नईं भुलाई॥

समीप अवस्थी बंगला,
दूल्हाबाबा मार्ग, नौगाँव,
जिला-छतरपुर (म.प्र.)
मो. 9407335369
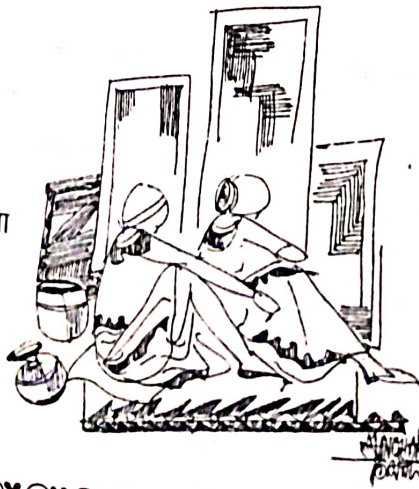
कार्यक्रम का शुभारंभ करती
सी.जे. मा. सुश्री सुषमा खोसला

कार्यक्रम शुभांरभ के अवसर पर
मंचासीन
श्री जीवनलाल तंतुवाय, (अध्यक्ष न.पा.)
श्रीमति उमादेवी खटीक (विधायक)
मा. सुश्री सुषमा खोसला (जि.स. न्यायाधीश)
श्री विष्णु पाठक, श्री कुं. पुष्पेन्द्र सिंह हजारी

बुंदेली मेला के अवसर पर
उपस्थिति म.प्र. शासन के
मंत्री मा. श्री जयंत मलैया जी
एवं अन्य अतिथिगण

मनलुभावन
मयूर नृत्य

बुन्देलखण्डी नृत्य
राई की प्रस्तुति

बुन्देलखण्ड का
लोकप्रिय
राई एवं अश्व नृत्य

परिषद के बढ़ते कदम

– सुरेश यादव

हमारे पूर्वजों ने ऋषि-मुनियों ने ज्ञानियों ने आज के युग में सबसे सुखी इंसान उसी को माना है जिसके पास निरोगी काया हो। यह निरोगी काया स्वस्थ वातावरण रहन-सहन एवं स्वस्थ विचार धारा से निर्मित होती है।

स्वास्थ्य के लिये तीन बाते नितांत आवश्यक होती है- (१) स्वच्छता पूर्ण वातावरण (२) सुगम आवागमन के साधन, (३) स्वच्छ विचार धारा। इन तीनों बातों के लिये उपर्युक्त साधन जुटाना स्थानीय निकायों का प्राथमिक कार्य होता है जिसके अन्तर्गत उन्हें अपने क्षेत्रान्र्नात समुचित सफाई व्यवस्था, पेयजल आपूर्ति, प्रकाश व्यवस्था एवं अवागमन के साधन जुटाना पड़ता है, जिसके लिये उन्हें अपनी निकाय अर्न्तगत निवासियों से इन सुविधाओं के ऐवज में टैक्स से राशि जुटाना पड़ती है, वहीं शासन से आर्थिक सहयता भी लेना होती है।

ऐसी ही कार्य शैली से नगर पालिका हटा ने अपने कार्य अवधि वर्ष 2009-10 के अन्तर्गत किये गये कार्यों से हटा नगर के सजाने का प्रयास किया है जिसमें लगभग उनको अनुकूल सफलता भी उपलब्ध हुई, जिससे नगर में परिषद की छवि भी उभर कर लोगों के समक्ष आई है जो नगर विकास में उज्जवलभविष्य का घोतक समझ आता है प्राप्त जानकारी के ज्ञात हुआ कि परिषद ने इस वर्ष लगभग 90 लाख रू. की लागत से विभिन्न वार्डों में लगभग 70 सी.सी. रोडों का निर्माण कर लोगों को सुगम आवागमन मुहैया कराया।

नगर में अनुचित पेयजल उपलब्ध कराने हेतु नगर (14) ऐसे स्थानों पर पाइप लाइन विस्तार कर पेयजल मुहैया कराया टैंकरों से पानी नहीं पहुंच पाता या ऐसे स्थान पर भीषण गर्मी में लोगों को पेयजल उपलब्ध कराया। वहीं भीषण गर्मी में जब प्रमुख जल श्रोत सोनार नदी में जलस्तर घट रहा था ऐसे समय में हारट नहर से इंटके वेल कुंड तक अस्थाई नहर के माध्यम से पानी लाया जाकर हटा नगरवासियों को पेयजल उपलब्ध कराया गया।

पेयजल आपूर्ति में निरंतरण बनाये रखने के लिये जहाँ परिषद पदाधिकारी एवं पार्षद सतत प्रयत्न शील रहे वहीं जनता ने भी परिषद का भारी सहयोग किया जो नगर विकास में परिषद एवं जनता का आपसी ताल-मेल की सराहनीय कदम कहा जा सकता है।

परिषद ने अपने आय के सीमित साधनों को ध्यान रखते हुये आम जन पर बिना कोई टैक्स का दवाव देते हुये नगर की प्रकाश व्यवस्था को सुदृढ़ बनाते हुये नगर के हर क्षेत्र को प्रकाशवान करने का अथक प्रयास किया। आज नगर में लगभग 1000 विद्युत पोलों के माध्यम से सोडियम मरकरी, सोडियम व्हेयर लैम्प. सी.एफ.एल. वल्व आदि से नगर को प्रकाशवान किया जा रहा है।

परिषद के प्रमुख कार्यों में नगर की नियमित सफाई व्यवस्था को सुचारू रूप से चलाना भी है जिसमें लगभग ८० सफाई काम गार नगर में झाडूलगाना, कचरा उठाना, नाली सफाई कार्यों क़ो नियमित रूप से अंजाम दे रहे है। जिससे नगर की हर गली साफ दिखती है। नगर में गंदे पानी की निकासी हेतु नलियों का उत्तम व्यवस्था की आवश्यकता महसूस की जा रही है इस कमी को भविष्य में नगर का सर्वे कराया जाकर नये सिरे से नालियों का निर्माण कार्य कराया जा सकता है।

नगर विकास की दिशा में परिषद के उल्लेखनीय कार्यो में -

(1) गौरीशंकर जी वार्ड में मंगलभवन निर्माण
(2) सभामंच निर्माण
(3) सामुदायिक भवन निर्माण
(4) चार सुलभ कॉम्पलेक्स निर्माण
(5) शमशान घाट में रोड एवं बाउन्ड्री वॉल निर्माण
(6) आंगन बाड़ी केन्द्र निर्माण
(7) आई.डी.एस.एम.टी. के अन्तर्गत बड़े नगर में शॉपिंग कॉम्पलेक्स, मीट मार्केट में शॉपिंग कॉम्पलेक्स एवं पेट्रोल पंप के पास कॉम्पलेक्स निर्माण।
(8) अंधियारा बगीचा में नेहरू बाल उद्यान एवं नया पार्क निर्माण
(9) सुनार नदी पर अस्थाई वांध निर्माण
(10) बाढ़ में क्षतिग्रस्त घाटों की मरम्मत

(11) सात नगर प्रवेश द्वारा निर्माण
(12) चण्डी जी मंदिर के पास स्व. बाबूलाल बजाजप्रवेश द्वार निर्माण
(13) कार्यालय भवन गेट निर्माण
(14) ठंडा पानी प्रदाय हेतु 6 मशीन क्रय एवं सिन्टेक्स टंकी क्रय
(15) संजय वार्ड में पटैल धर्मशाला निर्माण
(16) रामगोपालजी वार्ड में तंतुवाय धर्मशाला भवन निर्माण
(17) मंगल भवन के पास बाउन्ड्री वॉल निर्माण
(18) महारानीलक्ष्मी बाई कन्या शाला में कमरे निर्माण
(19) नेहरू बाल उद्यान के पास मानस भवन निर्माण
(20) गौरीशंकर मंदिर के पास नवीन वाचानालय स्थापना
(21) मंगल भवन में कमरों में शेड, गद्दा, पलंग, कूकर डाइनिंग टेबिल की व्यवस्था
(22) नगर के पन्द्रह वार्डों के लिये हाईमास्क लाइट
(23) नवोदय वार्ड में शालिंग राम साहू के मकान के पास सामुदायिक भवन निर्माण

इसके अतिरिक्त प्रस्तावित प्रमुख कार्य इस प्रकार है

(1) नगर के मध्य में बह रहे गंदे नाले का पक्का का... मान. मुख्यमंत्री की घोषणा अनुसार
(2) स्टेडियम निर्माण मान. मुख्यमंत्री जी की घोषणानुसार
(3) नदी तट पर नाव घाट से भातन घाट तक लिंक रो... निर्माण
(4) गौरीशंकर वार्ड में सिरोठिया जी के मकान से दमोह ... मार्ग तक लिंक रोड निर्माण

-सेवानिवृत्त- मुख्यलिपिक एवं लेखापाल
हटा (म.प्र.)
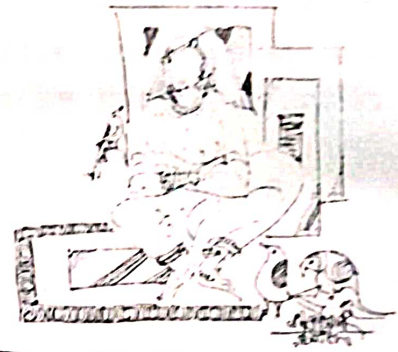
का हुइहै पाछिताने

–श्रीमति छाया तिवारी

अम्मा भौजी ननद जिठानी देवरानी से कानें।
अपनी देश रीति मरजादा हमखों नई मिटाने॥

ईश्वर के दये लरका मौड़ी लाड़ प्यार तो करने।
उनको जीवन बिगर न पावे ऐंसी शिक्षा देने॥
अँगरेजी है भौत जरूरी पढ़वे तो पौंचाने।
लेकिन ध्यान राखने इतनो होवें न बेगाने॥
अपने संगे बैठ बैठ खों फिल्में नईं दिखाने।
अपनी देशरीति मरजादा हमखों नई मिटाने॥

अँगरेजी पहिनावो आ गयों जो पैरन नईं देने।
मोबाइलपै इकले दुकले बात करन नईं दैंने॥
स्यानी बिटियाँ पतरे उन्ना कस खें जब निगती हैं।
सांचे मन से तुमई बताओ वे कैंसी लगती हैं॥
दुर्गा लक्ष्मी हमें बनाने मोय नईं बनवाते।
अपनी देशरीति मरजादा हमखों नईं मिटाने॥

खान पान तो हिरा गओ है बोली सो सी गई हैं।
व्योहारन की झलक अनोखी पूरी खो सी गई हैं॥
राम रहीमी दुआ सलामी इनसे चिढ़ से रये हैं।
समुद पार के कारे रंग में पूरे रंग से रये हैं॥
बुंदेली की शान निराली ताकत सें लौटाने।
अपनी देशरीति मरजादा हमखों नई मिटाने॥

जैसो अन्न मन्न हो वैसो पानी जैसी बानी।
जैसो रीति प्रीति हो वैसी कै गईं जेठीं स्यानी॥
जो हम अबै सँभल न पाये कैबे खों रै जैहैं॥
अपनी बनी बनाई चिनारी डिबिया सी बुझ जैहें।
शीतल छाया मिटा दई तो का हुइ है पछिताने।
अपनी देश रीति मरजादा हमखों नई मिटाने॥

-नल - न...
स्नेह (हटा) दमोह (म.प्र.)
मो. 998144...

हमारी संस्कृति हैं लोक - भजन

- डॉ. कामिनी

लोक-भजनों का लोक जीवन से प्रगाढ़ रिश्ता है। लोक-भजनों की प्रेरणा का सीधा-सीधा संबंध अनुभूति से है और यह अनुभूतियाँ समाज में भावना, सरसता, करूणा और संवेदना की सृष्टि करती है। लोक-भजन जन-जीवन में घुले-मिले रहते है। लोक-जीवन में आस्था का स्थान सबसे ऊँचा है। लोक-भजन उपासना की एक पद्धति है। कबीर से लेकर वर्तमान तक यह परिपाटी चली आई है। इसमें साधक का मन अपने आराध्य के चिंतन में समर्पित हो जाता है। 15 वीं शताब्दी में कबीर ने लोक को केन्द्र में रखकर निराकार ब्रह्म की आराधना की। कबीर के भजन लोक-भाषा में समाज में आज भी प्रचलित हैं। कबीर की दृष्टि में दया, धरम और ब्रह्म का ध्यान ही सार तत्व है-

अरे हाँ रे बंदे, दया तो राखो मन में।
दया-धरम और भजन बंदगी, राम जपाकर मन में॥
काठ की नांव समुद्र में डारी, उतर जात पल छिन में।
कौड़ी-कौड़ी माया जोरी, जोर धरी बर्तन में॥
सुख संपत सपने की माया, चली जात पल छिन में।
कहत कबीर सुनो भई साधो, रे गई मन की मन में॥

कबीर के पुत्र कमाल ने भी ईश्वर के नाम की चूनर ओढ़ने के लिए संकेत किया है-

काहे ना धुवाई चूनर, काये ना धुवाई रे।
बालापन की मैली चूनर, प्रथम दाग लग जाई रे।
अंत कपट के दाग न छूटे, धुबियन के फिर आई रे।
राम-नाम के साबन कर ले, कृष्ण नाम दरयाई रे।
घूंघट के पट खोल बहुरिया, करम रेख मिट जाई रे।
वृद्ध-भयेउ तन डोलन लागे, आयो गमन नगचाई रे।
चालनहार खड़े दरवाजे, करनी को पछताई रे।
कहत कमाल कबीर के बालक, दृग अंजन दै आई रे।
सत नाम की ओढ़ लै चूनर, चली अकेली जाई रे।
काये ना धुवाई चूनर, काये ना धुवाई रे॥

हर अंचल के अलग-अलग भजन है। इसी आँचलिक परंपरा में बुंदेली फागों और चौकड़ियों का अलग-अलग चमत्कार है। चौकड़िया फाग-रूप इतना लोकप्रिय हुआ कि बुंदेलखण्ड के गाँव-गाँव में उसके स्वर गूंज उठे और लोक मन में ऐसी हिलोर उठी कि लोक का तन-मन सराबोर हो गया। ईसुरी, ख्यालीराम और गंगाधर व्यास का वृहत्त्रयी लोक प्रसिद्ध है।

ईसुरी - ईसुरी बुंदेलभूमि की अनमोल निधि हैं। ईसुरी का जन्म चैत्र सुदी 10 संवत 1898 वि. के झाँसी मऊरानीपुर के निकट मेंढ़की गाँव में हुआ था। अपने काव्य में इन्होंने प्रेयसी के लिए काल्पनिक नाम 'रजऊ' का प्रयोग किया है। रजऊ का प्रेम ही अंत में राधामय हो गया। ईसुरी का कृतित्व फाग के फड़ों का अजस्त्र जीवन स्त्रोत सिद्ध हुआ। ईसुरी ने श्रृंगार गीत, भक्ति ज्ञान, वैराग्य आदि विविध विषयों की फागें लिखी हैं। ईसुरी विन्द्रावन में जाकर राधा-कृष्ण का भजन करनें के लिए मन को उद्बोधित करते हैं-

चल मन विन्द्रावन में रइये, कृष्ण राधिका कइये।
झाड़ूदार होय गोकुल के, गैलें साफ बनइये॥
जे दुआरे देवतन खाँ, दुरलभ, तिनें बुहारू दइये।
बचे खुचे ब्रज जन के टूंका, भाँग माँग कें खइये॥
'ईसुर' कअत दरस के लानें, का का मजा दिखइये।

गंगाधर व्यास- गंगाधर व्यास का जन्म 1899 वि. को छतरपुर में हुआ था। सिर पर साफा, मिरजई से ढका बदन, हल्के गुलाबी रंग की धोती तथा पैरों में बुंदेली पनहियाँ इनके प्रमुख प्रसाधन थे। मऊरानीपुर निवासी श्री बालमुकंद दर्जी इनके कविता गुरु थे। व्यास जी कवित्त, शेर, ख्याल और फागे प्रचलित छंदोंमें लिखते थे। छतरपुर, चरखारी, मऊरानीपुर, महोबा, बिजावर, आदि नगरों में उनकी रचनाओं के मंडल थे। नटनागर कृष्ण की मनोहारी छवि देखकर गोपियों पनघट की सुध भूल गई-

झाँकी देखी नागर नट की।
सुधि भूली पनघट की॥

भाल विशाल तिलक केशर कौ, दमकन मोर मुकुट की आनन अमल कमल दृत्य लोचन, चितवन चंचल खटकी, अब नई और नजर में भावै, मन मोरे में अटकी, गंगाधर मोहन में हम पै, अजब मोहनी पटकी, झाँकी देखी नागर नट की॥

ख्याली राम- वृहत्त्रयी के तीसरे कवि ख्यालीराम जी थे। ये ग्राम अकठोंहा चरखारी निवासी श्री रामसहाय जी के

पुत्र थे। उनका जन्म 1906 वि. में एवं मृत्यु 1961 वि. में हुई। फाग सहित्य में इन्होंने श्रृंगार रस का पूर्ण परिपाक तो किया ही है, भक्ति और ज्ञान की गंगा भी बहाई है-

ऊधौ मन मोहन ना आवें, निठुर भये सर सावें।
हमकों जोग, भोग कुब्जा को, जा नई राय चलायें।
जब से गये खबर ना भेजी, नई संदेश पठावें।
आपुन जाय द्वारका छाये, कुब्जा कंठ लगावें।
कवि ख्याली इतनी ब्रजवाला, मृग छाला कों पावै॥

पं. परशुराम पटैरया- बुंदेलखण्ड जनपद के गाँव गाँव में अन्य लोक कवि हुये है। इनमें पं. परशुराम पटैरया ने श्रीनगर महोबा में जुझौतिया ब्राह्मण कुल में जन्म लिया था। इनकी कुछ चौकड़ियाँ बहुत प्रसिद्ध थी। जिनमें फड़ में गाये जाने योग्य फागें भी हैं।

रघुवर राखौ लाज हजारी, आये सरन तुम्हारी।
औगुन अमित भरे अघ तन में, कपटी कुटिल अनारी।
सो औगुन प्रभु लेत न जनके, ऐसे है हितकारी।
समदरशी है नाम तुम्हारौ, आरत हरन खरारी।
भालु सुकंठ विभीषण उबरे, गौतम की तिय तारी।
परसराम निज दरसन दीजे, अपनों जान भिकारी।

सूरश्याम तिवारी (चंद्रसखी)- लोक कवि के रूप में सूरश्याम तिवारी सखी सम्प्रदाय के थे। ये मोहल्ला पुराना गंज पटानपुरा राठ के निवासी थे। इनका जन्म 1914 वि. को हुआ था तथा मृत्यु 1973 वि. में हुई थी। इन्होंने अपनी रचनाओं में राठ को राधापुर के नाम से अभिहित किया है। ये मोटी खादी पहिनते थे और गुड़ का प्रयोग करते थे। आपने चारों धाम की यात्रा पैदल की थी। इनकी मन आनंद करन फाग पुस्तक में सूरस्याम चन्द्रसखी तथा त्रमुनादास के नाम की फागें और भजन संकल्पित हैं। पर ये यब इन्हीं की रचनायें है। चन्द्रसखी के नाम की भी फागें मिलती है। चन्द्रसखी स्त्री है या पुरूष ? कोई अभी तक निश्चित रूप से नहीं कह सका। विद्वानों ने इस तथ्य को स्पष्ट किया है कि सूरे (सूरश्याम तिवारी) ही चन्द्रसखी थे। इन्होंने (1) अधर फाग, (2) मन आनंद करन फाग और, (3) प्रात विलास, तीन पुस्तकें लिखी। ये सभी फागें श्रृंगार, भक्ति और शांत रस से ओत-प्रोत हैं। इनकी झूलना की फागें भी प्रचलित हैं। खड़ी फागें भी चन्द्रसखी ने लिखी हैं-

आये न श्याम सखी द्वारे में हाड़ी रई केसर घोरें।
कुमकुम वीर अवीर धरें रई, लाल गुलाबी रज जारें।
तरसत रई उनें तकवे कों, नेह भरी दोऊ हग कोरें।
करती भेंट गरे लग-लग कें, जेई लालसा रई मोरें।
चन्द्रसखी मोहन सें कइयो, प्रीति लगाकें ना टोरें।

बहुत लंबी परंपरा है लोक कवियों की। महारानी रूपकुंवर, पं. घनश्यामदास पांडेय, भुजवलसिंह ठाकुर हीरा बाई आदि के नाम विशेष उल्लेखनीय हैं।

महारानी रूपकुंवर- ये चरखारी नरेश स्व.महाराज मलखान सिंह की पत्नी थीं। इनका जन्म सैलया दतिया में वि. 1933 के लगभग तथा मृत्यु चरखारी में 2008 वि. में हुई थी। महाराज मलखान सिंह स्वयं एक अच्छे कवि थे रानी साहिबा का वैधव्य जीवन बड़ी साधनाओं का जीवन रहा है। इनकी भजनमाला नाम की पुस्तक वि. 1965 में प्रकाशित हुई थी।

रसना राम कौ नाम नगीना, मन, मुंदयै में हीना।
निराकार निर्वान से खोद्ये, ऐसी थान कहीं ना।
नेह दिवाल देहकर दीपक, कवहुं न परत मलीना।
रूपकुंवर की मान सिखावन, तन मन धन सब दीना।

पं. घनश्यामदास पांडेय- पं.घनश्यामदास पांडेय का जन्म मऊरानीपुर झाँसी में वि.1943 में तथा मृत्यु 2010 में हुई थी। इनके पुत्र नरोत्तमदास पांडेय ओरछा स्टेट के राजकवि थे। ये काली के उपासक थे। इनके पुत्र ने आत्महत्या की थी। बाद में उसी के शोक से इन्होंने भी आत्महत्या कर ली थी। भक्ति की भावना इनके काव्य में है-

अँखिया अब ना रईं, तरवारें ना पिस्तौल प्रहारें।
हरि-हरि कह हम जग नारिन कों, माता रूप निहारें।
नेह भरे जननी हरि नैंना, मो पै इमरत ढारें।
निखरत आप हगन कों हम तौ नजर पगन पै डारें।
कवि घनश्याम मोक्षदाता हरि, मोर जनम सुधारें॥

हीराबाई- इनका जन्म वि. 1959 में महोबा के सुप्रसिद्ध रईस पं. मुकुन्द लाल तिवारी के यहां हुआ था। विवाह के अवसर पर स्त्रियों द्वारा अश्लील गीत गाये जाते थे। इन्होंने सर्वप्रथम इस संस्कार के हर अवसर के सुन्दर गीत लिखे जिन्हें बड़ा सम्मान मिला। बुंदेलखण्ड के कोने-कोने में इनके गीत गाये जाते हैं।

हमरौ संकट काट मुरार, तुम्हारी है बलिहारी।
सुरपत कोय किया ब्रज ऊपर, सब तुव सरन पुकारी।
ब्रजवासिन तुम लियौ है, गोवर्धन गिरधारी।
ज्यों गज हर सुनी जदुनंदन, त्यौं हीरा की वाटी।

ब्रह्मानंद का यह भजन लोक समाज में प्रचलित है-

दीनदयाल दया करके, भव सागर से कर पार मुझे।
नीर अपार न तीर दिये, मम धीर धरौ कैसें मन में।
मेरी नैया डुबाय रई मम में सरनागत जान के तार मुझे।
छूट गया सबसाथ मेरा, कुछ हाथ में जोर रहा भी नहीं।
अब नाथ न देरी लगाओं जरा निज बांह पसार उबार मुझे।
तेरा नाम जहाज बड़ाजग में सब भेद पुरान बतावत हैं।
ब्रह्मानंद जपै दिन रात सदा, प्रभु कीजिए पार किनार मुझे॥

लोक-भजन हमारी संस्कृति हैं। साधना का आधार है। ईश्वर से लौ लगाने का साधन। उपासना की सीढ़ी। आराधना और समर्पण का भाव। जीवन का यथार्थ बोध कराते हैं भजन। भजन का भाव बड़ा व्यापक है। जिसमें आत्मा, परमात्मा हो जाती है। मन ब्रह्ममय हो जाता है। कंठ ईश्वर भक्ति में लीन हो जाते है। लोक की, अंचल की अमूल्य निधि है ये लोक-भजन।

- प्राध्यापक एवं अध्यक्ष
हिन्दी शासकीय गोविंद महाविद्यालय,
सवढ़ा, जिला, दतिया (म.प्र.)
मो. 475682

बुंदेली संस्कृति

- महबूब अली

मेला लगो बुंदेली हटा उपकाशी में जो देखो जू।
आव बुलावै ढपला सबखों टेरत है रमतूला जू।
छप्पन भोजन बने बुंदेली भर्त गकरियाँ घी चुपरीं।
खुरमा बतियां दरिया पापर, थुली महेरी डुबरी जू।
लपटा, खीर, भूजा और गूंजा, मालपूआ सन्नाटो है।
दरभजिया जुंडी की रोटी मिरचा दयो भन्नाटो जू।
पनौ रायतो फरा सिमईया, लाई, तिली के वड़ुआ है।
लुचई दूध को गौरीशंकर रोजई भोग लगा रये हैं।
टोड़ल बांके गजरा कर धोनी खंगोरिया वूंदा पुंगरिया है।
धुतिया पो लका ओड़ पिछोरा पैला ओड़ी फरिया है।
कुरता परदनी करिया टोपी है करिया पैरो झऊआ।
हात में डलिया खचऊं पनईयां जाय वीनवे मऊआ जू।
मऊआ चना को करें कलेवा हांत में बैल कंदा पै हर।
धरें मूंड पै गड़ई कलेवा हारै जांय घरवारी जू।
बुला नचनारी राई होवे लम्बरदार के दरवाजें।
नाऊ पलीता ले संग नाचे होंय रात भर फागें जू।
कोंड़ लगे मुकद्दम बखरी हुक्का चिलम गुड़ाखू चले।
अटका किसा कहानी चौपर हों आला की तानें जू।
गदाफद चर्रा रेंकचुआ गिल्ली डन्डा कुस्ती तानें जू।
चानमुन्नी छुई आँख मिचौनी खेल रोज पुतरियाँ जू।
गपई समुद्र चपेटा अट्ठू कौड़ों की खेलें कुईय्या जू।
फुग्गा बांसरी भौंरा पपीरा खेले रौज पुतरियां जू।
बऊ मतारी कक्का दद्दा दाऊ दावजू बोलत ते।
अब तो मम्मी फादर सिस्टर नाम मुलक के हो गये जू।
राम सलाम गुड मार्निंग हो गई भजन गम्मत भूल गये।
पप्पू डब्बू बंटी पिंकी मुलिया लखन हिरा गए जू।
बुंदेलखण्ड की रीत छोड़ गई नई फैशन को छाओ राज।
रीत बड़ी महबूब बुंदेली सब रीतों की है सरताज।

-सेवानिवृत्त प्रधान पाठक
बटियागढ़ (दमोह) म.प्र.
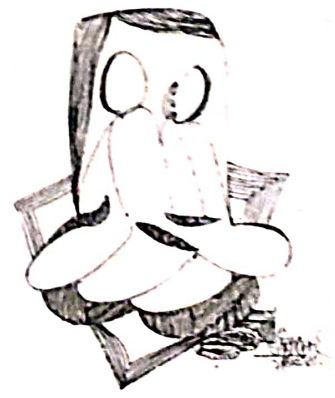
बुंदेली साहित्य में श्रीकृष्ण प्रिया राधा

-डॉ. श्रीमती गायत्री वाजपेयी

भारत वर्ष के इतिहास में मध्ययुग के नाम से जिसकाल खण्ड को संबोधित किया गया है, वह एक प्रकार से धार्मिक, सामाजिक और राजनैतिक उथल-पुथल का काल कहा जा सकता है मुसलमान शासकों का आगमन, सूफी संतों का मस्तमौलापन, फक्कड़ साधुओं के निगुर्ण दर्शन ने भक्ति आन्दोलन की गति देकर और अधिक सशक्त बनाया। उपासना की सगुण एवं निर्गुण पद्धतियाँ विकसित हुई। भगवान के सगुण रूप को लेकर रामाश्रयी और कृष्णाश्रयी धारा प्रभावित हुई, जिसमें ब्रह्म, माया जीव और जगत का दर्शनिक रहस्य भक्ति पदावली में व्याख्ययिज किया गया। आचार्यो ने राधा और कृष्ण की भक्ति को शास्त्रीय रूप देना भी इसी भक्ति काल में प्रारंभ किया, जिसे कालान्तर में लोककवियों ने अपने काव्य में अधिक पुष्पित और पल्लवित किया। राधा 'राध' संसिद्धौ धातु से बनता है। इसी प्रकार सान्त 'राधस' शब्द भी 'राध' धातु से ही बनता है। 'राध' धातु 'सर्वधातुभ्योडयन' उणादि सूत्र में अस हो जाने से राधस ऐसा रूप बनता है, उसके तृतीया के एकवचन में राधसा ऐसा बन जाता है अर्थात राधा शब्द के तृतीया के एकवचन का राधया और राधस शब्द के एक वचन का रूप राधसा होता है, परंतु दोनों का एक ही अर्थ है। श्रीभद् भागवत पुराण में स्पष्ट उल्लेख है-

अनयाऽऽराधियों नूनं भगवान हरिरीश्वर:।
यन्नो विहाय गोविंद: प्रीतो यामनयद् रह:॥[1]

गर्ग संहिता में कहा गया है कि राधा कृष्ण की आराध्य हैं अथवा कृष्ण इनके आराध्य हैं इसलिए से राधा कहलाती हैं। यथा-

श्री कृष्णेति कृष्णेति गिरा वदन्त्य: श्रीकृष्णपादाम्बुजलग्न मानसा:,
श्रीकृष्णरुपास्तु वभूठरंगना, श्चित्र न पेश्यस्कृत कीटवत्॥[2]

जीवगोस्वामी जी ने अपनी वैष्णतोपिणी टीका में अत्यंत सुन्दर टीका करते हुए लिखा है कि 'राधयति आराधयतीर्त राधा राधेति नामकरणाद्यद् शितं अर्थात जो आराधन करे राधा कहते हैं।[3]

देवी भागवत पुराण के अनुसार सर्वेश्वर प्रभु की सम्पूर्ण कामनाओं को सिद्ध करने के कारण श्री स्वामिनी जी का नाम श्री राधा है। यथा-

राघ्नोति सकलानकाभाम् तस्माद्राधेति कोर्तिता।[4]

'ब्रह्मवैवर्त पुराण' में राधा शब्द की व्युत्पत्ति अनेक प्रकार से वर्णित है। प्रकृतिखण्ड में 48 वें अध्याय में यह उल्लिखित हैं कि अखिल भुवनपति महारासेश्वर निकुंज प्रिय श्रीकृष्ण रास में राधिका जी के धवनकर्म का स्मरण करते हैं इसलिए वे उन्हें राधा कहते हैं।[5]

'ब्रह्मवैवर्त पुराण' में ही इनकी उत्पत्ति दैवो मानी गई है। वह परमात्मभूम श्री कृष्ण के अर्धाङ्ग से प्रकट हुई हैं।[6]

'ब्रह्मवैवर्त पुराण' के अन्तर्गत ही 17 वें अध्याय में श्री कृष्ण जन्मखण्ड में श्री राधारानी के षोडस नाम कहते हुए भगवान श्रीमन्नारायण देवर्षि नारदजी से कहते हैं कि राधा शब्द में 'धा' का अर्थ है संसिद्धि (निर्माण) तथा 'रा' दान वाचक है। जो स्वयं निर्वाण प्रदान करने वाली है; वे ही राधा कही गई हैं-

राधेत्येवं च संसिद्धा राकारो दान वाचक:।
स्वयं निर्वाणदात्री सा सा राधा परिकीर्तित॥[7]

श्रीशांतनु विहारी द्विवेदी ने 'श्रीराधातत्व रहस्य' में संकेत किया है कि- 'न केवल साकार प्रभु को प्राप्ति के लिए की गई आराधना मात्र को ही श्रीराधा जी कहा गया है, अपितु निराकार और निर्गुण आराधना करने वालों ने भी श्री राधा जी को अपनी मूर्तिमती साधना स्वीकार किया है। निर्गुण धारा के रहस्यवादी संत श्री कबीर जी महाराज के एक दोहे में बतलाया है कि अगम पुरूष से जो वृत्तियों का बहिर्मुखीन प्रवाह चलता है उसे धारा कहते है और जब वही वृत्तियों की धारा उलट जाती है अन्तर्मुखीन हो जाती है तब उसे राधा कहते हैं।[8]

श्रीनंद नंदन स्वंय सच्चिदानंदमय है। चिद्शक्ति एक एवं अखण्ड तत्व होने पर भी त्रिरूपा हैं। सन्धिनी शक्ति सम्वित शक्ति और ह्रादिनी शक्ति इनमें ही समाविष्ट हैं। श्रीराधा ही दुर्गा, पार्वती एवं पराम्बा पराशक्ति हैं।

भक्ति आंदोलन को प्रसारित करने वाले सम्प्रदायों आदि गुरूशंकराचार्य रामानुजार्य का रामानुज सम्प्रदाय, वल्लभाचार्य का वल्लभ सम्प्रदाय, माध्वाचार्य का माहव सम्प्रदाय, हरिदास जी का हरिदासी सम्प्रदाय, हितहरिवंश स्वामी का राधावल्लभ सम्प्रदाय में राधा जी के भिन्न-भिन्न स्वरूपों का वर्णन हुआ

है। कहीं पर राधा इष्ट देवी के रूप में आराध्य है तो कहीं वे श्रीकृष्ण की सदा सहचरी रहकर अपने भक्तों का कष्ट निवारण कर उनको श्री कृष्ण की आलौकिक छवि निहारने का सामर्थ्य प्रदान करती हैं।

बुंदेलखण्ड भारत वर्ष का ऐसा भूखण्ड है जो शौर्य, साहस एवं पराक्रम के लिए तो जाना ही जाता है साथ ही उत्कृष्ट साहित्य सृजन के लिए भी विख्यात है। यह ऐतिहासिक सत्य है कि इस भूभाग के राजे महाराज भक्ति आंदोलन से प्रभावित हुए और रामभक्ति एवं कृष्णभक्ति धारा में अवगाहन करते हुये भक्ति रस में आकंठ डूब जनता जर्नादन को कल्याणकारी मार्ग पर ले जाने हेतु तत्पर रहे। ये राजे महाराजे न केवल कृपाण के धनी थे वरन् वे अपनी सुकोमल सुमधुर भावनाओं की उठती हुई तरंगों में भक्ति रस का वेणुनाद भी सुनने में निष्णात थे। वे उच्चकोटि के कवि और काव्य मर्मज्ञ थे। उनके दरबार में ऐसे भक्त कवि थे जो श्रीराम कृष्ण के अनन्त नाम, रूप, गुण, लीला, धाम का वर्णन कर भक्तिमय वातावरण का निर्माण करते थे। कालान्तर में यह काव्य परम्परा प्रवाहित होती रही और लोककवियों ने श्री राधा कृष्ण की युगल उपासना, उनके प्राकट्य उनकी विविध लीलाओं रास लीला, ब्रज की निकुंज लीला, जलविहार, हिड़ोला एवं तत्वदर्शन आदि का अत्यन्त ही मधुर व सरस वर्णन किया है।

श्रीकृष्ण पूर्णशक्तिमान है और श्री राधा पूर्ण शक्ति है। शक्ति एवं शक्तिमान में भेद भी है और अभेद भी है। श्री राधा कृष्ण अभेद रूप में एक ही स्वरूप है और लीलारसास्वदन के लिए वे दो स्वरूप धारण करते हैं। भगवान श्रीकृष्ण जब जैसी लीला करते है वैसी ही लीला का विस्तार श्री राधा जी अपने स्वामी की अनुगामिनी होकर करती हैं। प्रभु श्रीकृष्ण का भूलोक में अवतरण हुआ है अत: श्री राधा जी ह्लादिनी के मूर्त विग्रह रूप से पृथक स्वरूप में लीला रसास्वादन हेतु प्रकट हुई हैं-

जन्मी जग जननी श्री राधे सुदिन सुभ घरी पाई-बजत बधाई...
बरसाने में धूम मची है भारी भीर सुहाई- बजत बधाई...
भादों सुदी अष्टमी जानौ।
अनुराधा नक्षत्र बखानों॥
मंगल गान हेतु महलन में मन में मोज मनाई - बजत बधाई...
विश्व कीर्ति की कीर्ति सुहाई।
जननी निरख निरख हरसाई॥
मन प्रसन्न वृखभावत नृपत अत कोकर सकत बढ़ाई-बजत बधाई ...
साज बाज पुर की नरनारी।
हर्ष करत जयकार उचारी॥
देव दुहाई सुर सब सुन्दर सुमन वृष्टि बरसाई-बजत बधाई
सत मंडल सुन नारद आये।
'हर गोविंद' निरख हर साये॥
धन्य धन्य गोकुल नगरी को आदि शक्ति प्रकटाई - बजत बधाई...

श्री राधा कृष्ण का सम्वंध अविच्छेद है। वे अभेद रूप में एक ही स्वरूप और एक ही आत्मा है केवल लीला विस्तार के लिए दो रूप धारण करते है, क्योंकि रमण के लिए दो की अपेक्षा रहती है इसीलिए भगवान श्रीपति ने दो रूप धारण किये हैं कृष्ण और राधा। श्री राधा में चरम प्रेम की अभिव्यक्ति भी लीला रस की पुष्टि के लिए है। कृष्णमयी राधा जी में आत्म सुख की इच्छा नहीं है परन्तु प्राणप्रिय श्री कृष्ण को सुखी करने के लिए वे प्रेमक्रीडा में विभोर हैं। लोककवियों ने राधा कृष्ण को मधुर लीलाओं के अनेक मनोरम चित्र उकेरे हैं। राधा कृष्ण की युगल छवि का अनुपम चित्र इन पंक्तियों में दृष्टव्य है-

झाँकी बाँकी लखपाई कैसी सुन्दर छवि छाई।
सिंगासन जुगल सवारी है श्री कृष्ण राधका प्यारी है॥
जोड़ी दम्पत मनभाई कैसी सुन्दर छवि छाई।
मन मुकुट मनोहर मोहत है माथे में चन्द्रका सोहत है॥
मणि मोतिन माल सुहाई कैसी सुन्दर छवि छाई।
जामा जड़ित जरतारी है सारी पचरंग किनारी है॥
इत लहंगा उतै सराई कैसी सुन्दर छवि छाई।
सत मंडल सुन्दर गान करै जस हरगोविंद बखान करें॥
प्रभुपूर्ण प्रेम प्रगटाई कैसी सुन्दर छवि छाई।
श्रीकृष्ण परम स्वतंत्र पुरूप हैं, परंतु वे प्रेम के वशीभूत हैं।

श्रीकृष्ण परम स्वतंत्र पुरूप हैं, परंतु वे प्रेम के वशीभूत हैं। जिस भक्त में प्रेम का जितना विकास होता है श्रीकृष्ण उसके उतने ही वश में होते हैं। राधा जी में प्रेम का सर्वाधिक विकास है, इसीलिए श्रीकृष्ण उनके सार्वजनिक वश में है। उनके साथ अनेक लीलाएं करते हैं। जलविहार लीला का एक चित्र इन पंक्तियों में दर्शनीय है-

जल विहार को चले मुरारी संग राधका प्यारी-गिरवरधारी....
झाँकी बाँकी श्याम सलोनी नोनी निरख निहारी - गिरवरधारी....
बैठे बीच विमान विहारी।

बाम अंग वृषभान दुलारी॥
मन्दमन्द मुसक्यायें मनोहर पारब्रह्म अवतारी - गिरवरधारी....
गये तीर रवि तनया तटके।
उतरे नीचे बंसी वट के॥
भादों बारस शुक्ल सुहाई आई निस उजयारी - गिरवरधारी....
पावस परम परनी जानी
निरमल जल जमना अनुमानी॥
डोलत स्वच्छ समीर सुहावन मदन जगावन हारी - गिरवरधारी....
सतमंडल मन माँह विचारी।
परमानंद प्रेम उरधारी॥
'हरगोविंद' जुगल जोड़ी लख सुफल जनम भयोभारी - गिरवरधारी....

राधिकादि गोपियाँ जाति, कुल शील, स्वजन, परिजन सबको तिलांजलि के श्रीकृष्ण की सेवा में रत रहती है ऐसे निष्काम प्रेम का प्रतिदान भी श्री कृष्ण उन्हें नहीं दे सकते अत: वे उनके चिरऋणी है। श्री राधिका जी सर्वगोपी वृन्दावन में होने वाली नित्य लीला में राधा के परिमंडल में ही समस्त गोप बालाएँ आवृत्त सी दिखाई पड़ती हैं। यथा-

जलविहार कर रहे आज मिल विपन विहारी - हो आज...
सखियाँ सिगरी संग स्याम सुन्दर सुखकारी - हो आज...
मंगल मोद प्रमोद मनाई।
निर्मल जल विहरत सुखपाई॥
डोलत तीर समीर सुगम सीतत मतवारी - हो आज...
ब्रज बनता जनता हरसानी।
प्रेम प्रफुल्लित सब सुखकारी॥
खिली कुमुदनी मनो सरद ससि सरस निहारी - हो आज...
जोड़ी जुगल राधिका प्यारी।
झाँकी करूणा सिंधु सम्हारी॥
दम्पत तैरत फिरत स्याम सुन्दर वनचारी - हो आज...
सत मंडल है रंग रंगीला।
'हरगोविंद' निरख प्रभु लीला॥
करै आन गुनगान कान के कलित उचारी - हो आज...

राधा जी श्रीवृन्दावन नव निकुंज मंदिर में श्री कृष्ण के साथ नित्य विहार करती हैं। कुंज वनों में वे मिलते हैं क्रीडा करते हैं, हिड़ोला झूलते है -

हरी हरी साज सजी हरे हरे रंग में।
हरी हरी राधा झूलें जू के संग में॥
हरे हरे वस्त्र बने हरे कुंज द्वारा में हरी-हरी
हरे ही हिड़ोरा धले हरी डार में हरी हरी
पन्नन के रत्न हरे हरे अंग अंग में।
हरी हरी राधा झूलें हरी जू के संग में॥
हरे हरे फूल जहाँ हरे हरे गुच्छ हैं हरे हरे गुच्छ में।
हरी हरी भूम जहाँ हरे हरे वृच्छ है हरे हरे वृच्छ है॥
रंगत हरीरी जमी जमुना तरंग में।
हरी हरी राधा झूलें हरी जू के संग में॥
हरे हरे पत्र जुड़े हरी हरी डाली में हरे हरे डाली से।
हरी हरी गोपी सजी हरी हरी साड़ी से हरीं हरी साड़ी से॥
हरे हरे ग्वाल नचे हरी की उमंग में।
हरी हरी राधा झूलें ही जू के संग में॥
जब थल महि थल नभ थल हरे हरे नभ थल।
वरणें 'विहारी' मंडल हर कोई हरे हरे हर कोई॥
रूप रोप देख रही ओप ना अनंग में।
हरी हरी राधा झूलें हरी जूके संग में॥

वृषभान नन्दिनी राधिका जी अङ्ग अङ्ग में सुन्दर रूप धारण किये हुए हैं और हिड़ोले में गिरिधर लाल के साथ झूलते हुए सुशोभित हो रही है-

जोड़ी जुगल सदा की है स्याम गौर छवि बाँकी है।
कैसी सजी स्याम बगिया में प्रेम झूलना झाँकी है॥
माथे श्याम सुगर के सौहै मुकुट मनोहर भारी है।
राधे के सिर सोह चन्द्रिका कंचनकी मतवारी है॥
कोट काम सम ताकी है दुत दमकन राध की है कैसी...
चार तत्व को अजब हिड़ोला चतुर चतुर निरधारो है।
चतुरमुगी स्वामी मनमोहन स्यामा सहित विठारो है॥
सुन्दरता जामा की हैं बांधत सुगत समारी है कैसी...
देख देख पुर के नर नारी वाह वाह कह जाते हैं।
सुरपति प्रेममगन सुरपुर हो अभी वृष्टि बरसाते हैं॥
स्वच्छ समीर वहाँ की है उपमा देव कहाँ की है कैसी...
सतदेव मडंत धुन सुन्दर 'हरगोविन्द' बनाई है।
फूले सुमन सुगन्ध सुहावन मन भावन मनभाई है॥
हरगोविन्द जन ताकी है करियो कोर कृपा की है कैसी...

वृन्दावन में श्रीकृष्ण राधिका झूला झूल रहे है उनकी मनमोहिनी छवि का रेखाकंन इन पंक्तियों में दर्शनीय है-

झूला झूलत है वृंदावन विपिन बिहारी।
संगे है वृषभान नन्दिनी जो प्रानन सो पियारी॥
श्यामा श्याम की अनुपम छवि को निरखत संसारी।
बलि बलि जाऊं जुगल रूप 'शिव विशाल' बलिहारी॥

वृन्दावन में श्रीकृष्ण रास रचते हैं। जिसमें राधा जी

षोडस श्रृंगार और नव नव आभूषण धारण करती है शरद पूर्णिमा की रात्रि को सखियों सहित युगल छवि दोनों हाथ जोड़कर सघन मंडल में भोर होने तक नृत्य करते है। इस शरद महारास का मनोरम चित्रण इन पंक्तियों में प्रस्तुत है-

है सुन्दर शरद पूर्णिमा जुन्हैया ब्रज राच्यों रहस कन्हैया...

सोरहु सिंगार सज सखियां है।
सिर श्याम मोर की पखियां है॥

धन धन बलदाऊ भैया ब्रज राच्यौं रहस कन्हैया...

ब्रजवाला गोरी भारी है।
कहं तोरी मोरी जोरी है॥

नाचत है ता ता थैया ब्रज राच्यौ रहस कन्हैया...

श्रम बिन्दु श्याम मुख छाय रहे।
मुम्ता गिर नीत बंधाय रहे॥

यह लीला जसुमत छैया ब्रज राच्यौ रहस कन्हैया...

युवतिन मुख अलकै झुक आई।
जिमि शशी सुधा पिय फनि जाई॥

अंग अंग अनंग लजैया ब्रज राच्यौ रहस कहैया...

यह मंडल गाय बिहारी का।
कमलेश दीन बनवारी का॥

जो बिगड़ी बात बनैया ब्रज राच्यौ रहस कन्हैया...

राधिका जी श्री कृष्ण जी के साथ होली खेलती है, वे होली खेलने में सक्रिय योग देती है हाथ में पिचकारी लेती है, रंग अबीर हाथों में भर-भर कर उड़ाती है। उनकी वह अगाध रूप छवि अतुलनीय है। मधुवन में राधाकृष्ण की होली का चित्र इन पंक्तियों में दर्शनीय है-

खेलत नंद नंदन होरी संगे वृषभान किसोरी...

सोहे कर कंचन पिचकारी।
पचरंग भरें राधिका प्यारी॥

भर भर झोरन में रोरी संगे वृषभान किसोरी ...

मधुवन में भारी भीर भई।
गह श्याम राधिका वांह गई॥

घालत कुमकुमा बहोरी संगे वृषभान किसोरी...

नभ में गुलाल मड़रानी है।
रंग कीच कीच मची मस्तानी है॥

दिल रंग भंग में गोरी संगे वृषभान किसोरी...

सत मंडल गुण गावत हैं।
दुलकी पर ताल बजावत है॥

कर 'हर गोविंद' किलोरी संगे वृषभान किसोरी...

राधा जी सावन के महीना में समस्त खसियों के साथ मिलकर चपेटा का खेल खेलती है जिसका अत्यन्त सुन्दर वर्णन इन पंक्तियों में हुआ है-

आज वृषभान भवन में खेल चपेटन गोरी नवल किसोरी...
सखि सबल संग की सुन्दर श्री राधिका जोरी नवल किसोरी...

सावन जब मनभावन आओ।
वृषभान नंदिनी हुकुम सुनाओ॥

अनुसासन सुधर जौहरी ले गयो खोल तिजोरी नवल किसोरी...

किस्म किस्म धरे निकारी।
लेव लेव तुम इच्छा चारी॥

बेराकीमती लये लली ने निरखी ललित निहोरी नवल किसोरी...

नौनी निकल नगीच निकासी।
नौं रत्नी मीना सुखरासी॥

लाखे लई लखाय लाड़ली मेंहदी करन रचोरी नवल किसोरी...

सतमण्डल जब खेलन आवे।
'हरगोविंद' निरख सुख पावे॥

सब सखियन में सुधर सलोनीअनहोनी मतजोरी नवत किसोरी...

सावन के महीना में श्री राधा जी अपनी माँ के साथ कजलियाँ खोटने जा रही है। उन्होंने बोडस श्रृंगार किया है भांति भांति के वस्त्राभूषण धारण किये है। उनकेइस स्वरूप का सुन्दर चित्रण कवियों ने किया है-

मैया संगे वृषभान दुलारी खोटन गई कजरिया बारी उमरिया...
बीज दावनी येरन झुमका सुन्दर नाक पुगरिया बारी उमरिया ...

नैनन मैन सोहें कजरारे।
कलित केश कैसे घुंघराले॥

भौहे बंक कटीली चितवन चंचल चपल नजरिया बारी उमरिया...

अधरन ललित सौहे।
निरख लाली छव अतमनमो है॥

बोल तोतले दमक हतुलियाँ नौनी लगत गुजरिया बारी उमरिया...

कोमल कर में हदी की लाली।
जावो मगन लोक मतवारी॥

पैजनियाँ पग बजे बाँकुरी मधुरे सुरन घुघरिया बारी उमरिया...

सत देव मंडल मतवारी।
'हरगोविंद' कहत बलिहारी॥

खोटत बरसन पानी लागो जब ले खोटत टुकरिया बारी उमरिया

श्री राधा के प्राण कृष्ण के प्राणों में निहित है। राधा के लिए यह संसार ही कृष्णमय है। श्रीकृष्ण अकूर जी के साथ मथुरा चले गए है और वहां से पुन: लौटकर नहीं आते है। राधा

जी श्रीकृष्ण के वियोग में व्याकुल है वे एक क्षण के लिए भी उन्हें भूल नहीं पाती हैं उनके वियोग में वे योगिनी हो जाती हैं। लोककवियों ने अति चंचल, कृष्ण पर विमुग्ध रस के वशीभूत तन मन को विस्मृत करती हुई राधिका एवं ब्रज वासियों की दशा का चित्रण इस प्रकार किया है-

ब्रज की सुरत बिसारी है- हिये निठुरता धारी है।
ऊद्दव संग करी मनमोहन मथुरा की तैयारी है॥
कहो वीर अब क्या गति होगी कुंजन और वृन्दावन की।
देखो दशा राधिका जी की गोप ग्वाल क्या गइयन की॥
मुरझानी फुलवारी है जमुना वीर मझारी है।
रथ चढ़े तुरत नटनागर पुर बासी बिलखाते है॥
थल चर नभ चर जल चर देखो द्रगनन वीर बहाते है।
पुखन प्रीत बिसारी है समझावत महतारी है॥
रवितनया जल के कण देखो क्या कर शोक मनाते है।
धूमभूम की लगत बिहूनी नंद नंदन जब जाते है॥
ठानी क्या वनवारी है फंसा सुरभयकारी है।
ब्रज की सुरत बिसारी है हिये निठुरता धारी है॥

श्री राधा कृष्ण का विहार नित्य है राधा कृष्णमय है और कृष्णराधामय है उनके गुण गूठ है, उनका भेद किसी ने नहीं जाना है, वे सदैव अपने भक्तों की सहायता करते हैं, उन्हें सर्वसुख प्रदान करते हैं उनका पोषण करते है और उन्हें संतुष्ट करते है। उनकी शोभा अपूर्ण है उससे भक्त का हृदय सौन्दर्य से परिपूर्ण हो जाता है

माथे मुकुट सुहाई है कुंडल की छवि है।
झाँकी बाँकी झाँक झरोकत मन मंदिर बैठाई है॥
पारब्रह्म पीताम्बर धारी कसे काछनी प्यारी है।
कट में करधनिया मनमोहन मीनन जड़ित मतवारी है।
जामा जोत जगाई है मुतियन कोर भराई है।
हार हिये में हुशी केसके नव रत्नी पहराये है॥
कठां गज मुक्तिन के कइयक विविध भांत मगवाये है।
मुरली मधुर बजाई है तान अनोखी गाई है॥
रतन जड़ित सिंघासन सुन्दर विविध विचित्र सुहाते हैं।
नटनागर वृषभान सुता संग मंद मंद मुसकाते हैं॥
जोड़ी जुगल सजाई है द्रगनन बीच बसाई है।
सतदेव मंडल सम्पूरन जन सेवक कहलाते हैं।
हाव भाव दिखलाय हरी को मनवांछित फलपाते हैं।
'हरगोविंद' बनाई है प्रेमकला दिखलाई है॥
झाँकी बाँकी झाँक झरोकन मनमंदिर बैठाई है।

- सहायक प्राध्यापक
श्री कृपा निकेत, आदर्श नगर,
छतरपुर (म.प्र.)

जाड़े की रात

- कन्हैया लाल शास्त्री 'मुकुल'

ठण्ड से हो रऔ औरो गात।
कटै कैसें जाड़े की रात ?
शीत लहर चल रही भयानक, परनें आज तुषार।
नैचौ घर है घास फूस कौ, टूटी टटिया द्वार॥
देखकें सरदी जी घबरात।
कटै कैसें जाड़े की रात ?
हुआ अँधेरा, लग गऔ कुहरा, दिखे नहीं कुछ दूर।
छिपे धुन्ध में सूरज स्वामी, धूप हुई काफूर॥
ठिठुरने विवश हुआ है ज्ञात।
कटै कैसें जाड़े की रात ?
नहीं रजाई, घर भौजाई, ऊनी कपड़ा एक।
कमरा भलौ पुरानौ लेकिन, ऊमें छेद अनेक॥
झूँट न जा में एकउ बात।
कटै कैसे जाड़े की रात ?
अदरख तक तौ बरै नहीं घर, लेते जिस खों खाय।
कोदन कौ कउँ मिलत प्यार ना, जुलम गरीबी ढाय॥
बरोसी भली न एकइयाँ बात।
कटै कैसें जाड़े की रात ?
बननें नों कौ आंक ठिठुर कें, लगतइ ऐसौ आज।
कांप रहौ तन घबराऔ मन, गिरने ऊपर गाज॥
बजरये मुख में रह-रह दाँत।
कटै कैसें जाड़े की रात ?

- महासचिव-सृजन भारती विध्यांचल
तालवेहट, जिला-ललितपुर

वीर बुंदेला - महाराजा चम्पतराय

– डा. रज्जन सिंह

महाराजा चम्पतराय को बुंदेलखण्ड में मुगलों को ललकारने का गौरव प्राप्त है। उन्होंने अपने पराक्रम से ओरछा राज्य को स्वतंत्र कराया और अपना सारा जीवन मातृभूमि की आजादी के लिए मुगलों से संघर्षरत् रहते हुये बिताया। बुंदेलखण्ड में मधुकरशाह (प्रथम) के पश्चात् एक और वीर-वीर सिंहदेव (प्रथम) का उल्लेख इतिहासकारों ने किया है जिन्होंने मुगलों से टक्कर ली और अकबर के सिपहसालार अबुल फजल का सर धड़ से अलग कर दिया। वीर सिंह देव ने शाहजहाँ को भी गई युद्धों में करारी शिकस्त दी थी। यहां इस बात का उल्लेख करना जरूरी है, कि वीरसिंह देव के इस पराक्रम और विजयों में उनके विश्वसनीय एवं प्रधान सेनापति, चम्पतराय को श्रेय जाता है। चम्पतराय इस प्रदेश की माटी में एक ऐसे सपूत हुए जिन्होंने बुंदेलखण्ड में मुगलों के बढ़ते प्रभाव को रोका और मुगलों के खिलाफ बुंदेलखण्ड में विद्रोह करने की प्रेरणा दी।

महाराज चम्पतराय का जन्म संवत 1644 का चैतशुदी 11 रविवार को हुआ था चम्पतराय के पिता ओरछा राज्य के संस्थापक राजा रूद्र प्रताप सिंह के तीसरे पुत्र उदयाजीत के पौत्र भागवतराय थे। भागवतराय के तीन पुत्र क्रमश चम्पतराय, सुजान राय एवं जामशाह थे। चम्पतराय ने बचपन में ही शस्त्र चलाना, शिकार खेलना, अचूक निशाना लगाना और घुड़सवारी में निपुड़ता प्राप्त कर ली थी। चम्पत राय का विवाह टेकड़ी रियासत के जमींदार फतेसिंह की राजकुमारी लालकुंवर से हुआ था। चम्पतराय के पांच पुत्र क्रमशः सारवाहन, अंगदराय, रतनशाह, गोपाल एवं छोटे पुत्र महाराजा छत्रसाल थे, जिनका नाम बुंदेलखण्ड में गौरव के साथ लिया जाता है। बड़े होने पर महाराजा चम्पतराय ने मुगलों को अपनी मातृभूमि से खदेड़ने के लिए महाराजा वीरसिंह देव प्रथम की सेना में शामिल हुये। वीरसिंह देव भी मुगलो से संघर्ष करने को तत्पर थे। कम समय में चम्पतराय ने वीरसिंह देव का दिल जीता और उनके विश्वसनीय सहयोगी बन गये। इतिहास में इस बात का उल्लेख मिलता है कि मातृ भूमि की आजादी का श्रीगणेश उन्होंने 18 अप्रैल 1640 ई. में महाराजा वीरसिंह देव प्रथम के साथ शुरू किया था। मुगल सल्तनत के खिलाफ विद्रोह के कारण चम्पतराय का अधिकांश जीवन जंगल में ही बीता।

अकबर की मृत्यु के पश्चात जब शाहजहां दिल्ली की गद्दी पर बैठा तब चम्पतराय के कहने पर वीरसिंह देव ने शाहजहाँ को 'कर' देना बंद कर दिया था। इसके बाद ओरछा स्वतंत्र राज्य हुआ। स्वतंत्र राज्य बनने से मुगल शासन चम्पतराय के नाम से भयभीत रहने लगे थे। इस बीच मुगल शासकों और चम्पतराय के बीच संघर्ष का दौर जारी रहा। अपने बड़े पुत्र सारवाहन को बाकी खाँ द्वारा मार डालने की जानकारी मिलने पर चम्पतराय का क्रोध भड़क उठा। उन्होंने बाकी खाँ को करारी शिकस्तदी। इसके बाद शाहजहाँ ने चढ़ाई की जिसमें चम्पतराय ने शाहजहाँ की सेना को भी परास्त किया। इससे शाहजहाँ काफी चिंतित रहने लगा। कई प्रयासों के बाद जब शाहजहाँ विजय न पा सका तो उसने वीरसिंह देव के पास संधि प्रस्ताव भेजा, जिसे महाराजा ने स्वीकार किया। इसके बाद 1684 में वीरसिंह देव का निधन हो गया। वीरसिंहदेव के पश्चात उनका पुत्र जुझार सिंह राजा बना। जुझार सिंह संकालु प्रवृति का था एवं चम्पतराय की सभी बातों को नहीं मानता था। इसका फायदा मुगल शासकों ने उठाया और ओरछा पर अपना आधिपत्य स्थापित किया। इससे चम्पतराय को बहुत दुख हुआ अंत में उसने जुझार सिंह के पुत्र पृथ्वीराज सिंह को ओरछा का स्वतंत्र राजा बनाया परन्तु मुगलों की कुटिल नीति के कारण पृथ्वीराज सिंह को कैद कर लिया गया इससे चम्पतराय चिंतित रहने लगे। अंत में उन्होंने स्वयं 1637 में ओरछा की कमान सम्भाली और मुगलों के आधिपत्य वाले भागों पर अपना कब्जा जमा लिया।

चम्पतराय ने ग्वालियर पर आक्रमण कर काफी मात्रा में अस्त्र शस्त्र और धन एकत्रित किया। इसके बाद उन्होंने एक विशाल बुंदेली सेना का गठन किया। ग्वालियर पर विजय के पश्चात चम्पतराय का दबदबा इस भू-भाग पर बन गया। इससे शाहजहाँ काफी चिंतित हुआ एवं कुटिल नीति का सहारा लेकर पहाड़ सिंह ने चम्पतराय को मारने की कोशिश की परन्तु चम्पतराय और पहाड़ सिंह के बीच बढ़े मनमुटाव का फायदा उठाकर शाहजहाँ ने चम्पतराय की संधि के तहत पंचहजारी मनसबदार बनाया। इसके पश्चात शाहजहाँ ने

चम्पतराय को दारा शिकोह के साथ कंधार युद्ध करने भेजा जहाँ चम्पतराय ने विजय दिलायी।

औरंगजेब जब दक्षिण में था, तब उसने चम्पतराय से सहायता मांगी। ऐसे मौके पर चम्पतराय ने सहायता देना स्वीकार किया। दारा शिकोह ने पहले सुजा को हराया और औरंगजेब की सेना लेकर संघर्ष के लिए धौलपुर पहुंचा। इसी बीच चम्पतराय का 1715 में कुम्हारगढ़ में दारा से युद्ध हुआ और चम्पतराय ने दारा का सिर काटकर औरंगजेब को भेंट किया। इससे प्रभावित होकर औरंगजेब ने यमुना से लेकर ओरछा तक का हिस्सा चम्पतराय को दिया। परन्तु बाद में दोनों में मनमुटाव बढ़ा। मुगुलों का साथ छोड़कर चम्पतराय ने ओरछा आकर पुनः अपनी सैन्य शक्ति बढ़ायी एवं मुगुलों के खिलाफ युद्ध शुरू कर दिया। औरंगजेब ने शुभकरण बुंदेला के नेतृत्व में चम्पतराय पर आक्रमण हेतु सेना भेजी। चम्पतराय ने बहादुरी से मुकाबला किया। इस बीच तत्कालीन राजा पहाड़ सिंह ने भी औरंगजेब के इशारे पर चम्पतराय का विरोध किया। पहाड़ सिंह बदला नहीं ले सका और उसकी मत्यु 1653ई. में हो गई। पहाड़ सिंह के बाद सुजान सिंह राजा बना परन्तु उसने भी चम्पतराय का विरोध जारी रखा। वैदपुर के युद्ध में सुजान सिंह मारा गया। इस युद्ध में चम्पतराय के पुत्रों ने बड़ी बहादुरी के साथ सहयोग दिया।

छत्रसाल ने अपने पिता की सुरक्षा हेतु अपने रिश्तेदारों से मदद मांगी पर वे असफल रहे। इस दौरान चम्पतराय को साहब सिंह धंधेरे ने उनको आश्रय दिया। बाद में चम्पतराय अपने पुत्र छत्रसाल को यहाँ छोड़कर मोरन गांव की ओर चले गये। इस बीच सुजान सिंह की माँ हीरादेवी के कहने पर दलेल दौआ एवं इन्द्रमणि ने उन पर आक्रमण किया। इस युद्ध में चम्पतराय विजयी रहे।

कहा जाता है कि जब चम्पतराय बीमार थे तभी हीरा देवी के सैनिकों ने उन्हें घेर लिया। इस विषम परिस्थितियों में अपने को घिरा जानकर चम्पतराय ने रानी लाल कुँवर के साथ अपने प्राणों की आहूती विक्रम संवत् 1721 में दी। वे मातृभूमि के लिए जिस वीरता से लड़े उसी वीरता के साथ मौत को गले लगाया। इस प्रकार मातृभूमि के इस देशभक्त चम्पतराय ने बुंदेलखंड में आजादी के संघर्ष की अमिट छाप छोड़ी जो सदियों सदियों तक याद रखी जायेगी। चम्तराय ने अपनी विलक्षण प्रतिभा और अद्वितीय शौर्य से बुंदेलखण्ड की भूमि को गौरवान्वित किया।

– वरिष्ठ उपाध्यक्ष
क्षत्रि सभा, रानीताल, जवलपुर

'बुंदेली में लघुकथा - 'पत्री' (कुण्डली)'

– राजीव नामदेव 'राना लिधौरी'

रमेश के व्यायौ कै समय पत्री (कुण्डली) को एनई अच्छत तरह से मिलाने के बाद ही पंडित जू ने कई ती कि इनके तो सबई गुन मिलत हैं। राम-सीता सी जोड़ी रये। पंडित के जा कैबे भर की देर हती, रमेश को व्यायो कर दओ गओ। कछु दिनन तो नई बहू को पाकै सबई जने खुश रये, फिर नई बहू ने अपनौ असली रूप दिखाबों चालू कर दओ। अपने घमंडी एवं लड़ंकू स्वभाव के कारण घर में रोज चै-चै मची रत्ती, बहू रमेश से जा घर से अलग रहे के लाने कतती। रमेश जा के लाने राजी न हतो, सो वा तो रमेश से भी रात में लड़त हती। रोजई की किलकिल से रमेश का जी उनई से भर गओ हतो। सौ रमेश ने ऊकी छोर छुट्टी (तालाक) कर दई। अब रोज की दांती से घर को चैन मिलगओ।

एक दिना घर के सब जने दलान में बैठे हते सो दद्दा ने कई, की जाने कौन घरी हती, जब जा नई बहू अपने इतै कर आयी हती। इनै तो नकुअन में दम दई हती। तो वई बैठों एक छोटो मोड़ा बोलो- दद्दा, जब अनूप ने चाचा को व्यायो करो हतो तो अपुन के पंडित कक्का ने जा कई ती कि जा जोड़ी तो राम-सीता सी रये, इनके तो सबई ३६ गुण मिलत हैं। फिर जा कैसी पत्री पंडित जू ने मिलाई

दद्दा कों जवाब देते कुछ कतन न बनो।

संपादक – आकांक्षा (पत्रिका)
अध्यक्ष – म.प्र. लेखक संघ
नई चर्च के पास, शिवनगर कॉलोनी,
टीकमगढ़ (म.प्र.) मो. 9893520965

बुन्देली मेला एक नजर में...

बुन्देली मेला में
स्वास्थ्य विभाग की प्रदर्शनी

बुन्देली मेला में झूला

बुंदेलखण्ड में 1857 की गदर - गदर नहीं, लोकतंत्र की लहर

-वीरेन्द्र शर्मा कौशिक

'एकता में अनेकता' और अनेकता में एकता वाले हमारे देश भारत वर्ष का इतिहास अति गरिमामय रहा है। किन्तु दुर्भाग्य से सदियों इस देश पर विदेशी शासकों का कुशासन रहा। इन कुशासकों के अधीन देश की संस्कृति, सभ्यता और इतिहास मायाबी लेखकों की कलमों से प्रसूत होकर देश की जनता को जाली, झूठे फरेबी, धोखाधड़ी आदि के द्वारा मायाजाल में फंसाये रहे हैं। कहने का अभिप्राय यह है कि विदेशी इतिहासकारों द्वारा दिया गया विवरण सही और सच्चा नहीं था इस कारण भारत की सच्चे इतिहास की गरिमा नष्ट होती रही, जिसका विवरण देना यहां हमारा उद्देश्य नहीं है। हम तो इस देश के मध्याचंल विशेषत: बुंदेलखण्ड में 1857 के विद्रोह या कहें जनक्रांति के विषय में जो भ्रामक बातें प्रस्तुत हुई हैं, उनके विषय में अपनी बात सब के सामने रखना चाहते हैं। 1857 ई. में जो जनक्रांति ब्रिटिश हुकूमत के खिलाफ प्रस्फुटित हुई, उसे अंग्रेजों ने विद्रोह या विप्लव की संज्ञा दी। उसे सैनिक या सिपाही विद्रोह कहा। जबकि वह भारत में वर्षो से चले आ रहे अंग्रेजों के कुशासन के विरूद्ध दीन-हीन, पीड़ित जनता की आवाज थी, जो विदेशी गुलामी से मुक्त होने हेतु स्वतंत्रता पाने की पुकार थी। इस सम्बंध में भारतीय इतिहास के जानकार-लेखक डॉ. भगवानदास केला अपनी सुप्रसिद्ध पुस्तक- 'भारतीय स्वाधीनता आन्दोलन (1857-1947) में लिखते हैं-'

''वास्तव में 1857 की क्रांति में सेना के बाहर के लोगों ने भी बढ़-चढ़कर भाग लिया था। सिपाहियों को जनता की सहानुभूति और सहयोग तथा कई राजाओं महाराजों और स्वंय सम्राट बहादुर शाह जफर का नेतृत्व प्राप्त था। ऐसी दशा में इस घटना को 'सिपाही विद्रोह' कहना सरासर गलत है। यह भारतीय जनता के कई प्रकार के असंतोष का फल था। अंगरेजी शासन को यहाँ से हटाने का उद्योग था। भले ही यह यथेष्ठ संगठित न रहा हो।'' पृष्ठ -11 प्रकाशक - भारतीय ग्रंथ माला, दारागंज इलाहाबाद, प्रकाशनवर्ष - सन् 1949 ई.।

जिन दिनों अंग्रेजों और उनके कुशासन के विरूद्ध भारतीय जनमानस में गुप्त आन्दोलन के संगठन की योजना जनक्रांति की भावना से प्रसूत हो रही थी, उन्हीं दिनों अंग्रेजों के पिट्ठू अंग्रेज इतिहासकार लिख रहे थे:- सन् 1857 में भारत में अंग्रेजों के अत्याचारी शासन के विरूद्ध सशस्त्र भारतीय विद्रोह यानी जनक्रांति के सम्बंध में कुछ पुस्तकें लिखी गई, जिनमें स्वभावत: भारतीयों को कलंकित करने वाला एकतरफा चित्र चित्रित किया गया है। और यह भी लिखा गया कि देश के कुछ स्थानों के मूर्ख सिपाहियों ने इस अफवाह पर कि उनके बन्दूकों के कारतूसों में गाय और सुअर की चर्बी लगाई जाती है। अपनी मूर्खता और धर्माधता के कारण बहकावें में आकर अंग्रेजों के विरूद्ध विद्रोह कर दिया है। सन् 57 का विप्लव की प्रस्तावना-रामकिशोर मालवीय।

सन 1857 ई. को सम्पूर्ण भारत वर्ष में सुदूर दक्षिण से लेकर उत्तर तक और पूर्व से लेकर पश्चिम तक अंग्रेजों का घोर क्रूर और दुराचारी शासन के विरूद्ध उठी सशस्त्र आक्रोश की लहर के बारे में आगे बताते हुये श्री मालवीय लिखते हैं:-

''अंग्रेजों का यह कहना नितान्त असत्य है कि इस आक्रोश और अशांति से उपजा यह विप्लव जहाँ-तहाँ थोड़े से सिपाहियों में ही उठा था। क्या कोई भी बुद्धी रखने वाला व्यक्ति यह कह सकता है कि इतना देश व्यापी विप्लग बिना किसी निश्चित और व्यापक उद्देश्य के हो सकता था। पेशावर से लेकर कलकत्ता तक एक साथ क्रांति की बाढ़ का उठ खड़ा होना बिना निश्चित राजनीतिक ध्येय के संभव नहीं हो सकता था।''

सुप्रसिद्ध क्रांतिकारी और लेखक सर सुन्दर लाल जी इस प्रथम स्वतंत्रता संग्राम के विषय में अपने ग्रंथ भारत में अंग्रेजी राज में बताते है कि अंग्रेजों ने भारत वर्ष के आम व खास यानि प्रजा और राजा-महाराजा, नबाब, जागीदार, ताल्लुकेदार, आदि सभी के साथ झूठ-फरेव, दगाबाजी, धोखेबाजी का व्यवहार किया। फलस्वरूप यंत्र-तंत्र-सर्वत्र जनक्रांति का असर और प्रभाव फैला। देखिये-

''यह सब व्यवहार तो भारतीय नवेशों और सरदारों के साथ हुआ किन्तु साधारण प्रजा के साथ भी अंग्रेजों का व्यवहार अनेक प्रकार से दिन प्रतिदिन अधिकाधिक धृष्ट और असह्य होता जा रहा था। स्थान-स्थान पर अंग्रेज अफसर अपने सामने से घोड़े पर आने वाले हिन्दुस्तानियों को घोड़े से उतर कर

चलने के लिये विवश करते थे। उनके धार्मिक और सामाजिक रीति-रिवाजों की भी नहीं की जाती थी।''

इस तरह देश भर में व्याप्त आक्रोश, असंतोष, अन्याय, अनाचार, अशांन्ति ही सन 1857 ई. की जनक्रांति का कारण बने और सम्पूर्ण भारत वर्ष स्वाधीनता के प्रथम संग्राम का विगुल बजा, जो यदि पूर्णत: संगठित होकर एक ही निर्धारित दिन-31 मई, 1857 ई. को हुआ होता तो भारत का इतिहास ही दूसरा होता। इस प्रथम स्वाधीनता संग्राम की विफलता के कारणों की छानबीन करना भी इन पंक्तियों के लेखक का लक्ष्य नहीं है। हम तो इन पंक्तियों के माध्यम से यही बताना चाहते है कि सन् 1857 ई. के सारे भारतवर्ष में सम्राट बहादुर शाह जफर, झाँसी की रानी लक्ष्मीबाई, मध्य-भारतवासी क्रांतिवीर तात्याटोपे, बिहारी बाबू कुँवर सिंह, मराठा-वीर-शिरोमणि क्रांतिकारी नाना जी राव पेशवा, राजा मर्दन सिंह, आदि के निर्देशन और नेतृत्व में जो आवाज उठी और युद्ध हुआ, वह भारतीय स्वाधीनता प्राप्ति हेतु प्रथम स्वतंत्रता संग्राम था, जन-जन की क्रांति थी, न कि अंग्रेजों की बाणी में विद्राह, विप्लव या सिपाही विद्रोह जैसा अंग्रेज शासक और उसके पिट्ठू इतिहासकार कहते मानते हैं। इस क्रांति को अपना-अपना राज्य या मिल्कियत बचाना कह या बता देना संबंधित जनों की अपनी वैचारिकता या भावना हो सकती है, जन सामान्य की नहीं।

अब आइए हम जनभागीदारी की बात करें। भारतवर्ष के सभी राज्यों की भांति मध्यांचल विशेषत: बुन्देलखण्ड भी इस ओर से अछूता न रह सका। जनक्रांति की आग यहां भी भड़की। नेतृत्व किया झाँसी की रानी लक्ष्मी बाई ने। मध्यांचल भारत वर्ष का हृदय स्थल है तो बुंदेलखण्ड भी देश महत्वपूर्ण अंचल है। इसे वीर-प्रभू भूभाग माना जाता है। रानी लक्ष्मीबाई के नेतृत्व में बानपुर के राजा मर्दनसिंह ने अंग्रेजों और उनकी सेना हो हराकर ऐसा खदेड़ा कि उन्हें सागर की ओर भागना पड़ा। इस क्षेत्र में गढ़ मण्डला पुरवा (जबलपुर) के राजा शंकर शाह विजय राघवगढ़ के राजा सरजू प्रसाद, झींझन के देशपत बुंदेला, जैतपुर के राजा पारीक्षित, लौहागढ़ू के हिन्दूपत, शाहगढ़ के बरवतवली, रामगढ़ की रानी अवंती बाई, शहीद सुमेरसिंह आदि ने प्रथम भारतीय स्वाधीनता संग्राम (सन् 1857 ई.) में जीजान से सहयोग दिया। इसी प्रकार हीरापुर, चिरगांव, बाँदा, झाँसी आदि के रणबांकुरे हिरदेशह, बसंत सिंह, नवाब अलीबहादुर द्वितीय, फैजअली, बख्शीअली आदि सहित अन्य अनके क्रांतिवीरों ने सन 1857 ई. की जनक्रांति में अपना अमूल्य योगदान किया। नानाजी राव पेशवा और तात्याटोपे ने इस क्षेत्र में गुप्त रूप से घूमफिर कर रानी झाँसी को अपना अमूल्य सलाह और सहायता दी। श्री श्यामलाल साहू अपने इतिहास ग्रंथ-विध्य -प्रदेश के राज्यों के स्वतंत्रता-संग्राम का इतिहास में लिखतें हैं:- ''यह (1857 ई. की जनक्रांति) हमारा प्रथम स्वतंत्रता संग्राम था, जिसे अंग्रेज और उनके चहेते यानी चमचे इतिहासकार गदर या सिपाही विद्रोह कहते है।'' श्री साहू की इस बात का समर्थन करते हुए एक अंग्रेज लेखक ईमानदारी के साथ लिखता है ''यह सच है कि हिन्दुस्तान में उत्तरी और उत्तर-पश्चिमी प्रांतों के अधिकांश भाग में देशी कौमें अंग्रेजी सत्ता के विरूद्ध खड़ी हो गई थी। चरबी के कारतूसों का झगड़ा केवल इस तरह की चिंगारी थी, जो अकस्मात इस समस्त विस्फोटक मसाले में आ पड़ी थी। सचमुच वह एक राष्ट्रीय जनक्रांति और धार्मिक युद्ध था। '' सन 57 का विप्लव बेनीप्रसाद बाजपोई : पृष्ठ- 72।

अंग्रेज लेखक जस्टिन मैक्कार्थी के पूर्व कथन की भांति एक दूसरा विदेशी इतिहास लेखक मेडले भी लिखता है- ''वास्तव में जमीन के नीचे ही नीचे जो विस्फोटक मसाला अनेककारणों से बहुत दिनों से तैयार हो रहा था, उस पर चरबी लगे हुए कारतूसों ने केवल दिया सलाई का काम किया।'' इसलिए इंग्लैंड का पूर्व प्रधानमंत्री स्व. डिजरायली भी कहा करता था- इसी कारण कोई भी मनुष्य कारतूसों को विप्लव या क्रांति का कारण नहीं समझता या मानता है। ''बैनी प्रसाद बाजपोई- पृष्ठ- 72।

प्रथम भारतीय स्वाधीनता संग्राम से सक्रिय भाग ले रहे मध्यांचल यानी बुंदेलखण्ड के क्रांतिवीरों की पहली बैठक अंतिम मुगल सम्राट बहादुरशाह जफर की अध्यक्षता में जालौन जिले के कालपी कस्बे में जमुनानदी के कछार पर स्थित किले में सन 1840-42 ई. के दौरान हुई थी। जिसमें शामिल हुए बुंदेलखण्ड के लगभग सभी क्रांतिकारियों ने भाग लेकर अंग्रेजों के विरूद्ध अंतिम सांस रहने तक लड़ते-जूझते रहने की कठिन प्रतिज्ञा की थी। ऐसा ही एक सम्मेलन सन 1836 में पहले ही बनारस में हो चुका था। इस तरह पूर्ण संगठित और दृढ़ होकर बुंदेलखण्ड के राजे-रजवाड़ों ने अपनी-अपनी सामर्थ्यानुसार '57' की प्रथम जनक्रांति का वीर नेतातात्याटोपे जब मऊरानीपुर आया तो उसे लगभग बीस हजार सैनिक और तैंतीस तोपें मुहैया कराई थीं। एक समय तो ऐसा आया था कि अंग्रेजों ने

बुंदेलखण्ड के सैकड़ों हजारों वीरों को मारने पकड़ने और पकड़वाने हेतु 500-500 रू. लेकर बीस हजार रूपये के इनाम घोषित किए थे। रानी लक्ष्मीबाई पर सर्वाधिक बीस हजार रूपये के इनाम घोषित हुये थे बुंदेलखण्ड के इस क्रांतिकारी योगदान के बारें में कहे गए विदेशी इतिहास लेखक लडलो के ये शब्द भी कभी नहीं भुलाए जा सकते-

"यदि इन हालात में उन लोगों के पक्ष में जिनकी रियासतें छीन ली गई थीं और छीनने वालों के विरूद्ध भारतवासियों के भाव न भड़क उठतें तो भारतवासी मनुष्यत्व से गिरे हुये समझे जाते।" भारत में अंग्रेजी राज सर सुंदर लाल के ये भाव भी अविस्मरणीय हैं:- "सन् 57 की क्रांति की असफलता को याद किसी भी विचारवान भारतवासी के हृदय को दुखी और संतप्त किए बिना नहीं रह सकती।

अंत में हम यही कहकर संतोष कर सकते हैं कि भारतीय स्वाधीनता के प्रथम संग्राम में बुंदेलखण्ड का योगदान कम महत्वपूर्ण और ऐतिहासिक नहीं।

143, कुरेंचानाका मऊरानीपुरा-284204
जिला झाँसी (उ.प्र.)
फोन- 05178-261298

लेत लचकईया (बुन्देलखंडी)

- चिन्तामणि वर्मा

देखौ कैसी साजी धनियाँ,
देखौ कैसी साजी धनियाँ,
ऐसी कऊँ देखी नईयाँ।
कैउअन खाँ घायल कर डारो,
नैनन चला धनईयाँ॥
मुख मंडल चन्दा सौ चमकै,
बैंदी बीच तरईयाँ।
गौरे गाल, गुलाबी गालन,
परत हँसत में कुईया॥
बारन की चोटी तौ देखौ,
नागन सी लेत लहरियाँ।
चलतन में मारग में देखौ,
कमर लेत चचकईयाँ॥

- फौलादी कलम मार्ग
चेतगिरि कालोनी, छतरपुर (म.प्र.)

यह वीर प्रसवनी भू प्रणम्य

- कु. शिवभूषण सिंह गौतम

एशिया द्वीप में भरत खण्ड।
तहं वीर भूमि बुन्देलखण्ड॥
सतयुग त्रेता द्वापर सुख्यात।
कलि उपजे नर नाहर विख्यात॥
युग-युग की परम्परा अटूट।
कालपि, कांलींजर, चित्रकूट॥
शिव शंकर नें कर गरल पान।
कीन्हें कांलींजर कोट थान॥
तजि अवध यहीं पर रयें राम।
पीड़ित पाण्डव पाये विश्राम॥
चन्देली वैभव के प्रतीक।
खजुराहो के मंदिर सटीक॥
आल्हा ऊदल के बीर कर्म।
अब भी जाते हैं भेद मर्म॥
दुर्गा लक्ष्मी की कथा कीर्ति।
हरदौल हो गये लोक रीति॥
छिति में छाई छवि छत्रसाल।
प्रति पालक घालक शत्रुसाल॥
प्राकृतिक दृश्य अति परम रम्य।
वन पर्वत सरिता सर अगम्य॥
बेतवा, केन, चम्बल धसान।
करती धरती पर धमासन॥
उर में अथाह जल राशि लिये।
चंचल मन चपल हुलास लिये॥
भेंटती यमुन जा भुज पसार।
देतीं अपना अस्तित्व वार॥
ऐसी यह पावन धर्म भूमि।
कवि कुल "भूषण" की कर्म भूमि॥
धनि धरा रत्नगर्भा सुरम्य।
यह वीर प्रसवनी भू प्रणम्य॥

"अन्तर्वेद" कमला कालोनी
छतरपुर, म.प्र. 471001

"अटका देवें भटका"

– अजीत श्रीवास्तव

जिज्ञासा मानव मस्तिष्क की सहज अनुभूति होती है किसी भी विषय को जिज्ञासा वश जानना और अपनी बौद्धिक श्रेष्ठता का परिचय देते हुये दूसरे से उस विषय का बूझ बुझौअल कर शब्द चातुर्य से उसे भ्रम में डालने और सही हल पाने की अपेक्षा को साहित्य में पहेली कहते है और बुंदेली लोक जीवन में 'अटका' कहते है, अटका का शब्द चातुर्य बुद्धि विलास पहिली बारगी भटका देता है। उत्तरदाता उत्तर सोचते सोचते भटक भी जाता है। इन अटकों की विषय वस्तु धार्मिक कथोपकथन, रोजमर्रा का जीवन, रिश्ते नाते, जीवनोपयोगी वस्तुएं होती है। भारतीय लोक जीवन ग्राम्य संस्कृति एवं परिवेश से जुड़ा है, श्रम जीवीवर्ग दिन भर कठोर परिश्रम के बाद चौपालों में या सार्वजनिक स्थानों पर बैठकर बतियाते हुए सहज ही लोकोक्तियाँ, अहाने, किस्सा-कहानी बखान कर अपने सुख दुख बांट लेते है और थकान उतार भुनसारे चुस्त दुरुस्त हो जाते है। यहीं से एक और चलन अटका का शुरू होता है।

"एक बेर की बात है एक घोड़ा पे सुंदर सजी संवरी बिन्नू बैठी हती और घुड़वा की रास एक छैल-छनक मरद पकरें, हंसी मजाक करत चले जात हते। गैल में एक घसियारी घास छीलत हती वा बाई बोली" छैल-छबीले सुनो कुंअर, नातो, इनसे कौन सुगर" कुंअर चतुर हते हंस के उनने ऊ बाई खों। अटका दओ।

"ऐ बिन्नू, तुम छीलो घास, इनकी मोरी एकई सास" सो भईया उन दोऊ बाई और कुंअर को कौन सो रिश्तो हतो, न बने तो बोलो चौं......। उत्तर बाई – सारज (सरहज) और कुंअर ननदोई है। दोउ जनों की एकई सास भई के नई ....। जे कहाउत है अटका।

लोक जीवन धर्म प्रधान होता है, अत: धार्मिक कथाओं, प्रसंगों, कथोपकथनों को लेकर अटको की भरमार है प्रश्नकर्ता अटका पूछता है और उत्तरकर्ता अटकलें लगाता हुआ सप्रमाण उत्तर खोजता है,

राम की देन भरत की सारी ने रई सुदा ने रई क्वांरी राम जी ने भरत जी खों अयोध्या राजगद्दी देन दई सारी राज सत्ता भरत जी की हो गई किन्तु राम भक्त भरत जी की गद्दी पर नहीं बैठ इससे गद्दी सादी सुदा होते हुए भी क्वांरी रह गई।

एक दुविधा भरा अटका देखिए-

"खसम करन गई बेन तुम्हारी दोउ तरफ से मा हमारी," खर दूषण-रावण से कहते हैं तुम्हारी बहन सूपनखा राम जी के पास विवाह प्रस्ताव लेकर गई थीं और नाक कटा आई तुम हमें राम से युद्ध करने कह रहे हो हमाई तो दोनों तरफ से मौत है, नई लड़ते तो तुम रावण मार डालोगे और लड़ते तो राम मार डालेंगे। एक और विचित्र किन्तु सत्य प्रसंग देखिए।"

"तोरी बउ ने मांगो थो, सो हो गओ जो, उते डरे हैं ये इते धरे हम जे" (हनुमान जी संजीवनी बूटी वाला पर्वत ला रहे थे भरत जी ने बाण से उन्हें घायल कर आकाश मार्ग से नीचे गिरा दिया तो हनुमान जी भरत जी से बोले तुम्हारी माँ ने मांगा बरदान तो रामजी को बनवास हो गया लक्ष्मण जी शक्ति लगने से घायल पड़े है तुमने हमें यहां गिरा दिया।)

हंसी ठिठोली के बीच अटकों का स्वरूप भी हास्य प्रधान तथा द्विअर्थी लगाया जाने लगता है किन्तु उनका अर्थ सीधा-साधा होता है।

"पारवती को गोला, शंकर जी को आड़ो गुइंया री मैं तोसे पूंछों रामचन्द्र को ठाड़ो"

उत्तर – टीका (तिलक) पारवती जी की बिंदी गोल होती है, शंकर जी का त्रिपुंड आड़ा लगाया जाता है और रामाचंद्र जी का रामानंदी तिलक खड़ा लगाया जाता है।

"सई -सर्र सुतरी सरकावे वारो कौन, सीता चली मायके लौटावे वारो कौन"

उत्तर – नदी

जीवनोपयोगी वस्तुओं को लेकर अटकों के अम्बार लगे है आशु कवि प्रकृति के व्यक्ति देखते देखते अटका बना लेते है।

"ठाढ़ों हिन्ना किच-किच करे, अन्न खाय न पानी पिए"

उत्तर – दरवाजा

"चार पावनें चार लुचई, एक के मों में दो- दो दई"

उत्तर – खाट (चार पाए और चार पाटीएक-एक पए में दो-दों पाटियों फंसा दी जाती है।)

"नाऐ गई, माऐं गई चौखरो लटकाऐं गई"

उत्तर-ताला, यहां वहां चले जाना दरवाजे पे चूहा जैसा

वाला लटका जाओ।

अटका पूछने की एक खास कला होती है जिसमें तुकबंदी करता हुआ पूंछने वाला एक सवाल भी ठोक देता है जैसे "सोचो समझो चतुर-सुजान, होये अकल तो लगाओं ज्ञान, जा ने बने तो बऊ से पूंछ अर्थात अपनी बुद्धि का उपयोग अटका उत्तर देने में लगाओं यदि न बने तो अपनी माँ (बऊ) से पूछो यानें बुद्धि की आपेक्षा अनुभव अधिक व्यवहारिक एवं जीवनोपयोगी है।"

चलते-चलते बचपन की एक मीठी सुहावनी शाम याद आ गई, हम छोटे-छोटे भाई बहन चौंका में रोटी खा रहे थे और पहेलियाँ पूछ रहे थे जब हमारा स्टाक खत्म हो गया तो रोटी बनाने वाले महाराजन बऊ ने एक अटका पूंछा "सफेद बिलईया हरीरी पूंछ, ने बने तो बऊ से पूंछ" हम सभी बुद्धि चलाने लगे उत्तर पता नहीं चला तो याचक दृष्टि बऊ पर डाली। हंसती हुई बूढ़ी महराजन बऊ ने सब्जी की डलिया से मूली उठाई और बोली मूरा 'मूली' फिर सफेद मूली को दिखाती बोली जे है सफेद बिलईया (मूली का सफेद हिस्सा) फिर हरी भाजी पर हाथ रखा (जे है हरीरी पूंछ हरे रंग की पूंछ) बऊ के अटका पर हम सब हंस पड़े।

यह हैं बुंदेली अटका जो देवे भटका

- 291 सिविल लाइन्स-8, दमोह (म.प्र.)
मो. 9425456144

लोक गीत

- श्रीमति माधुरी बड़गैंयाँ

1. बैलन को रोक पिया अपनो सो देख जिया
   ले लो कलेवा में ठाड़ी पिया।..2
   ताती ताती बैहर चले गहरी में गैल करे,
   ऊपर से घाम परे नेंचे जा धरती तपे॥
   ऐसी ततूरी में आई पिया,
   लेलो कलेवा में ठाड़ी पिया।
2. बैलो की धन्य छाती जिनपे धरी जान थाती,
   खेतन के पांव परे, 2 जिनकी हम छाव पले।
   फसलो की जय मनालो पिया,
   बैलो को चारो चरा लो पिया।
   ऐसी दुफारी में आई पिया,
   ले लो कलेवा में ठाड़ी पिया।
3. मोड़ा मोड़ी घरें परे, तुम तो इतें हल में लगे
   मैं तो आई छोड़ उन्हें को है पानी को उन्हें
   रोटी जा अमिया संग खालो पिया।
   ले लो कलेवा...
   बैलन को रोक पिया अपनो सो देख जिया
   ले लो कलेवा में ठाड़ी पिया।

- हजारी वार्ड हटा

दर्दीले दोहे

- डॉ. कमलेश आलमपुरी

दिल्ली तैंने देख लये बड़े-बड़े सरताज।
रई मुछाँरियन की कबहुँ मुछमुडन की आज॥
नेता चौकस बाज से, जनता चिरई अचेत।
जबहिं लगत मौका तबहिं मार झपट्टा देत॥
बहुत जमानों देखलओ, ऐसो कबहुँ न आव।
पानी बिकत बजार में रस-गोरस के भाव॥
दो टकिया की नौकरी, महंगाई की मार।
भामिनि रोबै भिण्ड में, बस्तर में भरतार॥
जिय जारत आतप कढ़ौ, आँखियन से बरसात।
सीसी करतन बीत गयौं शीत कपाकें गात॥
होरी मनीं न दिवारी, कटी न सुख सें रैंन।
अड़ा बैरियर सौ जिजी, अजब गजब जा बैन॥
केसौ राज-समाज है तनक न जाकों लाज।
बेटी चढ़े दहेज की बलिबेदी पै आज॥
भारतवासी काय पै इतनो करत गरूर।
भेंट आग की हो रई बहुयें बिना कसूर॥
पटवारी, पंडा, पुलिस, पेशकर पतरौल।
पंच पूत जे प्रजा कों रहे प्याज सी पौल॥

-आलमपुर (भिण्ड)

"साहब भड़या पानी लै गये"

– अजीत श्रीवास्त

चौंपाल के चौंतरा पै भारी भीर हती गांव के बिलात जनें बैंठ बतया रये ते वैसें तो वे सबई जनें रोजई गप्पे करबे जुर जात ते, आज बातई-बातन में पानी पै बैस होन लगी रामदीन ने कई। "काहो अब पानी तौ संसार में जैसे बचोई नइयाँ, पाँच-छै बरस से बरसोई का है, कुजानै का हो रऔ"

हल्के कक्का ने समझाओं - भइया वैसें देखों जाये तौ दोप हमई औरन कौ आ है.....। उनकी बात चौधरी मास्साब ने काटी- "कक्का बिल्कुल सांसी आ कै रये पानी की हमने कभऊ चिंता ही नई करी, चिंता का ऊखौं कुछ समझोइ नइयाँ"

"का कै रये मास्साव, पानी तो भगवान कौ आय, बोई बरसात है बौई तरसात है, हम औरन कौ का दोप....।"

गुमना को मौड़ा ने कई इखौं जवाब लंबरदार जू नै दओ "सुनो भइया हम जे पोलीथीन की थैली ला रये बाजार सें, घूरे में ढेर लग जात सो उनै बार देत, ईसें जौन धुआं कड़ रऔ बौ कार्वनडाईक्वाऊत, धुआ अपन जानतइ हैं ऊपर खौं उड़त सो सीधौ आकाश मैं जात, ऊनै आकाश में एक छेदो कर दऔ.. ...।"

चौधरी जी बीच मैं बोल परे- "सब जनै कान खोल के समझ लेवें, जौ आकाश हमाऔ वायु मण्डल आ कैलात, जौन है सो तौन, सूरज की जौन गरमी हमाई धरती पर आत, ऊखौ जेई आ छानत, और गरमी रोके रात अब ऊ छेदे सैं सूदी सूदी सूरज भगवान की किरनें आ रई ऐई सै पृथ्वी गरम हो गई।

"वा पृथ्वी गरम होत तबई तौ पानी गिरत चौधरी मास्साव"

"तुमै पतौ है, कि पृथ्वी के तीन तरफ सागर-समुद्र आ भरो, और कितनौ पानी बरफ बनों पड़ों है अरे गरमी सै बा बरफ पिघल कें समुद्रन में गिर रई सौ वे होरये ठन्डे, पानू ठण्डों भऔं सो उड़ नई रओ भाप बनकै, ऐई सैं समुद्रन के पानी सैं बादर बनत ते, बेई बादर आ बरसत ते.....।"

"मास्साव तुमने तो आँखें खोल दई, पालीथीन की धुकनाा इतेक नुकसान आ पौंचा रऔ"

"पालीथीन अकेले नई, गाड़ी कौ डीजल, पेट्रोल कौ धुआँ, चमड़े कौ धुआँ, बसन कौ धुआँ, पटाखन का धुआँ, सब ऊपर जाकै आकाश खौं आ मिटा रऔ, और पानी उड़त जा रऔ"

"पानी की जा दशा तौ कभऊं नई भई, सबरे कुंआ-कुईया, ताल-तला,नारे नरिया सबई तौ सुखा गये"

रामदीन ने कई-"जा बात सांसी है कि हम औरन ने पानी कौ ना तौ जोरबे, बचाबे, कछु करौ, ना फालतू बैबे सें रोको अब दस-दस मील से पानी आ रऔ, दिन दिन भर लो 'पानी-पानी' में लगे हैं। गांव में देखौं तौ सबरी काको-जिजे बैठकैं पानी पैई चरचा कर रई।"

चौपाल पर ई तरा कीं चरचा होई रई तीं कि कौनऊ ने कई-"पुलिस आ रई, उनकौ डिग्गा आ रऔं"

"काहो पुलिस काये खौ गांव मै आई, कछु भओ है का"

तबई पुलिस की बड्डी गाड़ी-चरचरा कै ठांडी हो गई। ऊ से दो-चार सिपाई उतरे फिर गांव कौ गुलई खवास उतरो। सब जनन ने पुलिस सै राम-राम करी, चौंतरा पै बैठाओ, काऊ ने कौनऊं मोड़ा खौं पानी पीवे लावे इशांरा कर दऔ, कछु बीड़ी जलान लगे उनके लानै, कछु सुपाई तमाखू काटन लगे, तबई चीफ साव बोले-

"जो गुलई खवास भुनसारे सैं थाने मैं चिल्ला रऔं कि साहब भड़या पानी लैं गये, सौ वोई की जांच पड़ताल खौं हम औंरे आये हैं।"

सबखों अचरज सो भओ, रामदीन नै कई "काहो गुलई कबकी बात है कबै पानी की भड़याई हो गई।"

"राते, मैंने औ तुमाई बहू ने रात कै पानी प्लास्टिक की दो शिशी में धरो, ऊखों पौलीथीन में धरो, कपड़ा कौ छन्ना सैं पुटरिया बनाई, खटिया के तरें एक हांथ गढ़ा खोदो ऊमें गाड़ दई, फिर जगा ज्यों की त्यों करी लीप दओ, ऊपर सैं चकिया कौ पाट लगा दओ, ऊपर सै खटिया बिछा दई, पर रातई मैं..."

गुलई रौन लगौ, असुंआ आंखन सै छलक आये चौधरी बोल परे-"अब जान कइये कि बोई खटिया पै सोत रये और भड़या पानी की भड़याइ कर लै गये..."

"बिल्कुल एसइ भओ कक्का, हम औरन खौं पतौ नई चलो औ खदरा खोद के भड़या बोतल उठा ले गये।"

"कैसा मूरख है ई जमाने मैं जब पानी बरसत नईयां। कुआं नदियां, तला सूख रये, जमीन में गाढ़ के पानी रखौ जा तौ सबरे भड़या जानत, का तुमाये गांव में बैंक नईयां अरे मई जमा कर देते, चौकीदार खौ दे देते, पानी की रक्षा तक नई कर पात, औ हम औरन खौं दोप देत" सिपाही गुस्सां हो गया।

"आं हां साब, रात कै बिजली चली जात कटौती चल रई, वोई टैम खतरा हो जात" चीफसाव बोले-"अरे पानी नईयां तौ बिजली काये सै बनैं, पानी सै तौ पूरौ जगत टिको और कौनऊं

का पानी तो नई चुराओ कौनऊँ नें।''

''साब सांसी कयें, बोई पानी के साथ मैंने सोने की अंगूठी, लुगाई की करदौनी धर दई ती, पर भड़यन ने उयै तो छुऔ तक नईया''

''अरे ई समय पानी ही सबसे कीमत रखत सोना चांदी हीरा जवारात की खौं चानें'' ''हओ जू आपन की ठीक मरजी भई'' हल्के कक्का नें सिपाई की बात हांथ जोर कै मानी- ''पै इतेक पानूं गुलई खौं कांसै मिलो''

''जेइतो हम सोच रये, गढ़ा में गाढ़वे पानी खवास खौं कां से मिलो, कारे -बतात काये नईया.......''

''दद्दा में बड़ागांव न्योते में गऔ तो सो उतई सै चार बोतलें पानी मसक ल्याओ रामू कक्का कै इतै सें'' हाथ जोड़ गुलई खवास बोलो सौ सिपाई खुनसा परो।

''जौ बड़ागांव कौ रामू बड़ों पानी बाला हो गऔं ऊके इतै छापा मारने पड़े, तुम औरन नै बरसात कौ पानी खौं कभऊ बचाओ नईयां कभऊ नदी नरवा, तला, कुंअन खौ गहरौ तक नई करौ पानी को मोलई नई पैचानौ''

''बा तौ ठीक है, तुम औरें जा बताव गुलई कौ पानी कीनै चुराव हुइये, कोऊ नै कही खास बात देखी हो तो बताव? ''सिपाई ने कई सौ गांव कौ चौकीदार नै कई, कि दो दिना पैले लबूदे कुम्हार के नन्ना मरे ते, पर उनकी लकईयां में इसमशान में चार-छह लोग गये ते, सपरवे लोगन खौं पानी ना हतो.....''

''कहीं उन्हीं नै तौ नई पानी की भड़याई करी ?'' एक सिपाई ने कई तो लोगन नै मनाकर दऔ कि वे ऐसो नई कर सकता।

''देखों पानी की कमी से सब दूबरे हो रहे हैं कौनऊ गांव कौ मोटा तौ नई हो रओ ?''

''आं हां साब, सबरे चीकड़ उन्ना पैंने घूम रये, कुल्ला खों तक पानी नई बचो, बासन-भाड़ेकी जगा कागज पत्तलन से काम चला रये, हाँ जो दस-दस मील से हैंडपंप चला कै पांनू ला रये वे जरूर पैलवान हो रये, लोग बाग बिना पानी कौ सादा खाना खा रये और कम खाना खा रये'' बूढ़े हल्के बाढ़ई नै कई।

''देखो सब जगा पानी की चौरी हो रई. अखबार टी.वी., सब मैं पानी की भड़याई की खबरे आ रई, काल शहर में तीन मंजिला पर पानी की टंकी बनीती, सो भड़या पानी की सटक डाल कैं पानी चुरा ले गये''

''चिरईया, जानवर मर रये साव, काल रेडुआ में खबर हती कि एक खौं पानी मिल गऔं सौ वौ खुशी सें पगला गऔं, बिरछा डांग सब सूख गये साब'' एक लरका नै कई सौ चीफ साब बोल परे ''काल की तो सुनी, एक लरका नै पानी डुकरिया कौ गरों दवा दऔ, पकरो गऔं, सौ ऊनें बताऔ, वा बार-बार पानी पियत ती और वौ भर-भर कैं हैरान हो गऔं तौ''

''राम राम का जमाना आ गऔ चीफ साब, ऐसों लग रऔ पुरानौ जमाना लौट रऔ, अब हैंडपंपन पै लोग लुगाई, दोई लैन लगा रऐ, पानी नईयाँ सौ अकाल आ पर रऔ,''

राम मिलन ने कई सौ ऊकौ लरका बोल परो ''दद्दा हमाई किताब में लिखौं कै सौ में से तीन हिस्सा पानी पीबे लायक है पृथ्वी पर, और पानी ठोस, द्रव्य और गैस रूप में रत है, ऊखों कौनऊ नसां नई सकत, पै सबने ऊखों पीबे लायक नई रन दऔ''

''तुम रन दो छोटू, जौ बताओं कि गुलई खवास कै पानी की भड़याई को कर सकत चीफ साब ने पूछों सो सब चुप्पाई साध गये एक सिपाई ने कई-

''देखों आज काल हमाये इतै जितने रिपोट दर्ज गई सबरी पानी की भड़याई की डर रई, ईसें सबई सें निवेदन है कि पानी खौं आप औरन नै जैसे नाश करो है सो आप सब जानतई है अब जो बचो है मिलरऔ है, ऊखों की समार कै रखो, भड़याई हो जात सो हम औरन ,खौं परेशान करत''

''कारे गुलई, तोरी काऊ से दुश्मनी ती का ?

''आं हां सरकार''

''कानऊ पै शक हो, कौनऊ धरती में गाड़तन देखो हो?''

''मैं कां कै दओ सरकार, मैं तो खुदई चक्कर में पड़ो हें को लै जा सकत पानी''

तबई गांव के मास्साब आ गये ''राम राम पौचे, सबई खों, का हो गऔ'' ''कछू नई मास्साब गुलई खवास को पानी राते भड़या चुरा लै गये''

''देखौं हम तौ गाँव बारन खो कबसें समझा रये,स कि नदी, नाले, बांध, तला, कुंये बावरी, नलकूप, नहर झील, सब साफ रखौ उनमें श्रमदान करकै गैरो कर लो, कोई सुनतई नई हतो, अरें पानीदार हते, तो पैलें सोचते किताबन में लिखो है कि पानी गये न ऊबरे, मोती मानुष चून ''पानी नईया तौ कछु नइंया भइया''

''आप ठीक कैरये मास्साब, लोगन खो पानी कौ मोल समझई नई आत, अरे रामायण में लिखो हैं ''छिति, जल, पावक, गगन, समीरा इनई पाँच तत्वन सै सब कुछ बनौ है, जल भी येई में शामिल है, सबरे जीवजन्तु हरियाली येई सै तौ है''

''अरे चीफ साव लोगन कौ आँखो का पानी मर गओ है, अब पानी-पानी हो रये, अब आ जितै पानी मिल रऔ, उतै

सुनतई मौ में इनके पानी आ जात, हम तौ कत वा कहावत है नइयां कि इनखौं ऐसी जगह मारदो जिते पानी तक न होय, सो वेई हालत में आ गये जे सब,''

''मास्साब सांसी कैरये, हम औरन खों तो चुल्लू भर पानी में डूब मरना चइये, हम औरन की आंखन कौ पानी मर गओ तो, सो पानी में रैकें मगर सैं बैर करत रये, देखों कौनंऊ धर्म होय उमें मंदिर, मस्जिद, गुरूद्वारा, भगवान सें पैलें पानी कौ काम पैले होत, तब कत भगवान कौं याद करौ, दर्शन करौ सरकार कतती की बरसात कौ पानी हो गऔ, अब मजा करौ और भजौ मन चंगा तो कठौती में गंगा'' गड़ा खोद कैं इकट्ठौ करो, नाली नहर सें तला में डाल लो पै सबकौ खून तौ पानी।

लम्बरदार ने लम्बौ भाषण सौ दऔ,

''चीप साब, हम स्कूल मैं पढ़ात हैं, लेकिन गांव वारन खौं पानी बचाबें हमेशा समझात रये, नल की टौंटी सुधरा लो, पानी ना गिराओं, पै कोऊ मानें तब ना, हमने तौ जा भी बताई राम ने गंगा के हाथ जोरे, सागर सें प्रार्थना करी, विष्णु क्षीरसागर में ब्रह्मा जल के कमल पै और भोलेशंकर बरफ के कैलाश में रत, सब पानी की महत्ता बताबे खों, देखों भगवान कत कीखों हैं, भगवान में पांच अक्षर होते भ सें भुवन माने पृथ्वी, ग सें गगन माने आकाश, व सें वायु मतलब हवा फिर बड़े 'अ' कौ डंडा लगो, अ सै अग्नि और अखीर में न से नीर मानै पानी''

''अच्छी बात कई मास्साब नै, पर चिंता तौ गुलई के पानी की है, कारे कैसी हती वे पानी की शिशी, ढक्कन कौन रंग के हते'' एक सिपाई ने पूंछो, गुलई हांथ जोर कें ठांड़ो हो गओ।

''मराज एक शिशी ने नीलों एक मैं लाल ढकना लगो तो दोइयन खौं पालीथीन की थैलिया में धरके कपड़ा की पुटइया बनाकें जमीन में गाड़ दओ तो''

''लाल औ नीले ढकना की शिशी.... एक भीर में खड़ो लरका अचानक बोल परो-

''हां हां बेटा, तुमने देखी का ? सिपाई ने ऊखौं पुट्या कें पूछो-

''हओ गांव का शेरू कुत्ता घूरे में गाड़ रओ तो मड़िया के पीछे वाले घूरे में''

सब खुश हो गये, पूरौ हजम्मा मड़िया के पीछे के घूरे में गओ उतै शेरू कुत्ता एक प्लास्टिक की शिशी दांतन से चगलकें पानी पी रये ते, उये भगाकें घूरे में देखों तो दूसरी बोतल भी मिल गई सबरे हंसत रये भड़या निकलो सो कुत्ता मामलौ निपट गऔ, सो सबखों शांती मिली, लेकिन पानी पे इतनी चरचा सें सबरन खौं पानी की महत्ता कौ पतौ जरूर चल गऔ।

- 'राजीव सदन' नायक मुहल्ला,
टीकमगढ़ (म.प्र.) मो. 9926869545

ग्रीषम रित

- आनंद कंद गुप्त
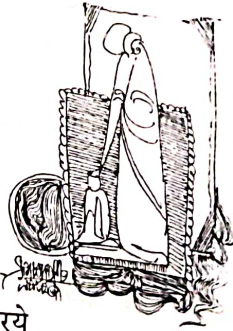
आई ग्रीषम रित दुखदाई।
कैसी विकट लपट सन्नारई
धरती भटिया सी खन्नारई
हरयाई लबरऊ खों नैंयाँ
सूखे बिरछ बेल मुरझाई। आई.......

अखल बखल सब प्रानी होरये
जलकों ढोर पखेरू रोरये
तला पुखरियाँ कुंआ बावरी
सूखी सफाँ किले की खाई। आई.......

जैसें ड्रापर दवा गिराउत
एसइ नल पानी टपकाउत
घंटा भर में वा घर वारी
गगरी एक नई भरपाई। आई.......

चुरू चुरू को पुरा, तरसर रऔ
ऊपर सेंहू जल न वरसर औ
सही करें उपयोग न विरथा जल बगरा यें
होय समस्या दूर हमाई। आई.......

जो दिन भर घामें में तपरऔ
पेट के खातिर, मर्मरऔ खपरऔ
कैंसे युगन ततूनी गरमी
कुली-मजूर सुदामा भाई। आई.......

करियें अपई नियत न खोटी
सब मिल बांट खाइयें रोटी
अपनों देश महान बनइयें
और मेंटयें सकल बुराई। आई.......

- एम.ए. (त्रय) बी.एड.
वरिष्ठ अध्यापक
शा.कन्या उ.मा. विद्यालय
पो. भाण्डेर, जिला (दतिया) म.प्र.

बुन्देलखंड का बुड़की पर्व (मकर संक्रांति)

– डॉ. सुनीता सेन, सहा.प्राध्यापक

मकर संक्रांति का त्योहार हर वर्ष माघ या पूस के महीने में मनाया जाता है। माघ के महीने में यह त्योहार मनाये जाने के कारण इसे माघी का त्योहार या माघोत्सव भी कहते हैं। सूर्य के राशि चक्र के हिसाब से इस दिन सूर्य देवता का प्रवेश मकर राशि में हुआ करता है, इस कारण इसे मकर संक्रांति का त्योहार कहा जाता है।

बुंदेलखंड में हर त्योहार बहुत ही हर्षोल्लास के साथ मनाया जाता है। इस अंचल में कुछ परम्परायें एवं रीति रिवाज हैं, जिन्हें हम पूर्वजों के अनुसार बड़े उत्साह एवं धूमधाम से मनाते हैं। बुड़की बुंदेलखंड का लोकप्रिय त्योहार है। जिसे हम मकर संक्रांति कहते हैं। अंग्रेजी कलेण्डर के अनुसार यह पर्व प्रत्येक 13 या 14 जनवरी को मनायी जाती हैं, संक्रांति के अवसर पर कुछ दिन पहले ज्योतिपी या पंडित जी बता देते हैं कि बुड़की किस वाहन पर सवार होके आयी है, किस रंग के वस्त्र पहने हैं, किस दिशा से आयी है और किस दिशा को जा रहीं एवं कितने समय से कितने समय तक रहेगी। इससे सबके शुभ अशुभ के संकेत भी मिल जाते हैं कि किस राशि के लिए शुभ है और किस राशि के लिए अशुभ। इस प्रकार कुंडली के राशिफल के अनुसार पूजा, विधि एवं उपाय बताये जाते हैं।

इस दिन पानी में डुबकी लगाकर नहाया जाता है, जिससे इसे ''बुड़की'' कहते हैं, डुबकी लगाकर स्नान करना बहुत शुभ मानते हैं 5 या 7 बार डुबकी लगायी जाती हैं इस प्रकार डुबकी लगाकर स्नान करने को 'बुड़की' लेना कहते हैं बुड़की का निश्चित समय होता है उसी समय अंतराल में बुड़की लगायी जाती है, इसमें किसी विशेष स्थान, जलाशय, नदी कुण्ड आदि पर नहाने के लिए जाते हैं, और रमटेरा गीत गाते हैं।

'नहा लइयो काशी जू के झिरियों कट जैहें जनम के पाप रे हो'...

गाँव के लोग स्नान करने से पहले तिल को पीसकर उसका उपटन लगाते हैं फिर स्नान करते हैं। नहाने के बाद सूर्य को अर्द्ध देकर भोले बाबा को जल चढ़ाते हैं और जल चढ़ाते समय निम्न रमटेरा गाते हैं-

'खोलो तो किवड़िया भोड़े ठाँड़े हैं तोर द्वार रे..
हाथ में लोटा, मन में आशा ठाँड़े हैं तोर द्वार रे..'

बुंदेलखंड में एक प्रसिद्ध कहावत है जो इस दिन नहीं नहाता है वह लंका का गधा बनता है। इस त्योहार में तरह-तरह के पकवान बनाये जाते हैं। इस पर्व में तिलों का विशेष महत्व है। इस अवसर पर तिल के लड्डू विशेष रूप में बनाये जाते हैं। इसके अलावा चांवल, आटा, लाई, बेसन के लड्डू भी बनाये जाते हैं, इसके अलावा अन्य पकवान जैसे-खुरमा, ठडूला, गुझिया, पपरिया, सेव, नमकीन, खुरमी, सलोनी आदि बनायी जाती हैं, जो खाने में बहुत स्वादिष्ट होते हैं। यह बुंदेली संस्कृति के पकवान माने जाते हैं। बुड़की देने के बाद भगवान को भोग लगाकर इन्हें खाया जाता है बुड़की के दिन गड़िया घुल्लो का भी विशेष महत्व है, घुल्ले शक्कर के बने होते हैं शक्कर की चाशनी द्वारा विभिन्न आकृति बनायी जाती है। ब्राह्मणों को घी, तिल, दाल, खिचड़ी दान देने का भी विशेष महत्व है, एवं गरीबों को भोजन खिलाने की भी पराम्परा हैं, नदी किनारे स्नान करने, भजन करने, प्रवचन सुनने ब्राह्मणों को दान दक्षिणा देने तथा गरीबों भिखारियों को खिलाने-पिलाने से आत्मिक शांति मिलती है, ऐसा माना जाता है।

संक्रांति के एक दिन पहले के दिन को तिलैयाँ कहा जाता है इस दिन का विशेष महत्व होता है, मंगोड़ी, ठडूला, पूड़ी बनाकर खाने का रिवाज हैं। तेल या घी से चीजें तली जाती हैं, इस कारण इसे तिलैयाँ कहा जाता है, इस दिन तवा नहीं चढ़ता है।

संक्रांति के अगले दिन भरभरात होती हैं। इस दिन घोड़ों और गड़ियों की पूजा होती है चोंक पूर कर चारों कोनों में घोड़े एवं गड़ियाँ रखी जाती हैं। परिवार में जितने लड़के होते हैं उतने घोड़ें जितनी लड़कियाँ होती हैं, उतनी ही गड़ियाँ पूजी जाती हैं।

घोड़ों एवं गड़ियों द्वारा कपड़ों की कठारियों में पकवान भरकर बाँध दी जाती हैं। फिर उनकी चंदन, चांवल, फूल से पूजा की जाती है, लड़के एक-एक घोड़े की लगाम पकड़कर कुछ दूर खींचते हैं बहनें पूछती हैं कि जो घोड़ा कां सें आओ और का खौ जा रऔ, भाई उत्तर देता है कि घर सें आओ और

नौकरी खौं का रऔ, बहनें रास्ता रोककर डाँढ़ (दाम) मांगती हैं, तब भाई रुपये देता है बहनें भाइयों को नाश्ता देती हैं और सिर पर हाथ रखकर भविष्य में सफल होने की दुआँ देती हैं और गठरी खोल ली जाती है और किसी-किसी परिवार में यह गठरी बसंत पंचमी के दिन खोलने का रिवाज होता है। इस दिन की लोक मान्यता यह है कि जो सफर करता है वो पूरी साल घोड़े की तरह घूमता रहता है, इस कारण इस दिन सफर नहीं किया जाता है।

हम जानते हैं कि मकर संक्रांति अपने बुंदेलखंड में बहुत उल्लास एवं खुशी के साथ मनायी जाती है। मकर संक्रांति के दिन जगह-जगह पर बुड़की के मेले लगाये जाते हैं। यह मेले सामान्यत: प्रसिद्ध मंदिर नदी या बांध के आसपास लगाये जाते हैं। ग्रामीण क्षेत्रों में यह मेला अत्यधिक लोकप्रिय है। मेला का अर्थ है, मेल-मिलाप, दिन भर परिश्रम करने के बाद मनुष्य दूसरे लोगों से नहीं मिल पाता है, क्योंकि वह थक जाता है लेकिन मेला एक स्थान है जहां रिश्तेदार, पड़ौसी, दोस्त सभी लोग मिलते हैं। बड़े बच्चे बूढ़े साल भर तक इंतजार करते रहते हैं। बच्चों के लिए बुड़की के मेले अत्यधिक रोमांचकारी होते हैं। स्त्रियों को साज श्रृंगार करने वाली चीजें आसानी से मिल जाती हैं जो उनको पसंद होती हैं। यह चीजें उचित दाम में मिल जाती हैं। अत: मेले में छोटी से छोटी चीज अर्थात आवश्यकता वाली सभी वस्तुऐं आसानी से मिल जाती हैं। मेले में बच्चों के लिए विभिन्न प्रकार के झूले लगे होते हैं। जिनके लिए वे विशेष रूप से उत्साहित होते हैं और झूलकर आनंद भी लेते हैं उनके लिए विभिन्न प्रकार के रंग बिरंगे खिलौने भी जाते हैं उनके सबसे लोकप्रिय खिलौने होते हैं लकड़ी की गाड़ी, झुनझुना फिरकी, सीटी, डुगडुगी आदि, इन्हें पाकर बच्चों के चेहरे पर मुस्कान आ जाती है और वह अति प्रसन्न हो जाते हैं। उनके चेहरे खिल जाते हैं। इसके अलावा मेले में खाने पीने वाली चीजें भी उपलब्ध रहती हैं। किराने का सभी समान एक जगह मिल जाता है। जैसे दाल, दलिया, घनिया, मिर्च तथा अन्य मसाले आदि। इसके अलावा चाट, फुल्की, मगोड़ी, गन्ने का रस, समोसा, लच्छा आदि, जिन्हें लोग दोस्तों के साथ खाकर मजा लेते हैं। इसके अलावा मेले में विभिन्न प्रकार के अजूबे भी आते हैं जिन्हें लोग अचम्भे के साथ देखते हैं। इसके अलावा सर्कस, झांकी, नाचगाने जादूगर भी आते हैं। शिल्पकारों द्वारा बनायी गई सुंदर मूर्तियाँ भी बिकती हैं। चित्रकारों द्वारा बनाये गये सुंदर सुंदर चित्र भी मेले में दिखाई देते हैं। इन्हें भी अपनी प्रतिभा उभारने का मौका मिलता है।

इस प्रकार सजावटी चीजें भी मन पसंद की आसानी से मिल जाती हैं। फसल पक कर तैयार हो जाने पर किसान अपने अनाज भी बेच लेते हैं। हर जाति, धर्म, वर्ग के किसान मेले में बिना किसी भेदभाव के खुशी से झूम-झूम कर नाच गाया करते है। रंग-बिरंगे कपड़े पहनकर परम्परागत ढंग से कलाकारी के साथ गाते और नाचते हैं। बच्चे, युवक, युवतियां बड़े उत्साह से देखते हैं।

मकर संक्रांति के अवसर पर गाये जाने वाले लोकगीतों बाम्बुलिया अथवा भोलागीत गाये जाते हैं। इसके अलावा गणेश, गौरी, नर्मदा, अत्यात्मिक गीत भी गाये जाते हैं। बुंदेली गीत भावों से ओत-प्रोत होते हैं। यह गीत हरमोनियम, तबला, ढोलक, मंजीरा बजाते हुए। बड़े आनंद के साथ गाते हैं, उनका मानना है कि यह त्योहार गौरीशंकर का है। भोलेबाबा को भजन सुनाकर प्रसन्न करने से उनकी कृपा हम पर सदा बनी रहेगी। इसके अलावा घर में दुख, दर्द, भय, क्लेश आदि दूर होकर सुख समृद्धि मिलती है। बुंदेलखंड में एक परम्परा और है कि वह हर रूप में ईश्वर का रूप देखते हैं और उनकी कृपा का अनुभव करते हैं। जैसे नर्मदा नदी को नर्मदा मैया कहकर पुकारते हैं। धरती को धरती माँ कहकर पुकारते हैं। जो हमारे परिवार का भरण-पोषण करती है। बुंदेली जनजीवन में नर्मदा मैया को अत्यंत महत्व एवं विशेष स्थान है।

बुन्देली जनमानस का नर्मदा मैया के साथ घनिष्ठ संबंध है, पूर्वजों के अनुसार नर्मदा मैया में स्नान करने से रोग, दुख, क्लेश, पीड़ा दूर होकर सुख समृद्धि आती हे और वह हमारी मनोकामना पूरी करती है। कुछ लोगों की परम्परा है कि वह मकर संक्रांति के समय पीढ़ियों से बाम्बुलिया के माध्यम से नर्मदा के प्रति भावांजली अर्पित करते चले आ रहे हैं।

वास्तव में मकर संक्रांति अपने आप में कितना विशेष तथा अनूठा पर्व है। इसमें तिल, गुड़ तथा खिचड़ी का समरसता का प्रतीक माना जाता है। जैसे खिचड़ी दाल चावल का मिश्रण होता है। इसका मतलब यह है कि अलग-अलग होते हुए भी हम एक हैं। तिल गुड़ को मिलाकर लड्डू बनाये जाते हैं। जो एकता का प्रतीक तथा बंधे रहने का एहसास कराते हैं। कि एक बनकर रहने में जो खुशियाँ हैं वह अलग रहने में नहीं।

इस प्रकार मकर संक्रांति का पर्व तीन दिन तक बड़ी खुशी और उल्लास के साथ मनाया जाता है। जिसका हम वर्ष भर इंतजार करते हैं।

संक्रांति का यह त्योहार ऋतु परिवर्तन काल में मनाया जाता है। खरीफ की फसल आ जाने से किसान खुशी से फूला नहीं समाता। अत: फसल आ जाने की खुशी के कारण भी यह यह पर्व बड़े उत्साह से मनाया जाता है।

इस कारण ऋतु एवं फसल का भी आपस में संबंध है यह दोनों मिलकर भारतीय त्योहार तथा भूमि से जुड़कर सांस्कृतिक आयामों को प्रतिपादित करते हैं।

यह त्योहार भारतीय जनजीवन को अंत: एवं बाह्य दोनों रूपों से प्रभावित करता है, इस त्योहार को उजाले के रूप में उजाकर कर दिया है।

पूस और माघ का महीना शीत काल का माना जाता है इन दिनों सर्दी अपने चरम पर रहती है। पहाड़ी स्थानों पर हिमपात भी हुआ करता है। मैदानी इलाकों में धुंध और पाला पड़कर दिशाओं को धुंध और धरती को सफेद कर दिया करते हैं। ओस पड़ने से गीलापन रहता है लकिन फिर भी सर्दी सहन करते हुये सूर्योदय से पहले प्रात: काल पर ठिठुरा देने वाली सर्दी से पवित्र नदियों, कुओं में, नहर में स्नान करके अपने जीवन को धन्य कर लेते हैं। मानव शरीर सर्दी को सहन करते हुए, उसका मुकाबला कर सके इसके लिए शरीर को पूर्णतया स्वस्थ और शक्तिशाली होना चाहिए उसे गर्म रखना आवश्यक है। इसी दृष्टि से इस अवसर घरों में शुद्ध घी, तिल, चास्कू आदि पदार्थ तासीर के गर्म शक्तिदायक तो होते ही हैं। इन्हें शीतजन्य रोगों का प्रतिरोध कर सकने की शक्ति से भी सम्पन्न माना जाता है। इस कारण मुख्य रूप उन्हीं पदार्थों पर आधारित पौष्टिक तैयार किये जाते हैं, जो स्वादिष्ट पौष्टिक, शक्तिदायक होते हैं। गरीब, अमीर हर स्थिति के लोग अपनी आवश्यकतानुसार यह त्योहार मनाते हैं। इस कारण यह त्योहार शुभ एवं पवित्र रूप में स्वीकारा गया है।

व्यक्ति का शरीर आत्मा और मस्तिष्क सभी शुद्ध स्वस्थ रहना चाहिए, मानव शरीर को स्वस्थ और खुश बनाये रखने के लिए अत: एवं बाह्य दोनों तरह के प्रयास करना चाहिए यह त्योहार सुख शांति एकता का प्रतीक है।

बुंदेलखंड में मनाये जाने वाले प्रत्येक छोटा-बड़ा, प्रत्येक जाति धर्म या राष्ट्रीय या ऋतु संबंधी पर्व सामूहिक स्तर पर मनाया जाता है। इसमें अपनी माटी की सोन्धी गंध तो रहती ही है। इसके अलावा सामूहिकता, भावनात्मक एकता, मानवीयता की भावनाओं को भी बहुत महत्व मिलता है। यह पावन पर्व हर वर्ष आकार प्रेम, भाईचारा, एकता का संदेश दे जाया करते हैं। यह त्योहार हमारे पूर्वजों की धरोहर है जिसको सजाना, संवारना एवं इसके महत्व को जागृत रखना हमारा परम कर्तव्य है।

-रेडियो कालोनी के सामने
पन्ना नाका, छतरपुर (म.प्र.)

बुंदेली दोहे

– राघवेन्द्र कुमार उदैनियाँ 'सनेही'

नइयां कोनऊ करम के, तोऊ गम्म न खांय।
कड़ी मुरैं न बरिन हां, हांत पसारें राय॥
जी के घर में जनम सें सौ गइयांरायं।
काव 'सनेही' वे कवे मठा पराओ खांय ॥
बात सियाने के गये मिलकें करियों काज।
बनें बनें के न बनें तोउ न आवे लाज॥
गुन के गाहक सेरन और हजारन यार।
मोनी नोरू के नो मायके गलन गलन ससरार॥
ढंग ढोर से चलें जो उनहां को खुदआय।
जैसें चलतू बैल खों कोउ न अरई लगाय॥
कात 'सनेही' दाउजू करलो तनक उलात।
पाग समारंत राव ना आई जात बरात॥
स्वारथ के जो मीत हैं उठत उनन पे झोंज।
रांय महेरी में अलग और खीर में सोंज॥
सांसउ की कानात है लेव 'सनेही' जान।
काटैं चाटैं स्वान के दोउ तरफ से हान॥
कओ जा कांकी रीत है तुमइ बताओ यार।
घर में अंदयारो मचो दिया धरौ घुरसार।
फरचट्टा सवेरे मिले बातन के रंगरेज।
गुर खावें गुलगुलन से हो जिनको परहेज।

- व्यवस्थापक, शारदा विद्या मंदिर छतरपुर
मो. 9406762156

12 वीं शताब्दी के महानायक आल्हा

– हरगोविन्द 'विश्व'

बड़े लड़ैया महोबे वारे जिनकी जात बनाफर राय।
मानस जाये की क्या गिनती हाथी खेत छोड़ भग जाय॥
फौज कटीली गढ़ महोबे की, जो मरने से डरती नाय।
"आल्हा" संवारे है फौजों को क्षत्री उठत फरेरा खाय॥
आल्हा ऊदल ऐसे नामी जिनका हाल कहा न जाय।
कड़वा पानी गढ़महोबे का जिन पर बात न झेली जाय॥
जन्म का वैरी ये माहिल हैं, बिन चुगली के चूके नाय।
फूट डालने को भैयन में चुगली खाय, रहा न जाय॥
खट खट खट खट तेगा बाजे छपक छपक चलवे तलवार।
चले जुनव्वी और गुजराती ऊन्हा चले विलायत क्यार॥
एक खों मारे दो मर जावें तीसर खोप खाय मर जाय।
मरे के नेचें जिन्दा घुसते ऐसे-लेते जान बचाय॥

"शौर्य गाथाएँ" हमारी चेतना का केन्द्र रही हैं। पौरूपेयता ने सामाजिक, राजनैतिक, धार्मिक राष्ट्रीय एवं नैतिक मूल्यों की ईटों से तथा स्फूर्तिदायक एवं प्रेरक मापदण्डों के गारे से एक विशालतम अजेय दुर्ग गढ़ने का काम किया है और वह पौरूपेयता की 12 वीं शताब्दी के उस वीर, भक्त, धर्मनीतिज्ञ एकता के प्रवर्तक, राजा परमाल(महोवा) के सेनापति दशराज के पुत्र "आल्हा" की।

विश्व के पटल पर जो व्यक्तित्व उभर कर आया उसने युग-युग तक "अमरता" की कहानी गढ़ दी। हर व्यक्तित्व अपने समय की श्रेष्ठ एवं प्रखर रूप ईकाई बनने का प्रबल प्रयास करती है। यहाँ यह भी कहना उचित होगा कि विभूतियाँ इस धरा पर जन्म ही लेती हैं। लेकिन उनको उनका परिवेष भी निखार दिलाता है।

"परिवेस" से तात्पर्य उसके समक्ष मुँह बाये खड़ी परिस्थितियाँ होती हैं। जैसा कि 12वीं शताब्दी में "रजवाड़ी प्रथा" का होना कि राजा का पुत्र राजा और मंत्री का पुत्र मंत्री होगा।

आल्हा एक नाम है उस विभूति का जिसने अपनी जन्मजात शौष्ठवता, तीक्ष्ण रण कौशलता, नीति परायणता मातृ-पितृ गुरू एवं आश्रयदाता भक्ति भावना से जन-जन के हृदयों में श्रद्धा के पात्र बनने की क्षमता पैदा कर ली।

आल्हा के कृत्य एवं विशेषताएं :-

(1) सर्वहारा वर्ग को मान्यता प्रदान करना (नेगीजनों का सम्मान)

(2) दलित, पिछड़े, उपेक्षित वर्ग को उचित मान प्रतिष्ठा प्रदान करना कराना

(3) संगठित एवं नैतिक जीवन शक्ति भावना जगाकर कमजोर से कमजोर व्यक्ति को सहेजना।

(4) जीवन जीने की कला सिखाना, शक्ति का संचार कराना तथा अपने दायित्वों कर्तव्यों के प्रति जागृति कराके उनमें नैतिक मूल्य स्थापित कराना।

(5) धर्म मानव जीवन की आधार शिला है उसके प्रति अगाध आस्था श्रद्धा रखना व्यक्ति का परम कर्तव्य है। इसी धुरी का ध्यान रखते हुए वे माँ शक्ति शारदा (मैहर) के अन्यन्य चरण सेवक बनें।

आल्हा महानायक तथा उनकी शौर्यता, धर्म परायणता, धर्म नीति, राजनीति राष्ट्रभक्ति आदि का सजीव चित्रण तत्कालीन राज कवि एवं सेनापति एवं महाराज परमाल के विश्वास पात्र कवि जगनिक ने बखूवी अपनी कल्पना शक्ति से तथापि दूर दृष्टि का वर्णन किया है जो "रासो" काव्य कहलाया। कवि जगनिक द्वारा रचित "परमाल रासो" यानि आल्हा लोक काव्य अपनी कालजयी शक्ति को आज भी अक्षुण्य बनाये हैं और मैं समझता हूँ जब तक ये धरा, ये नक्षत्र तथापि मानव जाति रहेगी, आल्हा काव्य कालजयी रहेगा।

इतिहासकारों के अनुसार मध्य प्रान्त के तथा उत्तरप्रदेश के बुन्देलखण्ड भू-भाग में लगभग 21-22 चंदेल वंशीय राजा हुए। इनकी पीढ़ी प्रमुखतया परमार वंश से प्रारंभ हुई। 22वीं पीढ़ी में राजा परमाल के 2 सेनापति जस्सराज एवं वच्छराज थे जो अदम्य साहसी वीर थे। एक किवदन्ती अनुसार इन्होंने जंगल में 2 भैसों को लड़ते देखा और उनके सींग पकड़ कर अलग-अलग कर दिया। इसी वीरता से खुश होकर राजा परमाल ने उन्हें अपने यहाँ सेनापति के रूप में रख लिया। इन वीरों का कुल अज्ञात था कालान्तर में ये इनके भ्राता भी हुए। इन्हीं जस्राज वच्छराज के पुत्र आल्हा ऊदल मलखे सुलखे हुए जो वीरता की जीती जागती तस्वीर थे।

आल्हा ऊदल का कार्यकाल 12 वीं शताब्दी का था। सर्वविदित है कि इन रणा बांकुरों ने अपने जीवन में 52 लड़ाईयाँ लड़ी और समस्त में विजयी रहे। इनके साहस से

जलते हुये उच्चकुलीन क्षत्री इन्हें ओछी जाति से संबोधित कर इनका अपमान करते थे, यथा-

नौकर होकर चंदेले का, हमरा करे सामना आय।
जात कमीनी कुल में हीनी, ओछी जात बनाफर राय॥

शायद वन में फिरते रहने के कारण इन्हें बनाफर कहा गया है। कुछ तो जातिगत कटाक्ष और सबसे प्रबल बात पिता की हत्या के बदले की भावना थी, जिसने आल्हा ऊदल को गहरी 'चोट' पहुँचाई और उन्हें निर्भीक, निडर, वीर व शौर्यता का जामा पहना दिया। आल्हा ऊदल के मामा एवं उरहई के सरदार माहिल ने बहनोई राजा परमाल के दरबार में ऊदल के लिए चुनौती भरे तथापि कटाक्ष युक्त शब्द कहे थे कि-

करी वंदगी माहिल ठाकुर, चंदेले से कही सुनाय।
अपने ऊदल कुधर को रोके, वगिया हमरी दई नसाय।
ऐसे तरवरियाँ जो ऊदल, लेवे बाप माहों से दाव।
कान आवाज परी ऊदल के, पूँछी माहिल से सिर नाय।
बोले माहिल सबरी होनी, तुम दिवला से पूछो जाय॥
दोऊ कर जोड़े ऊदल पूछे, माता हाल हमें बतलाव।
माहिल मामा जा रये ते, माहो लेव बाप को दाव॥

तब माता दिवला ने बालक ऊदल एवं 20 वर्ष के आल्हा को अपने हृदय में दहकती पति के कत्ल के रूपी आग को उजागर करती हुई कहती हैं-

आशा लग रई ती जियरा में, कभऊँ समरथ पुत्र हो जाय।
बदलो लेहें अपने बाप को, मौरे जियरा की डाह जुड़ाय॥
रोय-रोय दिवला बतलाओ, माहों ने दस्सराज तड़फाव।
सोवत मारे बाप तुम्हारे, ज्वानी में लूटो सुहाग हमाव॥
कोल्हू में पेरे बाप तुम्हारे, खुपड़ी बरगद दई टंगाय।
सुनके बाते ऊदल जर गओ, गुस्ससा गई बदन में छाय।
वंश मिटेहों मैं जम्बे को, रहिहे पानी दिवैया नायं।

बस यहीं से आल्हा ऊदल संकल्प रत होकर अपने पिता के हत्यारे राजा जम्बे से युद्ध की ठान लेते हैं यह उनका प्रथम संग्राम था जो "माढ़ोगढ़ की लड़ाई" यानि बाप का बदला से प्रारम्भ हुई। इस लड़ाई में आल्हा ऊदल सभी वर्गों का सहयोग लेकर चलते हैं क्या हिंदु क्या मुस्लिम सभी उनके अनन्य सहयोगी थे। आल्हा ने छोटे से छोटे वर्ग को पूर्ण सम्मान देकर उनके विकास की ओर पूर्ण ध्यान दिया। साम्प्रदायिक सद्भाव के प्रति भी वे सजग थे। उनके पिता तुल्य चाचा "ताला सैयद" "तलन्सीराय" तथा उनके पुत्र आल्हा के लिए प्राण न्यौछावर करने के लिए सदैव तत्पर रहे हैं। जैसा कि आल्हा की माँ दिवला कह उठती हैं-

वोली दिवला जा सैयद सो, दादा सुनो बात चित्त लाय।
संगे जैईयो तुम लरकन के, माढ़ो युद्ध खिलैया जाय।
जब से मर गए वाली इनके, तब से ये अनाथ कहलायं।
गोद तुम्माई में सौंपत हों, मेरे पुत्र मिलैयो आय।

आल्हा भी कई-कई बार ताला सैयद से कह उठते हैं कि-

आल्हा बोलत हात जोड़कर, मैं चाचा की लेऊँ बलाय।
जब से मर गए बाप हमारे, गोद तुम्हारी गए बिठाय॥
राम का भिंसुर जामवन्त हैं, और पांडव के कृष्णावतार।
आल्हा का ताला सैयद है, काम करे जो सोच विचार॥

माढ़ों से बदले के लिए, ढेंवा से सगुन पूछ कर जोगी रूप धारण कर ये वीर निकल पड़ते हैं। राजा जम्बे का पुत्र कड़िया (करिंगा राय) से सामना होने पर करिया बोल उठता है-

बोला कड़ियाँ जब ललकारा, अब तुम सुनो बनाफर राय।
जितने आये हो महोवे से, सब का डालू खोज मिटाय॥
जैसी खुपड़ी टाँगी बाप की, वैसी सब की देऊ टंगाय।
इस पर ज्वाप दिया ऊदल ने कड़िया खबरदार हो जाय।
वंश न छोडूँ मैं जम्बे का, मेरा नाम उदयसिंह राय
सोते में मारे बाप हमारे करिख तोखो है धिक्कार
वातन वातन वतवड़ हो गई नकल लागी जवर तरवार।
खट खट खट खट तेगा वाजे, छपक छपक चलवे तलवार।
चलें जुनव्वी और गुजराती, ऊना चले विलायत क्यार।
कट-कट शीश गिरे जवानों के उठ-उठ लड़े लड़ते ज्वान
जम्बे आया जब लड़ने को, मलखे अमरा लियो मनाय
एक धड़ के दो धड़ कर डाले, सर पर से धड़ दिया उतार
बदला ले लिया हैं माढ़ों से, उनको खत्तम डाला मार
इते की बातें इतई पर छोड़ो अब आगे को सुनो बयान...

विश्व के पटल पर अनेकानेक काव्य ग्रन्थों की रचना हुई लेकिन राजा परमार के सेनापति एवं आशु कवि जगनिक द्वारा रचित आल्हा खण्ड एक लोक काव्य कालजयी प्रमाणित हुआ है। तत्कालीन कवियों ने अपने आश्रय दाताओं की शौर्य गाथाएँ उनके व्यक्तित्व पर काफी कुछ लिखा जैसे चन्द्रवरदाई ने पृथ्वीराज रासो, वीसल देव रासो, हम्मीरदेव आदि लिखे परन्तु काल की गति के साथ ये डूब से गए परन्तु आल्हा खण्ड काव्य जन अधरों की शोभा बना और 11वीं शताब्दी से 20वीं शताब्दी तक व आज भी अपनी जीवन्तता बनाये हुए हैं।

आज भी ग्राम चौपालों पर ढोलक की थाप पर ललकार ललकार कर मस्ती में झूमझूम कर आल्हा गायक जब तान

छेड़ता है तो लोगों की भुजाएँ फड़कने लगती हैं और कह उठते हैं वाह रे आल्हा, धन्य है आल्हा, इन्हीं लोक गायकों के आधार पर व उनके अधरों पर बिखरे इस आल्हा के किस्सों को एकत्रित किया। 1865-66 चार्ल्स एलियट ने। और उस नागरी प्रचारनी सभा ने प्रकाशित किया। कवि जगनिक द्वारा रचित मूल काव्य तो आज उपलब्ध नहीं है, परन्तु मटरूलाल के नाम का आल्हा सर्व प्रचलित है। जगनिक की दूरदृष्टि आज कितनी कारगर सिद्ध हुई यह उस सहज कवि ने स्वयं न सोचा होगा। आल्हा राजस्थान, बिहार, मध्यप्रदेश एवं हिन्दी भाषी क्षेत्रों में गाया जाता है। इसकी भाषा बुंदेली होते हुए प्रमुख सैनिक या लश्करी भाषा कही गयी है।

आल्हा में भारतीय संस्कृति के सभी तत्व एवं मूल्यों के दर्शन होते हैं, आल्हा ने प्रमाणित कर दिया कि उच्च कुलीनों के द्वारा छोटे लोगों के प्रति अपमानजनक शब्दावली निरर्थक थी। आल्हा की साहसी प्रक्रियाओं के आगे झुककर स्वयं उच्च कुलीनों ने अपनी बेटियाँ उन्हें ब्याही जिन्होंने ओछी जात का संबोधन करते हुये हीन कहा था। तुलसीदास जी ने भी ऐसा ही कुछ एक चौपाई में इंगित किया है-

"जे बरनाधम तेलि तुम्हारा स्वपच किरात कोल कलवारा"

अब कलयुग में वे ही जातियाँ शीर्ष पर हैं। जहाँ आल्हा शौर्य का पर्याय थे वहीं वे राष्ट्रीय चेतना, संगठन के प्रणेता, धर्मवेता, राष्ट्रभक्त, गुरूस्वामी भक्त थे। वे माँ शारदा के परम भक्त थे। किवदन्ती है कि आल्हा नित्य प्रति भोर के तारे ऊँगने के साथ मैहर में माँ शारदा के चरणों में जासोन का फूल अर्पित करने आते हैं-

तरा ऊँगते ही नर आल्हा माँ को फुलवां देत चढ़ाय।
कब किस रूप में आल्हा आते, विश्व कोई भी समझ न पाय।

आल्हा यद्यपि जनमानस के श्रद्धा एवं विश्वास का केन्द्र हैं, परन्तु इस बात से भी जन-मानस निराश रहता था कि उनका स्वरूप क्या था, ज्ञात नहीं।

लेकिन आज मैहर सतना में एक विशालकाय आल्हा की गजारूढ़ मूर्ति स्थापित हुई है। यहाँ में धन्यवाद देना चाहूँगा अखिल भारतीय महोबिया महासभा जबलपुर को विशेष कर उनके अगुवा श्री भजनलाल महोबिया को व शारदा धाम मंदिर समिति मैहर को जिनके प्रयास से राष्ट्रवीर महानायक की विशालकाय मूर्ति मैहर मंदिर के प्रांगण में स्थापित हो सकी। बुन्देलखण्ड परिसर के अध्यक्ष श्री दीनानाथ शुक्ल व सचिव कामता सागर का योगदान सदियों तक स्मृति में रहेगा।

आल्हा एक ऐसे स्थापित वीर थे जिनके नाम में है इतना असर है कि उन्हें स्मरण कर विजय श्री प्राप्त की जाती थी। जैसा कि प्रस्तुत पंक्तियाँ दर्शाती हैं-

जब "बलख बुखारे" के युद्ध में ऊदल का मल्लयुद्ध हरनन्दन के बेटे गनपत से होता है और ऊदल को लड़ते लड़ते बहुत देर हो जाती है तब ऊदल का घोड़ा बोल उठता है-

बोला घोड़ा जब ललकारा औ ऊदल से कहा सुनाय।
सौ सौ हाथी का बल तुममें अब क्यों रक्खी देर लगाय॥
क्या तू भूल गया आल्हा को, जिससे नाम फतह हो जाय।
क्या तू भूल गया गुरू अमरा, जो असनें में करे सहाय॥
इतनी बात सुनी ऊदल ने, उसके दिल में गई समाय।
भैया आल्हा को सुमरा है, जिसके नाम फतह हो जाय।
छोड़ आसरा जिन्दगानी का फिर गनपत को लिपटा जाय।
ऐसा घुमाया है दंगल में जैसे मुगदर रहा घुमाय॥
दिया दबोचा जब छाती का गनपत गिरा धरन में जाय।
ऊदल बैठ गया छाती पर और गरदनं को लिया दबाय॥

आल्हा वीर के हरेक पक्ष को हम एक सक्षम मानवीय गुणों से यहाँ तक कि देवधर्मिता स्वरूप में पाते हैं। आल्हा ऊदल मलखान सैयद लाखन आदि के घोड़ों से भी है जो बोलते, उड़ते तथा सुनते भी थे। निम्न पंक्तियों में सत्य दर्शाती है-

पिछली टाप रही धरती पर और मस्तक पर धरी जमाय।
घोड़ा उड़ गया नर ऊदल का और अंबर में पहुँचा जाय।

एक जगह माढ़ों के युद्ध में भी ताला सैयद का घोड़ा हरनागर भी उड़ कर उनके प्राण बचाकर ले गया था जहाँ रा करिंगा के महिलों में ताला सैयद घिर गये थे।

आल्हा के मामा माहिल की चुगली पर, कि ऊदल ने आल्हा के बेटे इन्दल को मार कर गंग में बहा दिया है विश्वास करके अपने भ्राता ऊदल की आँखें निकालने का हुक्म जल्लादों को दे दिया परन्तु मलखान की चतुराई से ऊदल बच गए। प्रसंग संक्षिप्त में यूँ है-

लगी कचहरी जहाँ आल्हा की, दाखिल हुआ महलिया राय
चुगली खाई है मामा ने जिसका नाम चुगलिया राय
बोला माहिल नुनि आल्हा से आल्हा सुन लो कान लगाय
मैंने बरजा तेरे भैया खों, मत इन्दल को करे हलाल
काट के सिर तेरे इंदल का गंगा जी में दिया बहाय
एक ने मानी है माहिल की ऐसो ढींठ उदयसिंह राय
हुक्म दे दिया जल्लादों को सब ऊदल को पकड़ो जाय
हॉत हातकड़ी पॉव में बेड़ी गले में तौक दिया डलवाय

ले जाव तुम इसको जल्दी, बबरीवन में पोंचो जाय
आँख काढ़ के तुम ऊदल की, मेरी नजर गुजारो आय
मलखे चिठिया पढ़ फुलवा की, जागादों के पहुँचा जाय
आँख काढ़ लो तुम मृगा की और आल्हा को दे दो जाय
चिठिया लिख दी फिर मलखेने और आल्हा को दी पहुँचाय
अपने बेटे को ले जाओ और ऊदल को दो पहुँचाय
खत को देखा जब आल्हा ने, नीचे गिरा पलंग पर आय
आल्हा पछतायें महलों में, लेकर नाम उदय सिंह राय
आज के दिन जो ऊदल होता, तो मैं लेता बेटा पाय
माहिल की चुगली से सगे भैया को दिया मैं मरवाय॥

इसी प्रकार की माहिल की चुगली से राजा परमार ने आल्हा ऊदल को देश निकाला दे दिया था और उनकी अनुपस्थिति में माहिल ने पृथ्वीराज चौहान को महोबा लूटने के लिये परमार पर चढ़ाई करवा दी। परन्तु परमाल की पत्नि मल्हना के द्वारा देवी से विनय करने पर आल्हा ऊदल को बुलवा लिया जो जोगी के रूप में आकर पृथ्वीराज के हमले को नाकाम कर देते हैं। राजा परमार की बेटी जब तालाब पर भुँजरिया विसर्जित करके जोगियों से भुँजरिया लेती है तो ऊदल को पहचान जाती है। राजा परमार मल्हना बहुत ही दुखी होते हैं और आल्हा ऊदल की प्रशंसा करते हैं उस समय आल्हा ऊदल कह उठते हैं-

भांदो में पंछी घर छोड़े नहीं, बंजारे बनिज न जाय।
भर भादों में दोई भैय्यन को, तुम ने दये निकराय।

आल्हा में संयम की प्रवृत्ति बलवती थी। वे सदैव धैर्य, गहन सोच, छोटे बड़ों की सलाह के बाद भी संयम का ध्यान रखते थे। यथा-

पेली गारी पे न बोलना, दूजी पर फिर करियो वार।
तीजी गाली के कहतन खन, मुँह में खोंस दियो तलवार।

आल्हा साम्प्रदायिक सद्‌भाव एवं एकता के पोषक थे। आज जब साम्प्रदायिक शक्तियाँ सर उठा रही हैं तो आल्हा की विचारधारा आज प्रासंगिक है। आल्हा में ग्रामीणों की मानसिकता है उनकी समस्याओं का निराकरण, साधारणजनों की युयुत्सा व ओज की पूर्णतया संतुष्टि के धरातल पर प्रवृत्ति पायी जाती है।

आल्हा की जीवन्त प्रस्तुतियाँ मैंने भोपाल, रीवा, लखनऊ, छतरपुर दिल्ली आदि में अपने दल के साथ दी है। इन प्रस्तुतियों में हिन्दी साहित्य समिति दिल्ली की प्रस्तुति अद्वितीय थी। इन प्रस्तुतियों में मैंने देखा कि आल्हा मात्र भारत की काव्य धरोहर नहीं है बल्कि विदेशों में इस पर शोध हुआ है। अमेरिका से केलिफोर्नियाँ यूनीवर्सिटी की शोध छात्रा डॉ. सोमा करीन एवं शरद मेरे घर आए और दो घंटे का आल्हा रिकार्ड कर अमेरिका ले गये। दूसरे फ्रांस के मिस्टर रिचर्ड बेन भी मेरे यहाँ आये और आल्हा तथा अन्य लोक गाथा गीत रिकार्ड करके ले गये जो फ्रांस में बखूबी सुने जा रहे हैं। उन्होंने मुझे अमेरिका व फ्रांस भी आमंत्रित किया।

इस प्रकार इस कालजयी आल्हा काव्य को देश में प्राथमिक स्तर से उच्च स्तर तक शिक्षा के पाठ्यक्रम में रखा जाना चाहिए, ऐसा मेरा विद्वानों से अनुरोध है। मैं पुनः इस बात का विशेष अनुरोध करता हूँ कि आज के साम्प्रदायिक, अलगाववादी युग में आल्हा के प्रसंगों को हमारे युवा वर्ग तथापि राष्ट्रीय नेताओं के हृदयों में प्रवाहित किया जायें तो मैं समझता हूँ, इन समस्याओं का उन्मूलन हो सकता है। विशेषकर आल्हा जैसे ताला सैयद व अन्य वर्गों के सहयोग की नियति से सीख ली जावें।

312, तिलकगंज वार्ड,
सागर (म.प्र.)

आदर्श माँ की बेटी को सीख

-राजा राम मिश्रा 'अवधेश'

जाओ बेटी उस घर को जो अब तक थी अनजान।
नहीं शिकायत मिले तुम्हारी इतना रखना ध्यान॥
ससुराल में जाकर प्यारी बिटिया रखना कुल की लाज।
उसी को घर अब समझना अपना छूट रहा है मायका आज॥
सास ससुर है मात पिता अब इनकी सेवा करना।
रहें सदा संतुष्ट न इनकी आज्ञा कभी बिसरना॥
नित प्रात काल उठ सास ससुर के चरणों पर सिर रखना।
ले आशीष सदा उनका तुम सिर माथे पर धरना।
पति की आज्ञा पालन करना घर भर से मिलकर रहना।
घर के सभी काम तुम करना-सास को सुख में रखना॥
जाओ बैटी राज करो आशीष मिले दिन दूना।
महके बगिया तुमरे घर की मेरा अब नंदन वन सूना॥
'अवधेश' सदा तुम सुखी रहो सुखमय बीते जिंदगानी।
करती रहें अनुग्रह तुम पर गौरी उमा भवानी॥

भिड़ारी (हटा) दमोह

सत्तू मन भत्तू

– डॉ. श्यामसुंदर दुबे

कुछ दिनों से सत्तू चर्चा में है। वह रेलवे-स्टेशनों पर उतर आया है। सत्तू सहज-सुलभ भरपूर आहार है। उसका इस जमाने में पुनरागमन सुखद और अचरज भरा है। लोग फास्ट फूड के आदि होते जो रहे हैं। ऐसे में भला सत्तू को कौन पूछेगा! सत्तू वैसे ही खेतों-खलिहानों का संगी साथी रहा है। सत्तू ने होटलों और डिपार्टमेंटल स्टारों की छाया में अपना डेरा कभी नहीं जमाया है। अब जब उसे स्टेशन पर उतार ही दिया गया है तो स्टेशन के स्वल्पाहार केन्द्र अपने भीतर सत्तू के लिए जगह बनाने में कसमसा रहे हैं। सत्तू है तो मट्ठा नहीं है, मट्ठा है तो सत्तू नहीं है। सत्तू को स्वीकारने में अड़चनें आ रही हैं और इसका सस्तापन दुकानदार के लिए सुभीते वाला नहीं है, इसलिए इसकी बिक्री उसे सुहाती नहीं है।

सत्तू की बिक्री का इतिहास भी वैसे बहुत प्रशस्त नहीं रहा है। अक्सर छोटी-मोटी बिसवारी दुकानों पर ही सत्तू बेचने का चलन रहा है। क्योंकि गाँव-देहात में इसे घरेलू स्तर पर तैयार कर लिया जाता है। यों सत्तू तो घर में तैयार होकर ही अपना स्वाद पाता है, या फिर दुकान में रखा सत्तू किसी घर की राह से ही बाजार में आता है।

सत्तू बनाने की मशीनों का अभी तक टोटा है। सत्तू आदमी के हाथ का सीधा उत्पादन है। चने को पानी में डुबाना फुलाना, फिर उसे रेत में भूनना-ये दोनों क्रियाएँ ही सत्तू के स्वाद का निर्धारण करती हैं। मुझे याद है कि जब गाँव में मेरी माँ सत्तू के लिए चना दानों को पानी से भरी गंगाल में डाल देती थीं तब परिवार के सभी सदस्यों को यह हिदायत दे दी जाती थी कि अब गंगाल में कोई हाथ नहीं डालेगा। हम लोग उस समय बच्चे थे। एक बार मैंने रात के अंधेरे में छिप-छिपा कर गंगाल में हाथ इसलिए डाल दिया था कि देखें क्या असर होता है। सुबह जब माँ ने गंगाल के एक चने को छुआ तो व फटाक से बोली कि किसी ने गंगाल में हाथ डाल दिया है-चना ठीक से नहीं फूला है। उस समय मुझे लगा कि जिस चने को हम मात्र एक दाना समझते हैं, वह तो एक जीवित सत्ता है।

चना जब सत्तू के योग्य फूल जाता है, तब उसे थोड़ा-सा सुखा कर भाड़ पर भूना जाता है। भाड़ के लिए प्रायः मिट्टी के बड़े घड़े की पेंदी वाले आधे हिस्से का भाड़ पात्र बनाया जाता है। इसमें बारीक रेत भरी जाती है, और चूल्हे की मंद आँच में इस रेत को एक खास तापांक पर गर्म किया जाता है, तब उस पर चना भूना जाता है। यह कोई सामान्य भूंजन क्रिया नहीं है। भाड़ का चना ऊपर-ऊपर नहीं भुनता वह भीतर तक अपने सूक्ष्म बीज केन्द्र तक भूना जाता है। यह भी ध्यान रखा जाता है कि वह बाहर-भीतर काला न पड़े। जब भाड़ में चना भुनता है तब चने की तबियत देखते ही बनती है। चने को भूनते समय उसकी उलट-पलट कुछ इस तरह की जाती है कि उसकी पूरी सतह पर चिकने का सांवलापन न आने पाए। यही आँच उसे भीतर से भुरभुर-झुरझुर कर देती है। सौ टंच रूप में जब चना भुन जाता है तब उसके भीतर की पीताभा किंचित सिंदूरवर्णी हो उठती है। उसके भीतर से उठने वाली चनैली सोंधी गंध समूचे मुहल्ले को महका देती है।

भाषा अपने मुहावरों को यों ही नहीं गढ़ लेती है। भाषा अनुभवों की लंबी मशक्कत के बाद ही अपने मुहावरे गढ़ पाती है। हमारी तेज रफ्तार जीवन पद्धति में मुहावरे गढ़ने की सामर्थ्य नहीं बची है। हाल-फिलहाल हम भाषा के जितने मुहावरों से काम चला रहे हैं, उनमें से अधिकतर हमारी सहज जीवन पद्धति ने ही दिए हैं। भाड़ पर चना भुनते हुए देख कर ही, उसे तपते-तचते हुए देख कर, उसे भीतर ही भीतर मंद आँच पीते हुए देख कर जब अनुभवशील लोगों ने उसकी छटपटाहट और उसकी वेदना का अनुभव किया होगा, तभी मुहावरे आए होंगे, भाड़ में जाओ। फिर जब अनेक चनों को इस तरह एक साथ भुनते देखा होगा तो मुहावरा आया होगा अकेला चना भाड़ नहीं फोड़ता।

भाड़ में भुने चने का छिलका बिना प्रयास के ही उतर जाता है। यह उसकी तपस्या है-सत्तू बनने के लिए। फिर इस छिलके रहित चने को महीन से महीन पीसने के लिए हाथ की चक्की में डाला जाता है। चने के साथ कहीं-कहीं जौ का पुट भी दिया जाता है। चने की पिसान के साथ अजवाइन, काली

मिर्च, सौंफ आदि मसालों को भी पीस लिया जाता है। कहा जाता है, 'सत्तू मन भत्तू कब घोरे कब खाए/धान बेचारी कूटी-पीसी खाई।' सत्तू बनते चने ने जो सहा है, वह असाधारण है, इसीलिए वह सामान्य जन का सहज साथी है। जंगल से शहर जाने वाले लकड़हारों की बगल में एक छोटी पोटली, लटकी रहती थी, इसमें सत्तू रहता था। मैं अक्सर नदी को पार करके शहर जाता था। नदी में प्रायः उनसे मिला-भेंटी हो जाती थी। वे अपनी छोटी-सी पोटली खोलते। पोटली में से सत्तू निकाल कर साफ समतल चट्टान पर रखते। गुड़ की भेली को पत्थर से पीसते और चट्टान पर रखे सत्तू में मिला लेते। नदी का पानी चुल्लुओं में लेकर सत्तू पर डालते। सत्तू सन जाता और परम स्वाद लेकर वे उसे खा लेते। न लोटा, न कटोरी, न थाली-सत्तू का गुजारा बिना पात्र के हो जाता है। अब देखना यह है कि विश्वग्राम में सत्तू अपना अस्तित्व किस तरह कायम करता है।

- चण्डीजी बाई,
हटा (दमोह) म.प्र.

बुन्देलखण्ड में प्रचलित स्वास्थ्य सम्बन्धी कहावतें

– सरमन लाल शर्मा

1. **प्रात काल की वायु खों, सेवन करत सुजान।**
ता ते मुख छबि बढ़त है, बुद्धि होत बलवान॥

अर्थ – प्रातः काल (सुबह) की शुद्ध हवा को जो मनुष्य सेवन (ग्रहण) करता है अर्थात् सुबह टहलता है, उसके चेहरे की कांति बढ़ती है और बुद्धि का विकास होता है।

2. **प्रात काल नर जो करत, ताजे जल अस्नान।**
चित्त सुगढ़तम होत है, दमकत सुवर्ण समान॥

अर्थ – जो मनुष्य सुबह उठकर ताजे जल से नहाता है, उसका मन सुदृढ़ एवं शरीर सोने जैसा (कांतिवान) चमकने लगता है।

3. **निन्ने पानी जो पियें, हर्र भूँज के खाय।**
दूध ब्यारी जो करें, ता घर बैद न जाय॥

अर्थ – जो व्यक्ति सुबह उठकर बिना कुछ खाए पानी पीता है, हर्र (एक आयुर्वेदिक फल) को भूनकर नित्य सेवन करता है और रात्रि में भोजन के साथ दूध का सेवन करता है, उसके घर कभी बैद (डॉक्टर) नहीं जाता अर्थात् उसे कोई बीमारी नहीं होती।

4. **साहुन ब्यारी जब कब करिए, भादों बाको नाम न लैये।**
कुँआर मास के दो पखवारे, जतन-जतन से काटो प्यारे।
कातक में जब होय दिवारी, ठेलम ठेल करो ब्यारी॥

अर्थ – सावन माह में रात्रि का भोजन कभी-कभार और भादों में कभी नहीं करना चाहिए। कुँआर माह में सावधानीपूर्वक भोजन करना चाहिए। कार्तिक माह में दिवाली हो जाने पर रात्रि का भोजन (ब्यारी) खूब (क्षमतानुसार) करना चाहिए।

5. **चैत में गुड़, वैशाखे तेल।**
जेठ में लटा (महुआ), असाढ़ में बेल।
साहुन सत्तू, भादों मही।
कुँआर करेला, कातक दही।
मर हो न तो, पर हो सही।
अगहन जीरे, पूस में धना।
माघ मसरी, फागुन चना॥

अर्थ – उपर्युक्त 12 महिनों में वर्णित चीजों का सेवन नहीं करना चाहिए। सेवन करने से बीमार होने का खतरा बना रहता है।

6. **दिन में मूली, रात में सूली॥**

अर्थ – मूली का सेवन दिन में गुणकारी और रात्रि में स्वास्थ्य के लिए हानिकारक (आयुर्वेद के अनुसार) माना गया है।

7. **घी दूध के झींगुर से, कुदई मठा के ठेंगुर से॥**

अर्थ – घी-दूध (पौष्टिक) का सेवन करने, परन्तु परिश्रम न करने पर शरीर दुबला-पतला और असामान्य भोजन लेने-परिश्रम करने पर शरीर बलवान बनता है।

-सहायक शिक्षक
शासकीय प्राथमिक शाला, घुटरिया,
दमोह (म.प्र.)

हरदौल चरित

—लक्ष्मी तासकार

सुमरि राम सिय शिव उमा गणपति गिरा गुविंद।
कहत चरित हरदौल के विरच सु रोला छंद॥
बुंदेला ओरछे के लाला हरदौल जाहर।
वीर वीर सिंह देव के वेटा रूप राशि गुण आगर॥
भूप जुझार सिंह के भ्राता धरम धुरीण बहादुर।
नाम सुभग हरदौल सु जिनको अव लो विश्व उजागर॥
ललित चरित तिनको कछु वरनो सुनिये चित्त लगाकर
जियत पुन्न वहु किये मरे पे थपे जगत में आकर॥
एक दिना इक चुगल ने चुगली कीनी नृप से जाकर
प्रीत लगी हरदौल कुंवर की तुव रानी से ठाकुर॥
सुनत भूप मन पाप समानो रानी महलन जाकर
कही प्रात विष देव लला को भोजन संग मिलाकर॥
सुनत वचन रानी घवरानी बोली विनय सुनाकर
कारण कौन वंधु निजमारो कहो कंत समझा कर॥
की उन काम कियो कछु खोटो के लियो राजदवाकर
के कोउ देस उजारो तुमरो के धरी द्रव्य चुराकर॥
क्रोध वंत तव राजा वोले नैनो लाल दिखाकर
जो नहि करहो कहो हमारों मारों खरग उठाकर॥
गुस्सा देख नृपत को रानी बैठी वदन छिपाकर
रंग महल जा राजा पौड़े सुंदर सेज जहाँ पर
होत भोर नायन बुलवाइ रानी चेरि पठा कर
आय खवासन करो नेवतो लाला महलन जाकर॥
इतरानी ने व्यंजन विरचे रूच रूच जहर मिलाकर
भई रसोई तैयार वुलायो लाले भोजन खातिर॥
कर अस्नान कुंवर शिव पूजे चंदन खौर लगाकर
केश समार पाग शिर धारी पहिरे वसन सजाकर॥
बाहर आय कुंवर ने टेरे प्यारे नौकर चाकर
चलत छींक सन्मुख भई निकसो कूकर कान हिलाकर॥
अशकुन देख कुंवर मन चिंता गमने शंभु मनाकर
जो विधना लिख दई भाल में कौन मिटइया ताकर॥
आवत लाला भौजी देखे लीन्हो आगे जाकर
चरन धोय चौकी बैठारो परसे थार लगाकर॥
परसन व्यंजन रानी रोवे नैनन नीर बहाकर
रूदन करत भौजाई देखी बोले लाला तापर॥

कारण कौन रूदन करो भौजी कहो भेद समझाकर
जौले भेद ना भौजी केहो अशन करें ना ठाकुर॥
हाथ जोर तव भौजी बोलीं सुनिये प्यारे देवर
विष डराय वनवाइ रसोइ तव मारन हित ठाकुर॥
सुन हरदौल कुंवर भौजी से बोलो धीर धरा कर
होनी होय अवश सो होवे कौन मिटैया ताकर॥
असकहि लाला जेवन लागे संग के नौकर ताकर
कर भोजन निर्मल जल पायो बैठे हाथ धुला कर॥
वहुर आय भौजाई दीने सब को पान मंगाकर
सेजलगाय दई तक भावी सुंदर पलंग डसाकर॥
करन लगे आराम कुंवर तव नसा जनायो माहुर
सूखन कंठ लगो मुख फीको पर गओ करिया कावर॥
टेर तुरंत भोजी को लाला बोले हाथ उठाकर
लाल वेग गंगा जल दीजे भावी हम को लाकर॥
तुरत लाय भौजी जल दीन्हे पियो लाल मुंह वाकर
पाँच हजार दान दई गौयें पंडित को वुलवा कर॥
राम राम श्री राम कृष्ण कह प्रान तजे लाला वर
मित्र सखा सब मरे संग के प्यारे नौकार चाकर॥
मरण देख लाला को भौजी गिरी तमारों खाकर
रोवन लगे दास अरू दासी हा हा पर गई वाखर॥
दाह क्रिया पुन भूपति कीनी सब की निज कर जाकर
लख विनाशु वंधु को अपने अंत रहो पछताकर॥
वहुर मुकरवा नृप बनवाये कारीगरन बुलाकर
भयो चरित्र जौन अव आगे सुनिये चित्त लगाकर।
कछु दिन गयें आई तहां कुंजा वहिन प्यारी लाला कर
लेले नाम लला को रोई बार बार चिल्ला कर॥
वहुर जुझार सिंह से बोली कुंजाबाई जाकर
भैया द्रव्य देहु कछु मोको रचो व्याह कन्याकर॥
सुनत वचन कुंजा के बोले जुझार सिंह रूखयाकर
तुमें हते हरदौल प्यारे मांगो उनसे जाकर॥
इतनी सुनके कुंजा बोली सुनो भ्रात योधावर
जियत सहाय करत नहि जब तुम मरे करें का आकर॥
अस कह कुंजा चली तहां तें गई मुकरबा जांपर
लेले नाम लला को रोई बार बार चिल्ला कर॥

सुन पुकार कुंजा की बोले लाला धीर धरा कर
करहों आप सहाय तुमारी रचो व्याह घर जाकर॥
पहंचे घरे तुम रीती गाड़ी दइओ पठे यहां पर
भर के सब सामान व्याहको देहो भेज लदा कर॥
देके मुहरें लाल पाँच सौ विदाकरी कुंजाकर
घरे जाय कुंजाने दीनी कन्या लगुन लिखाकर॥
ले चौकट जरतारी लाला गये वहुर कुंजा घर
कुंजा भेंट करी खंभा सों गिरे खंभ अर्रा कर॥
खेलत द्वारे मिली भनेजन पांव परे लाला वर
दई हजार अशर्फी ताको अंतरिक्ष ढिग जाकर॥
व्याह भनेजनको सुधवायो सब प्रकार लालावर
जो मांगो सो दओ दूला को कालो कहों बनाकर॥
दर्शन हेत करी हठ दूला हारे सकल मनाकर
तव एकांत लला दये दर्शन सुंदर वदन दिखाकर॥
व्याह भनेजन को कर पूरों मांगी विदा लला फिर
कुंजा कही देहु वर मोको एक प्यारे भ्रातावर॥
होवे व्याह जहां कन्या को रक्षा करियो जाकर
सुन के वचन वहिन सें बोले श्री हरदौल दयावर॥
जो कोउ नेवतो मोको देहें कन्या के कारज कर
आंधी पानी तहां वचे हों वस्तु घटे न ता घर॥
कुंजा से हो विदा चले फिर लाला सेन सजाकर
तीन दिनामें दिल्ली पोंचे शाह अकवर जांपर॥
सोवत पलंग समेत शाह को पटको कुंवर रिसाकर
शाह अकवर जाग नींद से बोलो तव घबराकर॥
कौन देव तुम आये कहां से मोय बताव दयाकर
कारन कौन सतायो मोको कहो हाल निजगाकर॥
नगर ओरछे के हम वासी जात वुंदेला ठाकुर
वीर विरसिंघ के देव के वेट हरदौल नाम उजागरा।
जुझार सिंघ मम भइया जेठे काम करो अति नाहर
विन अपराध हमे मरवायों उनने जहर दिलाकर॥
हाथ जोर तव अकवर बोलो हों चरनों को चाकर
हुकुम होय सो करो वेग ही कहिये नाथ दयाकर॥
तव हरदौल कहीं है जहं लगि राज तुमारो रावर
देश देश प्रति गांव गांव के थापो हम को जाकर॥
अरू निज कर थापो दिल्ली में पूजा करो वनाकर
कीरत अचल भई दुनियाँ में रहो विमल जस छाकर

- पुराने थाने के पास,
दमोह (म.प्र.)

दूल्हा वेशधारी के ...... !

– उमेश विश्वकर्मा 'आहत'

दूल्हा वेशधारी के दोरें भरो मेला,
बुंदेली खान-पान, गान की सुवेला
राई-फाग, ढिमरयाई, बैलगाड़ी दौड़ है,
मल्ल-पहलवानों की चितपट होड़ है।
सबई भांत मेल-जोल खूबई अलबेला,
दूल्हा वेशधारी के दोरें भरो मेला...।
देवी भजन साथ-साथ बुंदेली हास है,
लोकगीत कौ भी तो संगे उपहास है।
वरन-वरन खेलों से रचो-बसो रेला,
दूल्हा वेशधारी के दोरें भरो मेला...।
उपकाशी नगर में 'बुंदेली दरसन'
हो रये बुंदेली के, रोजई प्रदर्शन।
बुंदेली दर्शन हों, ठेलम-है-ठेला,
दूल्हा वेशधारी के दोरें भरो मेला...।

-रमा कवि वार्ड हटा

कलयुगी कुलटा माँ की बेटी को उल्टी सीख

– राजा राम मिश्रा 'अवधेश'

ससुराल में जाकर कें तुम बेटी अब ने रइयो डरी डरी।
घर भर खों तुम दबा कें रखियो सास सें कइयो खरीं खरीं॥
ससुर से सूदें बात ने करियो, रोटी दइयो जरी बरीं।
ननदें चाय बना कें देहें, तुम हुकुम चलइयो परीं परीं॥
जो वात तुमारी ने माने तो भपका कसियो घरी घरी।
पति खों ऐंसें लफा के रखियो, जैसें पतरी डार हरी॥
गोबर पानी सास करे न तो कइयो खोटीं चार खरीं।
अगर खटाई पे मन जावे तुरंत बनइयो कड़ी बरी॥
मन माफिक तुम भोजन करियो सबखों दइयो दार जरी।
तुम डनलप गद्दा पे परियो, सास खों दइयो फटी दरी॥
खोटी सीख मतारी ने दे, मर्यादा की नाश करी।
कुलटा बहू के कारण सज्जन परिवारों पे बिपत परी॥
'अवधेश' जमानो खोटो आ गओ, किल किल हो रई घरी घरी॥

- भिड़ारी (हटा) दमोह

एक भूली - बिसरी बुंदेली लोक कथा

भीकमपुर के भिकारी

– आदित्य कुमार तिवारी

भौत दिना पैलऊँ की बात है। भीकमपुर गांव में दो भिकारी हते । उन दोई जनों में एक हतो पाउन से पांगरौ अर एक हतो आँखन में आँदरौ। सो का भव कै एक दिना दोई जनें अपनी-अपनी गैल धरैं भीक माँगत फिर रये ते। सो येई बीचा गैल में एक जंगा उन दोई जनों कौ आमनै-सामनौ पर गव। सो जैंसई बे एक-दूसरे के लिंगां आये सो बैंसई बे एक-दूसरे सें भिड़ गये। सो भिड़तनई उननें एक-दूसरे खों पकर लव। अर है सौ फिर दोई जनें उतई कछू कहा-सुनी सी करन लगे। सो कहा-सुनी करत भये पैल आँदरे भिकारी नें पाँगरे भिकारी सें कई कै भैया मैं तौ आँखन सें औदरो आहों सो मोये कौनू कछू दिखात अहै। पै का करौं भैंयन अपने पेट के लानें कछू चून-खिचरी मांगबे तौ परबस होकें मोये चलनेई-फिरनें आऊत। सो का होत है कै चलत-फिरत में काऊ सें नें काऊ सें मैं भिड़ई जात हौं। सौ ऐंसई मैं अपुन सें भिड़ गव। सो भैंयन ई बात कौ अपुन अब कछु बुरव नें मानियौ। अर है सौ कृपा करकें भैंयन तनक मोये गैल बता दईयो सौ मैं अपनी गैल धर लऔं। सो पाँगरे नें आँदरे की बात सुनकें उसें कई कै भैया तनक ठैर तो जा अर तैं कछू मोरी तौ सुन। तो ऊजाँ कौ ताँ रै गव अर उनें पाँगरे सें कई ठीक है भैया जैंसी तोरी मर्जी सो अब बता तैं मोये काय सुनान चाऊत।

सो पाँगरे नें फिर उसें कई कै भैया अब काहै कै तैं तौ आँखन सें आँदरौ अहै, सो तोय कौन कछू दिखात अहै ईसें तैं मोसें भिड़ गव। सो भैया ईमें अब तोरी का खोरी। ईमें गलती तौ मोरिअई आहै काये कै मैं ठेंरो पाँउन सें पाँगरौ सौ मैं ठीक सें चलई-फिरनई पाऊत। अर चलत-फिरत हौं सो का होत है चलबे-फिरबे में मोये इतनौं लूमनें परत है। सो चलत-फिरत में काऊ सें नें काऊ सें मैं भिड़ई जात हौं। सो ऐंसई मैं अपुन सें भिड़ गव। सो भैयन ई बात कौ अपुन सोऊ अब कछू बुरव नें मानियौ। अर फिर का है कै अपन-तपन तो एकई काम बारे आयं। सौ जौ तौ अच्छौ भव कै येई बहाने अपन इतै मिल तौ गये। सो जब अपन मिलई गये हैं इतै, सो कृपा करकें भैंयन अब जा उर बता दे कै अपुना नाव काय है। सो आँदरे नें उसे अपनौं नाव बताऊत भये उसें कई कै भैया नैनसुख आ नाव ई आँदरे कौ। सो पाँगरे नें आदरें नें आँदरे को नाव सुनकें उसें कई :-

अरे। तैं आँखन सें आँदरौ और नैनसुख नाव,
हरेराम। हरेराम। गुन अब रामजी के गाव।
रामजी नें तोये इतै भौतऊ नौंनौं पठाव,
मो पाँगरे की पगनन कौ तैं पगधर कहाव।
सो प्यारे भैंयन तोये मैं संगी बनाऊन चाव,
ऐसें अपन-तपन मिलकें दोऊ एकई संगै राव।
जा कैंसी कई हमने सो मोये तुम बताव,
मोपाँ बनीं नें होये तौ मनकी तुम काव।

सो आँदरे नें पाँगरे की बात सुनकें उसें कई कै भैया तैंनें अबै मोसें जौन बात कई है सो बा तौ भौतऊ नौंनी कई। येई के संगे कृपा करकें अब तैं मोये अपुनाँ नाव सोऊ बता दे। सो पाँगरे नें उऐं अपनौं नाव बताऊत भये उसें कई के भैया चरनसुख आ नाव ई पाँगर कौ। सो आँदरे नें पाँगरे कौ नाव सुनकें उसें कई :-

अरे। तैं पाँउन सें पाँगरौ अर चरनसुख नाव,
हरेराम। हरेराम। गुन अब रामजी के गाव।
रामजी नें तोये इतै भौतऊ नौंनौं पठाव,
मो आँदरे की आँखन कौ तैं सूरज कहाव।
सो प्यारे भैंयन तोये मैंने सँगी बनाव,
ऐंसें अपन-तपन मिलकैं दोऊ एकई संगै राव।
अपन-तपन दोऊ अब इक-दूजौ बल पाव,
भले मिले इतै अपन हाँत तौ मिलाव।

ऐंसें चरनसुख अर नैनसुखनें एक-दूसरे सें हांत मिलाव। अर दोई जनों नें एक-दूसरे सें दोस्ती कर लई। अर है सो फिर दोई जनें मिलकें एकई संगे रान लगे। सो उनमें खूबई प्रेम हो गव अर है सो उनन की खूब अच्छी जोड़ी बन गई। सौ ऐंसें बे दोई जनें हमेशा सपेत कमीच-परदनियाँ पैरें, कंदन सें झोली लटकायें, हाँतन में तुमरिया-तमूरा लयें, तमूरा बजाऊत अर भजन गाऊत सब जांगां भीक मांगत फिरत राबैं। अर भीक मंगाऊती बेरा, बे कछू ऐंसो भजन-सौ गाऊत राबैं :-

प्रभुआँदरे अर पाँगरे की जोड़ी पुकारे,
आये चरनसुख-नैनसुख झोली पसारे।
चून-खिचरी मिलै कछू भाग सें हमारे,

गुनगान करें दीन-दुखी दाता तुम्हारे।
तुमई जनम-दाता अर तुमई पालनहारे,
तुमई मोरे जीवन दाता अर तुमई रखन वारे।
तुमई मोरी नैया कें इक हौ खेवनहारे।
मोरीपार करौ नैया फँसी मँजधारे,
दया करौ दीनबन्द दीनन के प्यारे।
करियों सब पै दया प्रभु, दै-दै अपुनौं हेत।
करत-भरत सब जात हैं, अपुन सबै-सब देत॥

ऐंसें दोई जनें हमेंशा गाऊत-बजाऊत चल-फिरकें सब जांगां से भीक मांगकें ल्याबें। अर भीक में तो कछू चून-खिचरी उनें मिलै सो ओई में बे अपनौं गुजारा करत रायें। अर है सो ठलवाई में बे दोई जनें एक-दूसरे सें हँसी-मसकरी अर ठलमसें करत भये खूब मजें सें अपनौं समय बिताऊतरायें।

ऐंसे उनन की एक मजेदार बात जा है एक दिना बे रोटी बनावे-खावे की बेराँ भीक मांगकें लोटे। अर आनकें दोई जनें अपनी झुपड़िया में बैठ गये। अर है सो उतई बैठे-बैठे फिर से कछू बतियाऊन-सौ लगे। सो बतियाऊत भले चरनसुख नें नैनसुख सें कई कै ये हो नैनसुख भैंयन। अपन रोजऊं-रोज खिचरी खा-खा कें अपनौं पेट भरतरात हैं। नें होये तो आज अपन ऐंसौ करवू कै खिचरी नें बनाकें अच्छी खीर बनैबी-खैवी। सो नैनसुख नें चरनसुखके मौं सें कछू अच्छी चीज बनावे-खावे की बात सुनकें भारी अचरज में परत भये दाँतन सें उँगरिया दवा लई। अर है सो उँगरिया दवायें-दबायें मनई-मन ऊ कछू गुनतारौ-सौ करन लगो। अर कछू देर गुनतारौ-सौ करकें ऊनें फिर चरनसुख सें कई कै ये जू भैंयन। अबै तुमनें कछू नई चीज बना वे-खावे की बात कई सो बा बात मोरे कछू समज में नई आई आ। सो तनक फिरकें कईयौ तुम काय कै रये ते। सो चरनमुख नें नैनसुख सें फिरकें कई कै हव भैया। अबै मैंने खीर बना बे-खावे की बात तौ आ करी ती। सो नैनसुख नें भौतऊ अचम्बे में परकें चरनसुख सें कई कै ये जू भैंयन। तुम जा तौ बताव कै जा खीर होत कैंसी है। सो चरनसुख नें ऊसें कई कै नैनसुख भैंयन सुनों। खीर ऐंसी होत हैं :-

दुग्ध चाँउर अर शक्कर संगे, नाना मधुर मसाले।
गड्डबड्ड कर सब डबला में, आगी पै खूब पकाले॥
बगला जैसी रंग सपेत, अर खुशबू महके खूब प्यारी।
मौंपे धरतन जीभ कात, जा खीर है मीठी भारी॥

सो चरनसुख के मौं सें खीर को बखान सुनकें नैनसुख नें इकदम उकतात भये उसें कई :-

रय कैंसो बगला अर सपेत रँग, कैंसी महक अर खुशबू आवै।
तनक बता दईयौ तुम मोखौं, कै रूप खीर कौ कैंसौ रावे॥

सो तुरतई चरनसुख नें अपने एक हाँत खौं बगला घांई टेढ़ौ करकें नैनसुखसें कई :-

पकरौ हाँत टटोलो मोरे, ऐंसई बगला मानौं
ऐंसई रूप नैनसुख प्यारे, मीठी खीर कौ जानौं॥

सो नैनसुख नें तुरतई उकतात भयेचरनसुख कौ टेढ़ौ हाँत टटोलो। अर है सो हाँत टटोलत भये ऊनें चरनसुख सें कई:-

टेढ़ौ हाँत टटोलो तोरौ, टेढ़ौ रूख अब जानी।
टेढ़ी खीर चरनसुख प्यारे, नैनसुख-जा पहचानी॥
खान-पान मल-त्याग सुरँग, मौं सें जात तरे खौं।
टेढ़ी खीर के खातन भारी, आफत बिदै गरे खौं॥
ईसें नौंनी खिचरी प्यारे, मौंसे सूदी जाय गरे हौं।
कछू देर लौ पेट में राबै, फिर निकरै झट्ट तरे हाँ।
चरनसुख भैया मजे सें रानें, अर मजे सें रोजऊ खिचरी खानें।
जा नैनसुख की सूजबूज मानें, अब टेढ़ीखीर खौं नई ललचानें॥

सो नैनसुख की मजेदार सूजबूज समेत उकी मजामौजभरी बातें सुनकै चरनसुख इकदम जोर सें खूबई ठिलठिला परो।अर है सो चरनसुख की जोरदार ठिलठिली सुनकै खूबई मजे सें ऊ नैनसुख खुदई ठिलठिलान लगो। ऐंसे खूब मजे से ठिलठिलात भये बे भीकमपुर के भिकारी उठे अर अपने खाबे-पीबे को इंतजाम करन लगे। किसा हती सौ पूरी भई कव प्यारे जू कैंसी कई।

- वार्ड नंबर- 6, तिवारी मुहल्ला,
शाहगढ़, जिला-सागर, (म.प्र.)
पिनकोड- 470339

विलुप्त होती बुंदेली संस्कृति

– डॉ. आर.वी. पटेल 'अनजान'

बुंदेलखण्ड का बुंदेली लोकसाहित्य हिन्दी साहित्य के विकास में महत्वपूर्ण स्थान रखता है। इसमें ऐतिहासिक, राजनीतिक, सामाजिक, पत्रकारिता, आर्थिक, प्राकृतिक, धार्मिक, सांस्कृतिक और विभिन्न विषयों पर बुंदेली लोकसाहित्यकारों ने अपनी लेखनी चलाई है। किन्तु हमारी संस्कृति का मूलरूप अब विलुप्त होता जा रहा है। जिसके पीछे-पीछे समाप्त होती हुई परम्परायें व रीतियाँ हैं। बुंदेली जनपद के समस्त ग्रामों में आज से कुछ दशक पूर्व चक्किया पीसने की परम्परा थी बुंदेली नारियाँ सुबह पहर चक्किया चलाते समय भुन्सारे पहर के गीत गाया करती थी जिससे उन्हें थकान का एहसास नहीं होता था और वे प्रतिदिन आठ-दास किलो गेहूं का आटा पीस लेती थी जिससे उनका शरीर भी स्वास्थ्य रहता था एवं परिवार पर पिसाई का आर्थिक बोझ भी नहीं पड़ता था। इतना ही नहीं यहाँ होने वाले शादी विवाह के लिये भी आटा इन महिलाओं द्वारा ही पारस्परिक सहयोग में पीस लिया जाता था किन्तु अब यह संभव नहीं रहा जिसका प्रमुख कारण है परम्परा का विलुप्त होना इसी परम्परा के साथ ही भुन्सारे पहर में गाये जाने वाले गीत भी हमारे बुंदेली समाज को भूलते जा रहे हैं। उन्हीं गीतों के कुछ अंश प्रस्तुत लेख में संकलित किये गये हैं। भुन्सारे पहर की गारी दृष्टव्य है।

ऐजी एतै वहैं गंगा उतै बहै जमुना बीच चंदन क्यारा पेड़।
ऐजी ओही तरे सीता झूला झुलत है राम खेलहि चौपार॥
ऐजी फूल माला सीता धरहिका डगरी राम नहीं है ओकी बाँह।
ऐजी फूटत हे मोरी कंगन चुरियाँ, मुरकत है मोरी बाँह॥
ऐजी फिर से मड़ाय देउ कंचन चुरियाँ मुरकै न पावै बाँह।
ऐजी काहे मड़ाय देव कंचन चुरियाँ काहे मड़ाय देवं तोरी बाँह॥
ऐजी सोने मड़ाऊ तोरी कंचन चुरियाँ काहे मड़ाय तोरी बाँह।
ऐजी हँस हँस पूछे माता सुनैना इतनी विलम कहाँ लाग।
ऐजी फुलता विनत माता भई है दुपहरी गजरा बिनत भई साँझ॥

उक्त गीत में कितना धार्मिक राम ओर सीता के प्रसंग का सहज सरल ढंग से चित्रण किया गया, ऐसे गीतों से प्रेरणा प्रसंग अनेकानेक लोक साहित्य में समाये हुए हैं।

राजा के प्रेम प्रसंग का चित्रण व राजा-रानीका संवाद भुनसारे के गीत में कितने अच्छे ढंग से प्रस्तुत है। रानी राजा का नाराजगी का ध्यान रखते हुये उनसे हँस-हँसकर गीत के माध्यम से सबत की बातें राजा से पूछती है। दृष्टव्य है-

ऐजी जेठ मास की खरीरे दुपहरी राजा फुलवगिया जाँय।
ऐजी हँस हँस पूछे रजवा की रानियाँ इतनी विलम कहाँ लाग।
ऐजी तुमरे उमिर रानी मालिन घेरिया हवै ने लगाई बड़ी देर।
हँस हँस पूछे रजवा की रनियाँ कैसे राजा जुरे हैं सनेहे।
ऐजी चीरे ऐसे आठवा चाउर ऐसे दंतवा ढ़ाडन चुबत उवार।
अम्बा की फकियाँ जैसी अखियाँ बनी है भरूअन चढ़ी जवान।
अपने सिपहिया रनियाँ भेजे मलिन दिखऊवा जरूर।
ऐजी आठ कहरवा सजी है पालकी ल्याये है मलिन चढ़ाय।
ऐजी साजो तौ रनियाँ सोने की आरती मलिन का ल्यावा निहार।
ऐजी बहुआ होत निहारन करती सबत निहारीन जाय।
ऐजी बैठा न मलिन लाले न दुलैंचा खाओ न लछारे पान।
ऐजी जाय तो रहा मलिन नगर सुवांसिन अब भई सवत हमार।

रामचरित्र मानस में वर्णित लक्ष्मण शक्ति का निवारण करने के लिये हनुमान लंका जाते है और मूर संजीवन कैसे लेकर आते है का चित्रण एक बुंदेली मुन्सारे गीत में निम्नानुसार किया गया है। दृष्टव्य है-

हनुमान बेगे जाया बनते मूर संजीवन ल्याया।
बेगे हनुमान तुम जाय के, देवो मूर संजीवन ल्याय के।
राते रात यहाँ लै आय कै, ऐसी बात कही समुझाय कै,
शीश नायके चले बेगे, औषधि चीन्ह न पाया ॥
दोनागिरि समेत ले आये, तुरंत वैद तब कीन्ह उपाय,
उठ बैठे लक्ष्मण हरषाये, भेटत रघुपत कंठ लगाये।
पंडित गोरे लाल कहत हैं, बाँह पकर गहिलाये॥

चक्किया पीसने की परम्परा के साथ ही ये भुन्सारे पहर के गीत भी कुछ भी लुप्त हो गये हैं। इसी प्रकार बुंदेलखण्ड जनपद में किसी के घर बालक होने पर उसकी बुआ द्वारा बधायें एवं चंगेली गीत गाये जाते हैं साथ ही चंगेली पूरे गाँव में घुमाई जाती है और उसके पीछे चलने वाली महिलाओं द्वारा चंगेली गीत गया जाता है। चंगेली की परम्परा भी अब धीरे-धीरे समाप्त होती जा रही उसी के साथ ही चंगेली गीत भी समाप्त होते जा रहे है। इन गीतों के कुछ अंश दृष्टव्य हैं-

आज चंगेली ल्याई रे भइया, आज चंगेली ल्याई लाल।

भाग बड़े मोरे भये हैं भतीजे, मोद न हृदय सभाई रे भइया॥
कहत खुलासा दिल है हुलासा, देव बतासा चटाई रे भइया।
कह बेटू बसराही वाले बाजे आनंद बधाई रे भइया॥
आज चंगेली ल्याई लाल॥

इस चंगेली में लड़के की बुआ अपनी सामर्थ अनुसार कपड़े, जेवर व परिवार वालों को लेकर आती है जिसमें कई बस्तियों के लोग एकत्र होकर पारस्परिक सद्‌भाव के साथ इस उत्सव में सरीक होते हैं और बढ़-चढ़कर पुरस्कार बाजे बजाने वालों को देते है। चंगेली किस प्रकार निकलती है निम्न गीत में दृष्टव्य हैं-

सजकर नारि अलबेली, चली सिर पर धर कर चंगेली
सुन्दर चन्द्रबदन मृग नैनी, कंचन की अलबेली चली
चूरा मोहर औ कर धनियाँ कोऊ ल्यावत हैं सेल्ही चली
कह बेटू बसराही वाले संग के सखी हैं सहेली।
चली सिर पर धर कर चंगेली॥

बुंदेलखण्ड के शादी विवाहों के भाँवरे पड़ने के बाद लड़की पक्ष में जनवासो (बारात पक्ष) के लिये लहकौर भेजी जाती थी किन्तु अब यह प्रथा पूर्णत: बंद हो गई है जिसके साथ ही बुंदेली लहकौर गीत भी लुप्त हो गये है। इसका गीत दृष्टव्य हैं-

राम लखन व्याहन को आये, सीता जनक दुलारीवे हाँ हाँ वे हूँ हूँ वे॥
हाथी घोड़ा ऊँट पालकी, रथ बग्घी असवारी वे॥ हाँ..... ॥
डेरा जनवासे में दे दैय, ब्राजे अवध विहारी वे॥ हाँ..... ॥
फर्स गलींचा बिछे अनेकन धूम मची हमारीवे॥ हाँ..... ॥
कछु न कावे मन मुस्कावे, देव पान सुपारी वे॥ हाँ..... ॥
लै गुलाल सखियन खाँ डारे, निरदई निपट अनारी वे॥ हाँ..... ॥
नशा दई रेशम की चोली, सवन हो गई सारीवे॥ हाँ..... ॥
मिथलापुर में प्रभु विराजे, छवि निरखत नरनारी वे॥ हाँ..... ॥
काशीराम खड़ेकर जोरे, चरनन की बलिहारी वे ॥ हाँ..... ॥

बुंदेली नर नारियों में कुछ दशक पूर्व तक गुदना गुदवावे का बड़ा शौक था। यहाँ के स्त्री पुरूष पशु पक्षियों, देवी, देवताओं के चित्र, पति-पत्नियों के नाम तिल व तरह तरह की चित्रकला को शरीर के विभिन्न अंगों पर उंकेरा जाता था, किन्तु अब गुदना की कला व गुदना से जुड़े गीत भी समाप्त हो रहे है। एक गुदना गीत दृष्टव्य हैं-

गुदना गोदत में रो दओ तो, तनक दरद न सओ तो।
अँसुआ ढड़क गाल लौ आये, कजरा लौ वे गओ तो।
आँखे मींच ननद को करया, दोऊ हाथन लै लओ तो।
ईसुर ई गुदनन के लाने, बड़ो कसालों सओ तो।

बुंदेली के महाकवि ईसुरी की तरह ही गंगाधर व ख्यालीराम ने भी गुदना गीत लिखे हैं। कवि गंगाधरका गुदनागीत दृष्टव्य है-

गुदना लगत गाल पे प्यारी, हम खाँ रजऊँ तुमारो।
गोरे बदन गाल के ऊपर, बन बैठो रखवारो॥
देखन देव नजर भर हम खाँ, घूँघट पट न डारो।
ढांड़ी होव देख लें चित से, जी ललचात हमारो।
गंगाधर की तरफ देख के, दै दओ तनक इसारो॥

बुंदेली जनपद.में बड़े-बड़े संयुक्त परिवार आपसी सामजस्य से घुलनमिलकर रहा करते थे किन्तु आज एकल परिवार प्रणाली ने घर-घर के कलह पैदा कर दी। परिवारों के विघटन ने तरह-तरह की समस्यायें पैदा होकर मानव का जीवन नारकीय बना देती है। एक कहरवा गीत में इसी के भाव अवलोकनीय हैं। यथा-

न्यारो कराके चली गई रे, माइके में रिसा गई-हाय हाय रे.
पिसी बिका गई चना बिका गई, मेला में बैला बिका गई।
माइके...... ॥
दूर दूर सब नाज घरे ते, जुन्डी मे जवा मिला गई रे॥
पाँवन में टोडर कमर करधनियाँ, माथे में बूंदा दवा गई रे॥
माइके...... ॥
कर कर लड़ाई न्यारो करागई, रन बन को डेरा करा गई रे॥
माइके...... ॥
सब बराबर के दोरे फुरा गई, बनी मड़ईया मिटा गई रे॥
माइके...... ॥

कहरवा गीत भी अब बुंदेली साहित्य से विलुप्त होते जा रहे हैं।

अत: कहा जा सकता है कि हमारी बुंदेली लोक संस्कृति को पाश्चात्य संस्कृति रूपी सुरसा निगलती जा रही है। हमारी आगे आने वाली पीढ़ियाँ बुन्देली परम्पराओं को पहचान भी नहीं सकेगी। आज आवश्यकता है कि पुन: अपनी विश्व गुरू संस्कृति को हम विश्व स्तरीय सरताज बनाना चाहते है, तो हमें अपनी संस्कृति की परम्पराओं व लोकसाहित्य के प्रति जन अन्दोलन का सहारा लेते हुए, हमेंअपनी ग्रामीण परम्परा का पुन: प्रभार करना होगा। तभी हम मानव को दानव बनाने से रोक पायेंगे।

-बजरंग नगर कॉलोनी, छतरपुर
मो. 9755155016

बात गुन लैयो ज्ञानी की

– पं. ज्ञानी महिराज

विद्वानों की दूर दर्शिता साधो सही सुनाऊं।
''बुंदेली दरसन पत्रिका'' का आशय तुम्हें बताऊं॥
विनु अधार औकात कहां है छप्पर छानी की।
सच्ची है कैनात बात बुन लैयो ज्ञानी की॥
हटेशाह का हटा नगर ये काफी वर्ष पुराना।
मुगलराज में जिला नगर था सबका जाना माना॥
रतन बजरिया कंठ माल थी इस रजधानी की।
हीरन का व्यापार बात गुन लैयो ज्ञानी की॥
मुगलवंश शासन प्रथा थी जारी मनसवदारी।
उसी समय से चलते आये हैं मालगुजार हजारी॥
गौरी शंकर दरश दैन छोटी बहुरानी की।
हटा छटा बढ़ गई बात गुन लैयो ज्ञानी की॥
सोई विधा जगादी फिर से श्री पुष्पेन्द्र हजारी।
बुंदेली मेला भरवाकर वंश शाख विस्तारी॥
खान पान व्यवहार रागिनी भाषा वानी की।
जगने लगी जमात बात गुन लैयो ज्ञानी की॥
मंच प्रदर्शन नाटक क्रीड़ानट की कला अनोखी।
कुश्ती, कविता तर्क तालिका शस्त्र निशानी चोखी।।
करने लगे खोज अन्वेषक विधा पुरानी की।
सजने लगी समाज बात गुन लैयो ज्ञानी की॥
एक दिवस श्री गुरू मनमोहन पुष्प इन्द्र से बोले।
इतने में तो बात हमारी बढ़हे हौले - हौले॥
असरदार असिधारा होती लिखित कहानी की।
जतन जुराओ जात बात गुन लौयो ज्ञानी की॥
पांडे जी ने बुधि कमान अपने ही हांथ संभाली।
बुंदेली दरसन की पत्रिका करि निज परख निकाली॥
कीनी कदर कवी लेखक खोजी बुधिमानी की।
जलने लगी मिशाल बात गुन लैयो ज्ञानी की॥
पांडे जी पंडित डॉक्टर हैं बहुत परिश्रम करते
रात-दिवस अति लगन लगाकर अंश जोड़ते रहते॥
पत्री प्रथम बुंदेलखण्ड स्वराज्य निशानी की।
बनी नीव आधार बात गुन लैयो ज्ञानी की॥

– नल-नगर, रनेह (हटा)
दमोह (म.प्र.)
मो. 9893902920

टेसू रंग कपोल ....

– मणि 'मुकुल'

फागुन राजा का रूप का, रंगों का सरताज।
देख उमरिया रस भरी, रोज गिराता गाज॥
उमर विरानी हो रही, फागुन चढ़ता देख।
माथा अपना पीटती, धरम-करम की रेख॥
इस फागुन में लग गया, उमर में सोलह साल।
नैनों ने न्योते दिये, अधर भये बेहाल॥
चटक रंग चुनरी भई, पिचकारी पच रंग।
होली की हुड़ दंग में, रसिया रंग-विरंग॥
सावन गोरी सो गई, जागी फागुन मास।
अंग-अंग गदरा गये, बलम आस न पास॥
एक सखी बतियां करत, सखी दूसरी संग।
अंगिया फागुन मास में, हो जाती क्यों तंग॥
नये-नये कंगना हाथों में, नई-नई करधनिया।
होली खेलन बलम ने भेजी, चोली ओ परधनिया॥
कस्तूरी सी महकती, दस छै की गुलनार।
घर-घर फागुन भटकता, मिलता नहीं करार॥
श्याम रंग नैना भये, टेसू रंग कपोल।
पटल-पयोधर हठ करें, अंगिया के बंध खोल॥
होली तो होली है कर लो, तन की भी मन की भी।
उमर पांव की पैजनिया, कल खनकी ना खनकी भी॥
भोजी ने देवर के उपर, चुपके से रंग डाला।
देवरानी की नींद उड़ गई, है कुछ दाल में काला॥
होली के दिन बह जाते हैं, नैना बस-बेवस के।
यादों की गठरी खुल जाती, रह जाते कस कसके॥
बरस-बरस की होली के दिन, रूठो मत, रंग डालो।
समय किसी का सगा नहीं है, ऐसा रोग ना पालो॥
जाते-जाते कह गया, फगुन नस-नस घोल।
अपनों से क्या रूठना, बोल सके तो बोल॥
जात न पूछे, पांत न पूछे, नहीं पूछता रंग।
फागुन का महिना 'मुकुल' नाव नदी का संग॥

– 1130, नील गगन
जय प्रकाश नगर, अधारताल
जबलपुर (म.प्र.)
दूरभाष :- 4030695

दानी राजा अमान सिंह

– पं. बाबूलाल तिवारी

विन्ध्य वासिनी माँ की किरपा पंचमरा पै हो गई।
तब तें वीर बुंदेल वंश की कीरत जग में छा गई॥
उपजत आये वीर वंश में बड़े-बड़े बरदानी।
भए देव सम पूज्य जगत हरदौल धरम बलिदानी॥
उसी वंश के छत्रसाल के कीरति बड़ी कमाई।
मुगल राज से भूमि छीन रजधानी अलग बनाई॥
उनके पंती भए अमान सिंह धरम धीर गुण खानी।
सब काऊ कहत छत्रवंश अस भयो न दूजा दानी॥
ऐक दिना महाराज सभा में बेठे थे अलसाने।
ओही बिरियाँ हुआ हुआकर वन स्यार चिल्लाने॥
सभा सदों ने राजा बोले सेवक कोऊ पठवाओ।
बेचारे केहि कारण रोवें जल्दी पतो लगाओ॥
चतुर एक जल्दी से बोले हुकुम होय तो बोलें।
गुस्ताखी की माफी होवे तो हम पर्दा खोलें॥
महाराज मुस्का कर बोले बेशक भेद बताओ।
राज दरोगा को समझाकर सांची रपट लिखाओ।
चाटुकार जल्दी से बोलो मालिक बात बड़ी है।
मकर पूस को महिना लागों ठंडी बहुत पड़ी हैं॥
महाराज के द्वार स्यार सब आकर अरज सुना रये।
बेचारे जाड़े में मर रये ऊनी वस्त्र मँगा रये॥
राजा सुन तपाक से बोले ऊनी वस्त्र मँगा दो।
जंगल के सब राहे रूरे अच्छी तरां उड़ा दो॥
रूक्का थमा खजांची के कर बांध अशरफीं ले गये।
हिस्सा बांट बना धीरे से सब दलाल धन खा गये॥
दूजे दिना साँझ की बिरियाँ फिर स्यार चिल्लाने।
महाराजा ने कारण पूँछो चाटुकार बतयाने॥
जी हजूर ठंडी के कारण उनकी जान बची है।
लेकिन उन बेचारों को अब बेजा भूख लगी है॥
मुस्काकरअमान सिंह बोले अन्नगार खुलवा दो।
जंगल के जरिया रूरों में अन्न शाक डलवादो।
अन्नागार खोल कठ कुल्ले बोरा भर भर लै गये।
हिस्सा बना बना कौओं ने घरके बंडा भर लये॥
तीजे दिना ओई बिरियाँ में वे स्यार फिर रोये।
महाराज ने कारण पूँछो तो दलाल दिल खोये॥
चटपट बात बना खल बोले अब हजूर वे हंस रये।
अपने अन्न शाक दाता की दिल से जय जय कर रये॥
महाराज हँसकर के बोले शिक्षा सुनो हमारी।
हमको बेबकूफ ना जानो पकरी चाल तुम्हारी॥
बेचारे बन के पशु पक्षी ठंड भूख का जाने।
जान बूझकर दान दियों है हमने ऐई बहाने॥
हमसे जो चालाकी कीनी और कहूं न करियो।
मेहनत करके खैयो पिइयो बिना मौत न मरियो॥
ऐसा करियो जा चालाकी कोउ जान न पावें।
ऊ सब धन सहेज खें रखियो लरका खेलें खावें॥
बुंदेला अमान सिंह राजा ऐसे दाता हो जाये।
जा दिन सें वे गये तबई सें पन्ना सूने हो गये॥
जनमानस की यही लालसा ऐसी खोज करैयो।
अलग राज बुंदेल खण्ड जो अपनो बेगि बनैयो॥

- नल-नगर, रनेह (हटा)
दमोह, म.प्र.
मो. 9981343660

बैठी किसान की लली

– प्रदीप कुमार मिश्रा

जेठ की दुपरिया में, काँस की टपरिया में, बैठी किसान की लली।
खा रई महुआ की गुली॥
जुनरी की रोटी धरें, करवा में पानी धरें संग बाजरा की थुली।
बैठी किसान की लली॥
मौवा पे के कौआ हाँकत, दिनभर चिल्लात झाकत, थक गई बिचारी लली।
रखा रई महुआ की गुली॥
भारी जब प्यास लगी, मटकी पे नजर करी पानी में मरी छिपकली।
प्यासी किसान की लली।
भूख संग प्यास लगी, जात नही चली गली लौटबे में परगई झुली।
जा रई किसान की लली॥

- भिड़ारी (हटा)
दमोह (म.प्र.)

बुंदेलखंड को शब्द देने वाले रचनाकार : डॉ. श्यामसुंदर दुबे

– डॉ. मनमोहन पांडे

हमारी संस्कृति नदी संस्कृति है। यही वजह है कि नदियों के किनारों का परिचय संदर्भों में महत्वपूर्ण है, मध्यप्रदेश के दमोह जिले का हटा नगर भी अवस्थिति में सांस्कृतिक नगरी इस मायने में है कि यह सुनार नदी के तट पर स्थित है। नदी के घाटों का विहंगम दृश्य इसे तीर्थ स्थली की तरह स्पष्ट करता है। इसी हटा नगर में सुनार नदी के तटवर्ती पूर्ववर्ती सरकारी अस्पताल में डॉ. श्यामसुंदर दुबे का जन्म 12 दिसंबर 1944 ई. में हुआ। यद्यपि डॉ. श्यामसुंदर दुबे का पैतृक निवास हटा से पश्चिमोत्तर पर बर्तलाई गांव में है। हटा से बर्तलाई की दूरी लगभग 7 कि.मी. है। सुनार नदी को पार कर बर्तलाई पहुंचा जा सकता है। गांव में चिकित्सा की समुचित व्यवस्था न होने के कारण दुबे की प्रसव पीड़ित माँ को हटा के सरकारी अस्पताल में दाखिल कराया गया था, वही दुबे जी का जन्म हुआ दुबे जी के पिता स्व. काशी प्रसाद दुबे अपने क्षेत्र के विद्वान पंडित थे। उन्हें पुरानी महाराज के नाम से जाना जाता था। दरअसल उस समय भागवत पुराण प्रवचनकर्त्ता के रूप में वे उस इलाके के एक मात्र पंडित थे इसलिये लोगों ने उन्हें पुरानी महाराज की उपाधि दे दी थी।

डॉ. दुबे का बचपन ग्राम बर्तलाई में व्यतीत हुआ। एक मात्र संतान होने के कारण माता-पिता ने उन्हें स्कूली शिखा के लिये पास गांव भिलौनी भेजना मुनासिब नहीं समझा। अतिरिक्त पुत्र मोह ने दुबे जी को प्राथमिक स्कूली शिक्षा से वंचित कर दिया गांव में सरकारी स्कूल नहीं था। पिता काशीप्रसाद दुबे ने उन्हें घर पर ही पढ़ाना सुनिश्चित किया। कर्मकांड के अध्यापन के साथ वे उन्हें तत्कालीन स्कूली शिक्षा का पाठ्यक्रम भी पढ़ाते रहे। डॉ. दुबे ने घर पर ही चौथी कक्षा तक की शिक्षा प्राप्त की। लेकिन चौथी की बोर्ड परीक्षा आड़े आ गई। तब फतेहपुर की प्राथमिक शाला में चौथी की बोर्ड परीक्षा का केन्द्र होता था। उसी केन्द्र से तत्कालीन हेड मास्टर नारायण प्रसाद चौबे ने डॉ. दुबे को स्वाध्यायी छात्र के रूप में चौथी की परीक्षा में प्रविष्ट कराया। केन्द्र में दुबे जी ने प्रथम स्थान अर्जित किया। यहीं से डॉ. दुबे जी की शिक्षा का विधिवत प्रारंभ हुआ। फतेहपुर के मिडिल स्कूल से छठवीं कक्षा के बाद हटा में आदर्श हाई स्कूल से दुबे जी ने आठवीं उत्तीर्ण की फिर मल्टी पर्पज हायर सेकेण्डरी स्कूल से विज्ञान गणित विषय लेकर ग्यारहवीं की परीक्षा दी। दमोह के डिग्री कॉलेज से बी.ए. तथा सागर विश्वविद्यालय से एम.ए. पी.एच.डी. की उपाधि डॉ. दुबे ने ग्रहण की। कक्षा नवमीं से लेकर पी.एच.डी. तक डॉ. दुबे को लगातार शासकीय स्कालरशिप प्राप्त होती रही।

जब डॉ. दुबे सागर विश्वविद्यालय से पी.एच.डी. कर रहे थे, तभी उनकी नियुक्ति शासकीय महाविद्यालय अम्बिकापुर (सरगुजा) में हिन्दी के व्याख्याता के रूप में हो गई। लगभग 13 वर्षों तक वे अम्बिकापुर के शासकीय महाविद्यालय में अध्यापन कार्य करते रहे। बाद में जब हटा में शासकीय महाविद्यालय प्रारंभ हुआ तो वे स्थानांतरित होकर हटा आ गये। उन्होंने शासकीय महाविद्यालय हटा में 22 वर्षों तक अध्यापन कार्य किया। वहीं वे प्रोफेसर और प्राचार्य पदों पर उन्नत हुए, स्नातकोत्तर महाविद्यालय के प्राचार्य के रूप में पदोन्नत होकर वे शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, दमोह में पदस्थ हुए। उन्होंने वहां से कुछ महिने पहले ही स्वेच्छिक सेवानिवृत्ति ले ली। आजकल डॉ. दुबे, डॉ. हरीसिंहगौर केन्द्रीय विश्वविद्यालय सागर में मुक्तिबोध सृजन पीठ के निदेशक के रूप में कार्यरत हैं।

डॉ. श्यामसुंदर दुबे को साहित्य कार और शिक्षा विद् के रूप में राष्ट्रीय पहचान प्राप्त है। उनके अब तक तीस से अधिक ग्रंथ प्रकाशित हो चुके हैं। वे ललित निबंधकार, नवगीतकार, समीक्षक, कथाकार आदि रूपों में विख्यात रचनाकार हैं। उन्हें लोकविद् रचनाकार के रूप में प्रतिष्ठा प्राप्त है। बुंदेलखण्ड के लोकजीवन को उन्होंने गहराई से विवेचित किया है। वैज्ञानिक दृष्टि से पहली बार डॉ. दुबे ने बुंदेली लोक जीवन को विश्लेपित करने का साहस दिखाया है। उन्होंने लोक को नृतत्व और समाजशास्त्रीय दृष्टि से विवेचित करते हुए उसके साहित्यिक सौन्दर्य का उद्घाटन किया है। वे इस रूप में लोक चिंतन के क्षेत्र में नई पहल करने वाले रचनाकार हैं। 'बुंदेलखण्ड की लोक कथायें' 'लोक में जल' 'लोक परंपरा पहचान एवं प्रवाह' 'लोक मानव मूल्य और मीडिया'

लोक चित्रकला परंपरा और रचना-दृष्टि तथा 'नेह के नेग' जैसी चर्चित पुस्तकों के रचयिता डॉ. दुबे की लोक केन्द्रित अन्य अनेक पुस्तकें अभी प्रकाशनाधीन हैं। ललित निबंध के क्षेत्र में डॉ. दुबे का नाम डॉ. हजारी प्रसाद द्विवेदी और डॉ. विद्या निवास मिश्र की परंपरा में गिना जाता है। 'काल मृगया' 'विषाद बांसुरी की टेर' 'कोई खिड़की इसी दीवार से' डॉ. दुबे के चर्चित निबंध संकलन हैं। नवनित रचना के क्षेत्र में डॉ. दुबे कृति व्यक्तित्व के रूप में जाने जाते हैं। 'रीते खेत में बिजूका' 'भ्रांतुयें जो आदमी के भीतर हैं' 'इतने करीब से' 'धरती के अनंत चक्करों में' आदि अनेकों नवगीत संकलन दुबे जी के प्रकाशित हो चुके हैं। समीक्षक के रूप में भी दुबे को विशिष्ट ख्याति प्राप्त है, 'विहारी सतसई का सांस्कृतिक अध्ययन' 'संस्कृत समाज और संवेदना' 'साहित्य का सामाजिक पक्ष' 'कथा की लोक-संवेदना' आदि कृतियां डॉ. दुबे जी की समीक्षा दृष्टि से उजागर करती हैं। डॉ. दुबे के 'दाखिल खारिज' 'मरे न माहुर खाये' 'जड़ों की ओर' आदि उपन्यास और कहानी संकलन हैं 'दाखिल खारिज' बुंदेलखण्ड क्षेत्र पर लिखा गया उपन्यास है। इस उपन्यास में दमोह जिले का बुंदेलखण्ड प्रकट होता है। बुंदेली बोली का आकर्पक रूप इस उपन्यास में मिलता है। डॉ. दुबे अनेक पत्र-पत्रिकाओं में धारावाहिक लेखन भी करते हैं। अपने समय की प्रसिद्ध पत्रिकाओं जैसे 'धर्मयुग' 'साप्ताहिक हिन्दुस्तान' 'कादम्बिनी' नवनीत आदि में उनकी रचनायें ससम्मान छपती रही हैं। डॉ. दुबे का संपूर्ण साहित्य बुंदेली परिवेश को अभिवादन करता है। बुंदेली की सौंधी महक उनकी भाषा में प्रकट होती रहती है।

दुबे जी को उनकी रचना धर्मिता पर अनेक सम्मानों और पुरस्कारों से नवाजा गया है। मध्यप्रदेश की साहित्य अकादमी से उन्हें बालकृष्ण शर्मा नवीन और आचार्य नंददुलारे बाजपेयी, पुरस्कारों से सम्मानित किया गया है। मध्यप्रदेश के साहित्य सम्मेलन के 'वागीश्वरी' और मध्यप्रदेश लेखक संघ के 'पुष्कर' सम्मान से डॉ. दुबे को विभूषित किया गया है। वाराणसी के अखिल भारतीय नव गीत पुरस्कार डॉ. शंभूनाथ सिंह नव गीत पुरस्कार से भी डॉ. दुबे को विभूषित किया जा चुका है। बुंदेलखंड साहित्य एकेडमी के डॉ. नर्मदा प्रसाद गुप्त सम्मान और 'मधुवन' भोपाल के श्रेष्ठ आचार्य कला सम्मान से भी वे सम्मानित हैं। अखिल भारतीय बुंदेलखण्ड साहित्य एवं संस्कृति परिषद के 'चतुरेश' पुरस्कार से भी उन्हें अलंकृत किया गया। ऐसे अत्यधिक सम्मान और पुरस्कार डॉ. दुबे को राष्ट्रपति एवं अनेक प्रदेशों के राज्यपालों द्वारा प्रदान किये गये हैं।

डॉ. श्यामसुंदर दुबे के व्यक्तित्व एवं कृतिय को आधार बनाकर अनेक विश्वविद्यालयों में पी.एच.डी. स्तर के शोधकार्य करायेजा रहे हैं। अभी तक तीन शोधार्थियों को उनके साहित्य पर डिग्री अवार्ड हो चुकी है। एक पुस्तक उनके व्यक्तित्व और कृतित्व पर प्रकाशित है। 'अक्षत' पत्रिका का एक विशेपांक भी दुबे जी के कृतित्व पर केन्द्रित है। डॉ. श्यामसुंदर दुबे भागवत प्रवचन कार के रूप में भी प्रतिष्ठित हैं। वे एक अच्छे वक्ता के रूप में विख्यात हैं। अनेक राष्ट्रीय और अंतर्राष्ट्रीय शोध संगोष्ठियों में उनके व्याख्यान आयोजित होते हैं। वे विभिन्न विश्वविद्यालयों से प्रवक्ता के रूप में आमंत्रित किये जाते हैं। हटा जैसे छोटे स्थान में रहकर दुबे जी ने अपना लेखन कार्य जारी रखा है विश्वविद्यालयीन और स्कूली पाठ्यक्रमों में शामिल हैं।

वे सहज सरल व्यक्ति हैं। हमारा यह क्षेत्र उनके माध्यम से दूर-दूर तक अपनी पहचान बना रहा है। हम मंगलमय से कामना करते हैं कि दुबे जी शतायु हों।

चंडी जी वार्ड, हटा (दमोह) म.प्र.
फोन - 07604-262611

फागुनी दोहे

डॉ. जमना प्रसाद 'जलेश'

प्रीतम बसे पहार में, आम गए बौराय।
कोयलिया की कूक जा, मन में आग लगाय॥

फूला है फागुन सखी, लाली सी बिखराय।
गलबैयां ना डारियो, साजन की सुधि आय॥

टेसू जैसे होंठ भए, रंगे गुलाबी गाल।
कौन गली से आ गयो सखी सोलवां साल॥

खेलत रंग गुलाल ले, देवरा ठांड़े दोर।
रंग डारी जा देहिरा, दई बैयां झकझोर॥

मन में प्रियतम प्यार की, जब-जब उठत हिलोर।
रात कटे करवट बदल, अंसुअन हो गई भोर॥

दिन में तो सूरज तपे, रात तपे जा देह।
संखियां ताने दे रहीं, नहीं सजन को नेह॥

- 4, सिविल वार्ड, दमोह
(म.प्र.) 470661

स्मृति -

साहसी प्रेमचन्द सिंघई

– सुरेन्द्र कुमार अग्रवाल

घटना 1941 की है अंग्रेजी शासन के विरोध में जगह-जगह प्रदर्शन हो रहे थे। जिसे अंग्रेज विभिन्न यातनाएँ देकर दबा रहे थे। ब्रिटिश शासन के पैर डगमगा रहे थे। तब भारतीय नौजवान सैनिक अंग्रेजी सेना में भर्ती किए जा रहे थे, जिसका जगह जगह विरोध हो रहा था। भर्ती के आदेश पालन हेतु सागर जिलाधीश फरूखहर साहब दमोह के नगर पालिका प्रांगण में पधारे थे। लगभग 6000 लोगों के जनसमूह में रईस माल गुजार, जमींदार, ताल्लुकेदार आदि सभी बैठे थे।

जिलाधीश ने कहा- हिन्दुस्तान की रक्षा के लिए सेना में भर्ती हो। सरकार को आपके सहयोग की आवश्यकता है। तभी जनसमूह से एक आवाज गूँजी कोई सहयोग मत दो, हम असहयोग करेंगे। यह युद्ध हमारे लिये नहीं, ब्रिटिश राज्य की सुरक्षा के लिए लड़ा जा रहा है। पुलिस दौड़ पड़ी सभा में क्रांति का विगुलबजाने वाले को पकड़ने। लोगों ने देखा ये हैं ''हटा के सिंघई प्रेमचन्द जैन।'' सभा चलती रही, प्रेमचंद जैन जोर जोर से कह रहे थे – ''ब्रिटिश सरकार को सहयोग मिलेगा तो वे हिन्दुस्तान से नहीं जायेंगे। अग्रेजों का सहयोग साम्राज्यवाद का पोषक है।''

स्वतंत्रता संग्राम में व्यक्तिगत सत्याग्रह करने में प्रेमचंद अग्रणी थे। वे अपनी जन्मभूमि हटा के साथ साथ पूरे दमोह जिले में सत्याग्रह की अलख जगाते थे। वे अक्खड़ अलमस्त स्वभाव के थे वे प्रभातफेरी के लिए जगह-जगह लोगों को घंटी बजाकर एकत्रित करते और बड़ी मस्ती व बुलंदी से क्रांति के गीत गाते थे-

''रण भेरी बज उठी वीर, अब पहिनो केसरिया बाना।
छीन सकती नहीं सरकार वन्दे मातरम्।
हम गरीबों के गले का हार वन्दे मातरम्।
लार्ड इरबिन को जाके सुनाना
नौजवानों का आया जमाना
मेरा भारत नहीं रहेगा हरगिज गुलामखाना।''
''यह लाल झंडा उड़ा जा रहा,
हवा में तिरंगा फहरा रहा है।''

आदि प्रिय गानों के साथ प्रेमचंद सभाओं में आर्थिक विषमता, असमानता और पूँजीवाद पर प्रहार करते हुये कहते-

''लीडरी तू तो अमीरों की होती आई है,
हमसे तो तूने सदा डोंडी पिटवाई है''

सागर के तत्कालीन जिलाधीश के सेना में भर्ती के आह्वान का विरोध करने पर प्रेमचंद जनमानस में अपराजेय योद्धा बन गये। पुलिस प्रशासन ने आजादी के इस योद्धा को गिरफ्तार कर लिया। चार माह की सख्त सजा देकर सागर जेल भेज दिया वहाँ से इन्हें नागपुर जेल भेज दिया गया।

नागपुर जेल का एक दिन वही फरुखहर साहब निरीक्षण करने गए। उनका सागर से नागपुर तबादला हो गया था। वे प्रेमचंद को देखकर चौके। अंग्रेज सरकार उन्हें अपने राज्य का शत्रु मानकर तरह-तरह की यातनाएँ देतीं। सजा पूरी होने पर मई 1941 को जब सिंघई छोड़े गये तो उनका जीर्णकाय शरीर कुछ दिनों का मेहमान लगता था। वे जेल में बीमार हो गए थे दवा के नाम पर उन्हें जेल में हल्का विष (स्लो पायजन) दिया गया था। 9 मई 1941 को अपनी जन्म भूमि में आकर भारत मां को अंतिम प्रणाम किया। प्रेमचंद का शरीर नीला होकर निर्जीव हो गया। साहसी प्रेमचंद सिंघई को शत्-शत् नमन।

द्वारा- अग्रवाल न्यूज एजेन्सी
हटा दमोह म.प्र. 47077

बुन्देली मेला एक नजर में...

बुन्देली मेला पर आयोजित
खो–खो प्रतियोगिता का एक दृश्य

बुन्देली मेला पर आयोजित
बच्चों की दौड़ प्रतियोगिता का एक दृश्य

बुन्देली मेला पर आयोजित
रंगोली प्रतियोगिता

बुन्देली मेला एक नजर में...

बुन्देली मेला में खास आकर्षण परम्परागत बैलगाड़ी

बुन्देलखण्ड़ के पारम्परिक आभूषण जो आज भी बेमिसाल हैं

कार्यक्रम की उद्‌घोषणा करते श्री जय कुमार जैन 'जलज'

बुन्देलखण्ड की अमर वीरांगना झांसी की रानी लक्ष्मीबाई

-श्रीमति पद्मजा राजे हजारी

''सिंहासन हिल उठे राजवंशों ने भृकुटि तानी थी,
बूढ़े भारत में भी आयी फिर से नयी जवानी थी।
गुमी हुयी आजादी की कीमत सबने पहचानी थी,
दूर फिरंगी को करने की सबने मन में ठानी थी।
चमक उठी सन सत्तावन में वो तलवार पुरानी थी,
बुन्देली हरबोलों के मुंह हमने सुनी कहानी थी।
खूब लड़ी मरदानी वह तो झाँसी वाली रानी थी''

महान कवियत्री सुभद्रा कुमारी चौहान द्वारा लिखी गयी यह कविता उस महान वीरांगना को दी गयी अमर श्रृद्धाजंलि है।

जिसमें भारत के स्वाधीनता संग्राम के इतिहास में अपनी अमिट छाप छोड़ी। ऐसा कौन भारत वासी है जो झाँसी की रानी लक्ष्मीबाई के नाम से परिचित नहीं है। सन् 1857 में स्वतंत्रता के लिये लड़े गये इस प्रथम युद्ध में इस वीरांगना ने आत्म बलिदान दिया था। इस महायुद्ध में झाँसी की रानी ने नाना साहव, तात्याटोपे, वहादुर जफर, बांदा के नवाब, बेगम हजरत महल आदि के साथ स्वराज्य स्थापना के लिये आखरी सांस तक संघर्ष किया।

रण क्षेत्र में रानी ने वह जौहर कर दिखलाये जिसकी शत्रु मित्रों में किसी को आशा नहीं थी वे तो स्वाधीनता की साक्षात् लक्ष्मी थी। झाँसी की पवित्र वीर भूमि पर बना महारानी का किला आकाश चूमता हुआ-जैसे कह रहा हो कि- ''समय के आघात से मेरा तन जर्जर-और काला भले ही पड़ जाय लेकिन मेरा हृदय रानी लक्ष्मीबाई के उज्जवल यश से हमेशा आलौकित रहेगा।''

इस स्वराज्य मंदिर को देखकर आज भी लगता है जैसे किले की राजलक्ष्मी की अमर आत्मा अभी भी सारे वातावरण को अपने सिंहनाद से कहती हुयी सी प्रतीत होती है- ''कि झाँसी मेरी है, मैं अपनी झाँसी किसी को नहीं दूगीं, जो लेना चाहे आये, मैं उसे देख लूंगी।''

यह था रानी की स्वाधीनता का मूलमंत्र और उनके स्वाभिमान का परिचय भी। इनका जन्म 19 नवम्बर 1834 में बनारस में हुआ था क्या कोई जानता था कि मोरापन्त तांबे और भागीरथी बाई की यह लाड़ली बेटी भारत के स्वतंत्रता संग्राम में अपने अमिट चरण रखकर अपने आपको अमर कर लेगी। जन्म के समय ही ज्योतिषों की भविष्यवाणी थी कि संसार के इतिहास में इसका नाम सदा के लिये अमर रहेगा। माता-पिता ने बालिका का नाम मनु रखा जब इनकी आयु 3-4 वर्ष की थी तब इनकी माँ का देहान्त हो गया था।

इनके पालन पोषण का भार इनके पिता पर पड़ा लेकिन बनारस में जीवन निर्वाह ढंग से न होने पर उन्होंने बिठूर में बाजीराव के आश्रय में रहने का निश्चय किया, और पुत्री को लेकर पेशवा के परिवार के साथ बिठूर में रहने लगे। विलक्षण बुद्धि वाली मनु का बचपन पुण्य सलिला गंगा के तट पर बिठूर में बाजीराव पेशवा के महलों में नाना साहव एवं राव साहब बाला साहब के साथ बीता ये सब मनु के मुँहबोले भाई थे। पेशवा ने इन बच्चों की शिक्षा-दीक्षा का उत्तम प्रवंध किया। लिखने पढ़ने के अलावा इन लोगों को अस्त्र संचालन तलवार चलाना घुड़सवारी की शिक्षा दी जाती थी। यद्यपि मनु उम्र में छोटी थी लेकिन उसे घुड़सवारी और शस्त्र चलाने का ऐसा शौक लग गया कि जो आगे चलकर उसे एक आदर्श वीरांगना बनाने वाला सिद्ध हुआ। पेशवा भी उससे बहुत प्रसन्न रहते थे उसे प्यार से छबीली कह कर पुकारते थे। जिस समय मनु की उम्र 8-9 वर्ष की रही होगी उसके जाति प्रथा के अनुसार उसके विवाह की चिंता करने लगे मनु के विवाह संबंधी वातचीत कानपुर में चली लेकिन वहाँ बात तय न होने से मोरोपन्त तांवे बाहर वर की खोज करने लगे संयोग से उसी समय झाँसी के नव-नियुक्त राजा गंगाधरराव के लिये वधु की खोज की जा रही थी। इस कार्य के लिये आने वाले सरदारों को मनु उपयुक्त जान पड़ी इस प्रकार बाजीराव पेशवा और मनु के पिता की सहमति से झाँसी के राजा के साथ मनु का विवाह हो गया और मोरोपन्त ताँबे की बेटी झाँसी की महारानी लक्ष्मीबाई बन कर झाँसी आ गयी। रानी बन जाने के बाद फिर उन्हें कभी बिठूर जाने का सौभाग्य प्राप्त नहीं हुआ लेकिन झाँसी में उन्होंने एक आदर्श महारानी होने का विलक्षण उदाहरण पेश किया। कुछ वर्षों बाद रानी ने 1851 में एक पुत्र को जन्म दिया पूरे राज्य में खुशी की लहर दौड़ गयी क्योंकि झाँसी को एक युवराज की जरूरत थी। राजा की प्रसन्नता का तो कोई ठिकाना ही नहीं था नगर में एक महिने तक खुशियां मनायी गयी लेकिन ये खुशियां अल्पकालीन सिद्ध हुई।

3 माह की अल्पायु में बालक का देहान्त हो गया। राजा और रानी मरणासन्न अवस्था में पहुँच गये। गंगाधर राव को इतना मानसिक कष्ट हुआ कि वे बीमार हो गये, खूब इलाज करवाया गया लेकिन वे ठीक नहीं हुये। महाराज ने अपनी

हालत खराब होती देखकर बुन्देलखण्ड के असिस्टेण्ट पोलिटिकन एजेन्ट मेजर "एलिस" को अपने हाथ से एक राजकीय पत्र भेजा जिसमें कम्पनी सरकार को सूचना दी गयी कि उन्होंने आनन्द दामोदर राव को दत्तक पुत्र के रूप में गोद ले लिया है। अत: उनके निधन के बाद दामोदर राव को झाँसी का उत्तराधिकारी माना जाये।

कुछ समय बाद राजा का निधन हो गया उनके देहान्त के बाद झाँसी को अंग्रेजी राज्य में मिला लिया गया रानी ने इसका बहुत विरोध किया लेकिन उनकी नहीं मानी गयी। रानी और उनके दत्तक पुत्र के लिये पेंशन बांध दी गयी।

रानी ने लंदन तक अपील करवायी, लेकिन कोई नतीजा नहीं निकला। भारत में उस समय लार्ड डलहौजी का शासन चक्र चल रहा था, जो देशी राज्यों के विरूद्ध थे, उनकी सैन्यशक्ति इतनी मजबूत हो गयी थी कि उन्हें देशी राजाओं की सहायता की जरूरत नहीं थी। अंग्रेज अधिकारियों ने यह निश्चित कर लिया था कि किसी भी राजा के नि:संतान मर जाने पर उसको दत्तक लेने का अधिकार न दिया जाये। इस नीति के अनुसार महाराज के मरते ही मेजर एलिस ने तुरंत ही झाँसी के खजाने में ताला डाल दिया और राज्य का पूरा प्रबंध अपने हाथ में ले लिया। रानी ने एक बार फिर कोशिश की दामोदर राव को राज्य का उत्तराधिकारी बनाया जाये। लेकिन वे नाकाम रहीं विवश होकर उन्होंने पेंशन लेना आरम्भ कर दिया अब उनका अधिकांश समय पूजा पाठ में व्यतीत होता था। रानी की दिनचर्या संयमित और नियमित हो गयी थी। महाकाली को अपना इष्ट मानने वाली रानी नित्य गीता पाठ और तुलसी पूजन करती थीं। इसके बाद जो समय बचता उसमें वे घुड़सवारी और व्यायाम करती थी पूर्ण वैराग्यमय जीवन बिताने वाली रानी ने अपना राज्य हड़प लेने के पश्चात भी अंग्रेजों के प्रति अपना व्यवहार अच्छा रखा लेकिन अंग्रेज रानी से सशंकित थे। वे रानी पर पूर्ण विश्वास नहीं रखते थे क्योंकि उस समय भारत में विद्रोह की अग्नि भड़क रही थी सन् 1857 के जनवरी के महीने से ही भारतीय फौजों में अंग्रेजों के प्रति असन्तोष प्रकट हो रहा था। विद्रोह आरम्भ करने की तिथि नियत की गयी लेकिन भारतीय फौजों में इतना अधिक असन्तोष बढ़ गया कि मेरठ के सिपाहियों ने 10 मई को क्रांति का श्री गणेश कर दिया वहां के समाचारों से कानपुर झाँसी में देशी सेनाओं में उत्तेजना फैल गयी। इस बात को निश्चित रूप से नहीं कहा जा सकता कि उस समय झाँसी में देशी सेना द्वारा विद्रोही बनकर 114 अंग्रेज स्त्री पुरूषों का कत्लेआम हुआ उसमें रानी का कितना हाथ था, लेकिन ये तो सत्य है कि क्रांति के प्रमुख नेता नाना साहब से उनका पुराना रिश्ता था। विद्रोहियों द्वारा अंग्रेजों को मारने के बाद वे शहर छोड़कर दिल्ली की तरफ चले गये तब शहर को अव्यवस्थित देखकर रानी ने उसका संचालन अपने हाथ में ले लिया प्रजा की रक्षा करने के लिये लक्ष्मीबाई को सेना की व्यवस्था करनी पड़ी। नई तोपें ढाली गई नये सिपाही भर्ती किये गये शासन के प्रत्येक विभाग पर रानी के दृढ़ चरित्र का प्रभाव पड़ा। एक 23 वर्षीय रानी ने अपने उत्साह से झाँसी के निवासियों के हृदय पर गहरा प्रभाव छोड़ा जनता अपनी रानी पर सम्मोहित हो गयी इस बीच रानी ने अंग्रेज अधिकारियों को यह विश्वास दिलाया कि जब तक झाँसी में सरकारी अधिकारी नहीं है तब तक राज्य में लूटपाट और उपद्रव का भय है तब तक के लिये मैंने शासन व्यवस्था अपने हाथ में ली है, लेकिन अंग्रेज, रानी का विश्वास नहीं कर पाये उन पर विद्रोही होने का लांछन लगाया गया।

रानी को राज्य भार संभाले कुछ ही समय हुआ था कि घरेलू मोर्चों पर उन्हें भारी मुसीबतों का सामना करना पड़ा। सदा शिव राव नारायण नामक व्यक्ति जो गंगाधर राव का दूर का संबंधी था अपने को झाँसी की गद्दी का हकदार बताने लगा। उसके विद्रोह को दबा कर रानी ने उसे गिरफ्तार कर कैदखाने में बंद करवा दिया इसके बाद ओरछा के दीवान नत्थे खाँ ने 20 हजार फौज लेकर झाँसी पर आक्रमण कर दिया। लेकिन रानी के नेतृत्व में झाँसी की सेना ने बड़ी वीरता से उसका समाना किया। थोड़े ही दिनों में नत्थे खाँ का साहस टूट गया वह हार मानकर अपने स्थान पर चला गया इस युद्ध में रानी की वीरता देखकर अंग्रेज दंग रह गये। रानी की कुशल सैन्य संचालन व्यवस्था, प्रजा में शांति और सुव्यवस्था बनाये रखने की चहुँमुखी कोशिश देखकर अंग्रेज हैरान हो गये। लक्ष्मीबाई को राज्य संचालन का कोई अनुभव नहीं था। उनकी आयु भी कम थी ऐसे कठिन समय में जब देश में राजनीतिक उथल-पुथल हो रही थी जहाँ अधिकांश शासक अपना ध्यान शान शौकत सुखोय भोग की तरफ लगा रहे थे।

उस समय लक्ष्मीबाई झाँसी में एक श्रेष्ठ शासनकर्ता और चतुर राजनीतिज्ञ का पार्ट अदा कर रही थीं। उनके सुशासन की तारीफ आज भी देशवासी करते हैं वास्तव में स्त्री हो पुरुष उसकी श्रेष्ठता का आधार-उसका उज्जवल चरित्र और सच्ची कर्तव्यनिष्ठा ही है। यही कारण जहाँ उस समय के राजाओं और नबाबों का कोई जिक्र नहीं करता वहीं झाँसी की रानी की वीरता की गाथा इतिहास का महत्वपूर्ण विषय बन गयी।

रानी अंग्रेजों की आँख की किरकिरी बन गयी वे तो मौके की तलाश में ही थे झाँसी के दमन की तैयारी होने लगी विद्रोह का नया अध्याय शुरू हुआ। इंगलैण्ड से सेनापति ह्यूरोज

और हैमिल्टन के नेतृत्व में विद्रोह के सरदारों को अंग्रेजी सेना ने कुचलना प्रारंभ कर दिया चूंकि रानी का नाम भी विद्रोही नेताओं में था अत: ह्यूरोज के नेतृत्व में सेना महू (इंदौर) से रवाना हुयी और सीहोर रोहतासगढ़, सागर, गढ़ाकोटा, मदनपुर आदि अनेक स्थानों पर विद्रोहियों को अपने आधीन करती हुयी। मार्च 1858 को झाँसी से 14 मील के फांसले पर अपना कैम्प लगाया 20 मार्च प्रात:काल सर ह्यूरोज अपनी सेना सहित झाँसी के पास पहुँच गये, उसने रानी से कहलवाया आप अपने सैनिकों एवं किले सहित आत्मसमर्पण कर दें, रानी यह सुनकर आग बबूला हो उठीं। उन्होंने पत्र लिख उत्तर दिया कि "मैं आत्म समर्पण को अपना प्रत्यक्ष अपमान समझती हूँ भारतीय नारी अपनी संस्कृति एवं राष्ट्रीयता की अनुगामिनी है वह कैसे किसी पर पुरूष के सामने आत्मसमर्पण कर सकती है" इतिहासकारों का मत है।

इस उत्तर से अंग्रेजी सेना क्रोधित हो उठी उसने झाँसी पर आक्रमण कर दिया। रानी भी यह देख कर क्रोधित हो गयी उन्होंने भी अंग्रेजों के खिलाफ विद्रोह का झंडा खड़ा कर दिया। जिस समय रानी और अंग्रेजों का युद्ध हुआ उस समय किले एवं नगर में कुल 11 हजार सेना थी उसमें भी नये भर्ती किये गये सिपाही अंग्रेजी फौजों के बागी सिपाही थे। इसके अलावा रानी की स्त्री सैनिकों की एक छोटी सी सेना थी जिसका नाम लक्ष्मी सेना था। झाँसी की सेना 13-14 दिन अंग्रेजी सेना का मुकाबला करती रही रानी ने भी किले पर कड़क, बिजली, भवानी शंकर, धनगर्ज, तोपें रखवा दीं। शहर के चारों तरफ एक परकोटा भी था जिसमें 5 फाटक थे। स्थान-स्थान पर बुर्ज थे जिन पर तोपें रखी थीं रानी की धनगर्ज तोप की मार से अंग्रेजी सेना में हाहाकार मच गया विकट संग्राम हुआ यह अपनी तरह अद्‌भुत संग्राम था उसका वर्णन करते हुए अंग्रेजी सेना के एक अफसर डॉ.लो ने लिखा है।

"कि शत्रुओं की अग्नि की मार अत्यंत प्रबल हो गई बन्दूकों की गड़गड़ाहट तोपों की गरज से पत्थरों के गिरने की धमक एवं भारी वृक्षों के नीचे गिरने की ध्वनि से प्रलय जैसी स्थिति उत्पन्न हो गयी थी"

लेकिन कुछ संभलकर वे आगे फिर बढ़े हांलाकि रानी की सहायता के लिये तात्याटोपे भी लड़ने आये थे। परंतु, नदी की रेत में तोपें धंस जाने से निकल नहीं पाये और वे अपने केन्द्र स्थान कालपी चले गये। लेकिन ये कम महत्व की बात नहीं थी कि अकेली रानी का इतने समय तक अंग्रेजों के सामने डटे रहना, क्योंकि अंग्रेजों ने बाकि विद्रोहियों को 5-7 दिन में कब्जे में कर लिया था लेकिन झाँसी में 12-13 दिन तक लगातार भीषण युद्ध हुआ। आखिरकार अंग्रेजों ने राजमहल पर धावा बोल दिया रानी ने कहा यह असंभव है कि मेरे जीते जी झाँसी अंग्रेजों की हो जाये दो सौ सिपाहियों को लेकर रानी नगर के उत्तरी दरवाजे से निकल गयी और कालपी की ओर चल दी रानी ने मर्दानी पोशाक पहन रखी थी, सफेद घोड़े पर सवार वह एक नवयुवक की तरह जान पड़ती थी। अपने दत्तक पुत्र को पीठ पर बांध रखा था, रानी झाँसी से 21 मील की दूरी पर स्थित भांडेर नामक स्थान पर पहुँची लेकिन लेफ्टिनेंट वोकर लगातार उनका पीछा करता हुआ आ पहुँचा। रानी ने अपना पीछा करने वालों को धूल चटा दी। तलवार चमकाती हुयी वह आगे निकल गयी 24 घण्टे में 102 मील का लम्बा रास्ता पार करके रानी कालपी पहुँची। कालपी में उस समय तात्या टोपे बांदा के नवाबं राव साहब एकत्रित थे। रानी को देखकर वे बहुत प्रसन्न हुए। सबने मिलकर अंग्रेजों से लड़ने की योजना बनायी और एक साथ प्रतिज्ञा की हिंदुस्तान की मर्यादा बनाये रखने के लिए उनकी तलवार हमेशा रहेगी।

लेकिन ह्यूरोज ने कालपी पर 15 मई को आक्रमण कर दिया, विकट युद्ध हुआ रानी वहाँ स्वयं घोड़े की लगाम दांतों से दबाये दोनों हाथों से तलवार चला रही थी एक धुरंधर सेना नायक की तरह वह खुद लड़ रहीं थी, लेकिन वहीं अंग्रेजी सेना के सामने कालपी की फौज ठहर न सकी। कालपी में ठहरना ठीक न समझकर रानी ग्वालियर पहुँची लक्ष्मीबाई तात्याटोपे और राव सा. ने मिलकर ग्वालियर पर धावा बोल दिया और ग्वालियर पर अधिकार कर लिया।

वहाँ के राजा सिन्धिया अंग्रेजों के मित्र एवं सहायक थे, लेकिन प्रजा में विद्रोह था, प्रजा चाहती थी राजा अंग्रेजों से लड़े लेकिन जयाजीराव सिन्धिया और दिनकर सब भाग खड़े हुये और आगरा पहुँच कर अंग्रेजों से जा मिले। ग्वालियर पर अधिकार हो जाने से वहाँ का खजाना और सैन्य सामग्री विद्रोही दल को मिल गयी, रानी ने राव सा. को बहुत समझाया कि वे पहले की गलती न दुहरायें हमें अपनी सैन्य शक्ति मजबूत करनी चाहिए क्योंकि अंग्रेज चुप नहीं बैठेंगे हमें हर तरह से तैयार रहना चाहिए लेकिन राव सा. विजयोत्सव में मगन रहे और सर ह्यूरोज 16 जून को मोरार के निकट आ पहुँचे। एक विद्रोही दल उनका मुकाबला करने भेजा गया। लेकिन वह 2 घण्टे में ही परास्त हो गया ग्वालियर की सेना के कुछ अफसर रंग बदला देखकर अंग्रेजों से जा मिले यह दशा देख कर रानी जीवन मरण का ध्यान छोड़कर रण क्षेत्र में कूद पड़ी महारानी ने जीवन संग्राम की तैयारी की कमर में नंगी कृपाण लटकाये तलवार चलाती साक्षात दुर्गा की तरह वह सैनिकों मे नया जीवन भरने लगी सैनिकों ने दुगुने उत्साह से युद्ध किया कई सैनिक वीर गति को प्राप्त हुये।

16 जून को कोटा की सराय में भीषण युद्ध हुआ अंग्रेजों को हिन्दुस्तान से बाहर निकालने का का उनका यह अंतिम और जोरदार प्रयास था। 17 जून की सुबह फिर बिगुल बजा घमासान युद्ध हुआ रानी ने कुशल युद्ध संचालन किया लेकिन उनके सब साथी अंग्रेजी सेना की गोलियों की वर्षा से घायल होते या मरते जाते थे रानी का घोड़ा भी कई गोलियां लगने से भाग खड़ा हुआ भागता हुआ एक सूखे नाले के पास जा पहुँचा उसे फांदने की कोशिश में वह फिसल कर गिर गया और झाँसी के राजमहल की वह राजमहिषी उस स्थान पर अकेली हो गयी उनके साथी भी थोड़ी दूर थे इतने में अंग्रेज सवार जो पीछा कर रहा था शीघ्रता से पहुंचकर रानी पर तलवार से वार किया जिससे उनके चेहरे का आधा भाग कट गया। लेकिन रानी ने साहस नहीं छोड़ा विद्युतगति से पीछे फिर कर ऐसा हाथ मारा वह उसी जगह गिर कर मर गया रानी ने उसके शरीर को धराशायी कर दिया और उसके शव पर पैर रख दिये रानी के घावों से बहुत खून बह रहा था। उनका शरीर बराबर शिथिल होता जा रहा था। यह देखकर उनके सरदार उनको उठाकर पास ही बनी एक झोपड़ी में ले गये जहां गंगादास नाम के साधू रहते थे।

रानी को प्यास लगी बाबाजी ने उन्हें गंगाजल पिलाया कुछ ही देर में उस महान नारी ने अपने प्राण त्याग दिये। प्राण त्यागने से पहले लक्ष्मीबाई ने अपने साथियों से कहा ये अंग्रेज मुझे जिन्दा में नहीं पकड़ पायें न ही मुझे मरने के बाद छू पायें। सरदारों ने भी उनकी इस महान आज्ञा का पालन किया उनके शव को घास के बड़े ढेर में रखकर आग लगा दी जिससे वह भस्मसात् हो गयी इस तरह से एक ऐसी वीरांगना का अन्त हो गया जिसने मातृभूमि के प्रति अपने कर्तव्य को पालन करने स्वेच्छापूर्वक प्राणों का उत्सर्ग कर दिया उनकी विशेष प्रशंसा इस बात में है उन्होंने शुरू से ही अपने सामने आने वाले प्रत्येक कर्तव्य को निःस्वार्थ भाव से पूरा किया। यद्यपि वह केवल 23 वर्ष तक जीवित रही उसमें भी जनता के सामने उनका कार्यकाल सिर्फ 1 वर्ष का था पर इसी बीच रानी लक्ष्मीबाई ने ऐसे काम कर दिखाये जिनकी याद आज वर्षों बीत जाने पर भी ताजा बनी हुयी है। रानी के ऊपर यह उक्ति पूर्णत: लागू होती है कि-

''सिंह चाहे दो चार वर्ष ही जीवित रहे
पर उसके शौर्य की प्रत्येक प्रशंसा करता है,
पर कौआ सौ वर्ष जीने पर भी सिवाय जूठन के
और किसी श्रेष्ठ वस्तु का अधिकारी नहीं हो सकता।''

झाँसी की रानी ने भारतीय स्त्री की ''अबला'' छवि को नकार दिया अपनी कर्मठता और वीरता से ऐसा कार्य कर दिखाया जिससे उनके साथ उनके पति गंगाधर राव और झाँसी का नाम भी भारतीय इतिहास के पृष्ठों पर हमेशा के लिये अंकित हो गया।

''अमर रहे झाँसी की रानी, रहे सदा यह अमर कहानी
देश भक्ति से पूर्ण हमारा, अमर रहे भारत का पानी।''

– हजारी भवन, हटा (दमोह)

बुंदेली वैवाहिक लोकगीत

–कु. सौम्या पांडे

कच्ची सी ईंट बाबुल देरी न धरयो
बेटी न दइयो परदेस मोरे लाल।
भइयाको दीनो महल अटारी
बेटी खो दीनो परदेस मोरे लाला
बाबुल कहें बेटी निस दिन अइयो
माई कहें दोऊ जोर-मोरे लाल।
भइया कहे बहनासमय ओसर आइयो
भोजी कहे कोन काम मोरे लाल
बाबुल ने दीनो नो मन सुना
माई लहर पटोर मोरे लाल।
भइया ने दीने चढ़त को घुड़ला
भोजी सेंदुर भर मांग मोरे लाला।
नो मन सुन्नो नोंड़े दिना खेहे
फट जेहे लहर पटोर मोरे लाल।
चढ़त के घुड़ला वेई टूट जें हे
बच हे सेदुर भर मांग मोरे लाल।
पकर हतुलिया डोला में धर दई
निग चली सासरे की गैल मोरे लाल
बीचा में मिल गयो गांव को बरेदी।
मइया से संदेसो कइयो मोरे लाल।
हमरे खेलत की धरी हे पुतरिया
गंगा में दइयो सिराय मोरे लाल।
कच्ची सी ईंट बाबुल द्वारे न धरयो
बेटी न दइयो पर देस मोरे लाल।

– ज्ञानगंगा इन्टरनेशनल स्कूल,
जबलपुर (म.प्र.)

बुन्देलखण्ड के साहित्यकारों का स्वतंत्रता संग्राम में योगदान

– उदय शंकर दुबे

'पवित्र भूमि' बुन्देलखण्ड ऋषि मुनियों की तपस्या स्थली रही है वीर-योद्धाओं की क्रीड़ास्थली के साथ विपदाग्रस्त लोगों के लिये आश्रयस्थली भी इस धरती ने समय-समय पर एक से एक वीर योद्धाओं को जन्म दिया जिन्होंने अपने स्वाभिमान की रक्षा के लिये सर्वस्व न्यौछावर कर दिया। आल्हा-ऊदल इसी धरती की देन थे जिनकी यशगाथा आज भी लोक कंठ में बसी है। भारतीय इतिहास इस बात का साक्षी है कि पृथ्वीराज से लेकर जितने भी मुस्लिम शासकों ने दिल्ली पर अधिपत्य किया, उन सबकी दृष्टि बुन्देलखण्ड पर ही लगी रहती थी। इसका कारण बुन्देलखण्ड का अपार वैभव और दक्षिण में जाने का मार्ग रहा है, इसी कारण से बुन्देलखण्ड के राजाओं और जनता को निरंतर युद्ध में आत्मोसर्ग के लिये तैयार रहना पड़ता था। मुस्लिम बादशाहों ने तो इस खण्ड विशेष को तहस-नहस कर अपनी सत्ता सदैव के लिये स्थापित करने का निश्चय ही कर लिया था। अकबर-शाहजहाँ और औरंगजेब द्वारा ओरछा पर बार-बार किया गया आक्रमण उक्त कथन को सिद्ध करता है।

औरंगजेब के ही समय में महाराष्ट्र में शिवाजी ने स्वतंत्र राजसत्ता की स्थापना की। शिवाजी का आगरा की जेल से निकलकर भागना मुगल सत्ता के लिये सबसे बड़ी चुनौती थी। यदि हम यह कहें कि शिवाजी के समय से ही देश में राष्ट्रीय चेतना का उदय हुआ तो कोई अतिशयोक्ति नहीं होगी। शिवाजी के आदेश और प्रोत्साहन पर ही छत्रसाल बुन्देला ने आगरा, इलाहाबाद, मालवा की सूबेदारियों को तोड़कर बादशाह की आँखों के सामने ही स्वतंत्र राज्य की स्थापना कर ली थी। इस प्रकार से छत्रसाल का पूरा जीवन युद्ध में बीता।

छत्रसाल की वीरता का वर्णन लालकवि, हरिकेश, भूषण आदि कवियों ने बहुत अच्छे से किया है। बुन्देल खण्ड की धरती पर निरंतर युद्ध होने के कारण से यहाँ के कवियों ने समय-समय पर वीर काव्य ग्रंथों की रचना की। इस क्षेत्र के कवियों द्वारा रचित युद्ध काव्य की संख्या अधिक है जिन्हें उन्होंने रासो या कटक का अभिधान दिया है। ये ग्रंथ सशक्त हिन्दी भाषा में लिखे गये है जिनमें तत्कालीन जन-जीवन संस्कृति, इतिहास, राजनीति, धर्म, युद्ध विषयक सामग्री की जानकारी मिलती है। आल्हखण्ड, परमालरासो-जगनिक, दलपत्ति राव रासो जोगीदास, भगवंत सिंह कौ रायसो- कवि सब सुख, करडिया कौ रायसो-गुलाब कवि, शत्रुजीत रायसो, किशुनेश भाट, शत्रुजीत रायसो-साहिब राय, पारीछत रायसो-श्रीधर, बाघाट रायसो-आनंद सिंह कुडरा, लक्ष्मी बाई रायसो-कल्याण सिंह कुडरा, लक्ष्मीबाई रासो-मदन मोहन पदनेश, झाँसी की रानी, लक्ष्मी बाई चरित-द्वारिका प्रसाद मिश्र, इनके अतिरिक्त कटक संज्ञा से युद्ध काव्य रचे गये-यथा-पारीछत को कटक-भैयालाल दुवे, ब्रज किशोर, झाँसी को कटक-भागीदास, श्याम, मिलण को कटक-भैरोलाल, छत्रसाल को कटक बंधदलकारी आदि। इस क्षेत्र में रचे गये राछरे और जागड़ा तथा करखा भी युद्धगीत की श्रेणी में आते हैं। लाल कवि कृत छत्र प्रकाश तथा जगतराज दिग्विजय ग्रंथ में युद्धों का वर्णन मिलता है, मानकवि कृत नीति निधान में भी कई युद्धों का वर्णन है। उपर्युक्त सभी ग्रंथ युद्ध विषयक हैं। राजा व जनता को प्रेरित करने के लिये, वह युद्ध से विमुख न हो सबसे पहले बुन्देलखण्ड में ही 'कृष्णायन' ग्रंथ की रचना का श्री गणेश हुआ। यह श्रेय कवि मंचित को है, मंचित के बाद कृष्णायन ग्रंथ लिखने की परंपरा चल पड़ी।

इस प्रकार हम देखते हैं कि अपनी स्वतंत्रता की रक्षा के लिये बुन्देलखण्ड के राजागण सदैव युद्ध के लिये तैयार रहते थे। उनके साथ उनकी प्रजा भी लगी रहती थी।

मुस्लिम सत्ता की समाप्ति के पूर्व ही अंग्रेजों ने धीरे-धीरे समूचे भारत पर अधिकार कर लिया। सन् 1764-65 ई. में अंग्रेजों ने बक्सर के युद्ध में अवध के नबाब शुजाउद्दौला को पराजित कर दिया। कमजोर मुगल बादशाह शाह आलम अंग्रेजों के पक्ष में चला गया। बक्सर के युद्ध के बाद ही अंग्रेजों ने धीरे-धीरे पूरे देश पर अधिकार कर लिया। शाहआलम ने 12 अगस्त 1765 ई. को बंगाल, बिहार और उड़ीसा की दीवानी ईस्ट इंडिया कंपनी को सौंप दी। अवध के नबाब ने संधि कर ली। इससे अंग्रेजों की शक्ति में बहुत वृद्धि हुई। भारत में व्यापार करने के लिये आये अंग्रेजों की ईस्ट इंडिया कंपनी ने पूरे भारत पर अपना आधिपत्य कायम कर लिया। अंग्रेजों ने भारत पर स्थायी रूप से शासन करने के लिये जिस प्रशासनिक ढाँचे को खड़ा किया था। उसका उद्देश्य राष्ट्रीय भाव को कुंठित करके भारत के लोगों में पराजय की भावना का संचार

करना था। यह उनकी बड़ी सोची समझी नीति थी। सन् 1781 ई. से लेकर सन् 1820 ई. के मध्य तक अंग्रेजों ने बुन्देलखण्ड की रियासतों से समझौता कर ऐन-केन प्रकार से अपने अधीन कर लिया था। अंग्रेजों की शक्ति के सामने सभी नबाब और राजे नतमस्तक हो चुके थे। किंतु अभी भी देश में कुछ राजा थे जो अंग्रेजों से संधि तो कर चुके थे किंतु उनकी कुटिल नीति तथा अपनी प्रजा पर उनके अत्याचार से क्षुब्ध होकर विद्रोह करने को बाध्य हो गये। सन् 1780 ई. में काशी के राजा चेतसिंह ने अंग्रेजों के प्रति विद्रोह किया। काशी की जनता ने कई अंग्रेज अधिकारियों और सैनिकों को मार डाला। अपनी कमजोर स्थिति को देखते हुये काशीराज चेतसिंह ने काशी को छोड़कर बुन्देलखण्ड में आकर शरण ली। काशी नरेश चेतसिंह ने महादजी सिंधिया के पास अपना एक दूत भेज कर उनके सामने एक बड़ी फौज के साथ अंग्रेजों से लड़ने का प्रस्ताव रखा तथा स्वयं दतिया के पास सिंधिया से जा मिले। उन्होंने महादजी सिंधिया से शिवाजी और संभाजी को साथ लेकर बनारस पर धावा बोलने की आज्ञा चाही। तब चेतसिंह ने उनकी सेना की बाकी तनख्वाह और भविष्य में राजा का साथ देने वाली सेना की तनख्वाह देने का वादा किया। सिंधिया की फौजें चेतसिंह के साथ हो ली थीं। किंतु इसी बीच सिंधिया ने एक तरफ राजा को अपने यहाँ सरंक्षण दिया तो दूसरी ओर उसने अंग्रेजों से संधि कर ली। (काशी का इतिहास, पृ. 288, डॉ.मोती चंद)

चेतसिंह के काशी से भाग जाने के बाद वारेन हेस्टिंग्स की सेनाओं ने उसके पूरे राज्य पर अधिकार कर लिया। हेस्टिंग्स ने सितंबर सन् 1789 ई. को एक इश्तिहार द्वारा चेतसिंह और सुजान सिंह के अतिरिक्त सबको क्षमा कर दिया- ''राजा चेत सिंह ने बगावत करके कुछ अंग्रेज अफसर और सिपाहियों को कत्ल किया है ओर इसलिये बगावत का कसूरवार होने के कारण उसका और उसके भाई सुजान सिंह का अथवा उनके वंशधरों का बनारस की गद्दी पर कोई हक नहीं रह जाता। अगर जमींदार, नागरिक, रियासत और आमिल उसका साथ देंगे तो उन्हें सजा मिलेगी।'' (वहीं,पृ.286)

प्रथम भारतीय स्वंत्रता संग्राम के पूर्व बुन्देलखण्ड में भी अंग्रेजों के प्रति विद्रोह हुआ था। इस विद्रोह का नेतृत्व जैतपुर के राजा पारीछत ने किया था। सन् 1841 ई. तक अंग्रेजों ने पूरे भारत को अपने आगोश में कर लिया था। इस स्थिति में भी राजा पारीछत ने अंग्रेजों के विरुद्ध युद्ध का आह्वान किया, यद्यपि अपने ध्येय में उन्हें असफल होना पड़ा किन्तु इससे यह तो पता चलता है कि बुन्देलखण्ड की जनता स्वतंत्रता के लिये उत्सर्ग करने को तैयार थी। कवि ब्रिज किशोर ने 'पारीछत कौ कटक' की रचना की थी। जिसमें पारीछत और अंग्रेजों के मध्य हुये युद्ध का वर्णन है।

इस प्रकार हम देखते हैं कि सन् 1856 ई. के पूर्व भी अंग्रेजों के विरुद्ध लोग बगावत कर रहे थे और अंग्रेजों को देश से भगाने की योजना में संलग्न थे। सन् 1856 ई. में देश के विभिन्न अंचलों में अंग्रेजों के खिलाफ एक साथ विद्रोह का शुभारंभ हुआ। बुन्देलखण्ड में रानी लक्ष्मीवाई ने इस विद्रोह का नेतृत्व किया ओर जनता में ''सुराज'' का भाव जागृत किया। सन् 1856 ई. के भारतीय स्वतंत्रता के संग्राम ने दो ऐसे सेनानायकों को प्रदान किया जिनसे आगे के स्वतंत्रता सेनानियों को प्रेरणा मिली। उनमें प्रथम झाँसी की रानी लक्ष्मीवाई का नाम है तथा दूसरे बिहार के बाबू कुँवर सिंह हैं, बाबू कुंवर सिंह अंग्रेजों से युद्ध करते हुए बिहार से चलकर रीवा होते हुये कर्वी पहुँचे थे और विनायकराव के पुत्रों- नारायणराव तथा माधवराव से आर्थिक सहयोग माँगा था। अंग्रेजों को इस बात की जानकारी हो गई तो दोनों भाईयों पर विद्रोही होने का संदेह करके उनका घर लूट लिया गया था। कर्वी से बाबू कुंवर सिंह बांदा होते कानपुर गये। वहाँ से उन्होंने पुनः बिहार पहुँच कर अंग्रेजों से युद्ध किया। (कुँवर सिह अमर सिंह लेखक- डॉ. कालीकिंकर दत्त, अनु.पं 6 विनाथ पाण्डेय, बिहार राष्ट्र भाषा परिषद-पटना, सन् 1959 ई. पृ.52) अंग्रेजों के प्रति विद्रोह कर प्रारंभ में काशीराज चेतसिंह ने बुन्देलखण्ड की ओर मुख मोड़ा, उनके बाद जगदीशपुर (बिहार) के बाबू कुँवर सिंह भी यहाँ आये। यह बुन्देलखण्ड के लिये गौरव की बात है।

रानी लक्ष्मीबाई पर सबसे पहले दतिया रियासत के कल्याण सिंह कुडरा ने लक्ष्मीबाई रायसो लिखकर रानी की यशकीर्ति को आगे बढ़ाया। कल्याण सिंह की यह पंक्ति रानी की लड़ाई की जहाँन में बड़ाई है, बड़ी प्रेरक रही। कवियों ने रानी लक्ष्मीबाई पर स्वतंत्र ग्रंथ और फुटकर छंदों की रचना की। ये रचनाएँ स्वतंत्रता के प्रेमियों का उत्साहवर्द्धन करती थीं। कवियत्री सुभद्रा कुमारी चौहान की पंक्ति 'बुन्देले हरबोलों के मुख मैंने सुनी कहानी थी। खूब लड़ी मरदानी वह तो झाँसी वाली रानी थी' तथा वीरों का कैसा हो बसंत आज भी लोगां को स्मरण है।

यद्यपि सन् 1857 ई. का स्वाधीनता संग्राम कई एक कारणों से सफल तो न हो सका किंतु उसकी आग बुझी नहीं थी, वह अंदर ही अंदर सुलग रही थी। स्वाधीनता प्रेमी राष्ट्रीय

चेतना की अलख जगाये हुये थे। एक सशक्त नेतृत्व की आवश्यकता थी, ऐसे ही समय में महात्मा गाँधी जी ने राजनीति में पदार्पण किया। महात्मा गाँधी की वाणी में इतनी शक्ति थी कि उनके एक आह्वान पर संपूर्ण देश की जनता अंग्रेजी साम्राज्यवाद के विरोध में उठ खड़ी हो गई। देश के विभिन्न अंचलों के राजनयिक, कवि, लेखक, पत्रकार, विश्वविद्यालयों व कॉलेजों के छात्र स्वाधीनता संग्राम में कूद पड़े। चंद्रशेखर आजाद भगतसिंह जैसे न जाने कितने क्रांतिकारी सशस्त्र क्रांति के लिये तैयार हो गये। अन्य संभागों की ही तरह बुन्देलखण्ड के भी कवि, लेखक तथा पत्रकारों ने, अंग्रेजी सत्ता के विरोध में अपनी कलम उठा ली। छात्रों ने भी विद्यालयों का बहिष्कार किया। लोगों के सामने रानी लक्ष्मीबाई और राजा पारीछत के बलिदान का उदाहरण कवि-लेखकों ने अपनी सशक्त लेखनी से प्रस्तुत किया। बिहार और पूर्वी उत्तर प्रदेश में यदि बाबू कुँवर सिंह के गीत गाये जाते थे तो बुन्देलखण्ड में रानी लक्ष्मीबाई के।

यद्यपि बुन्देलखण्ड की प्रशासनिक स्थिति थोड़ा अन्य संभागों से अलग थी। पूरे बुन्देलखण्ड में सामंती व्यवस्था थी। राज्य की जनता अपने राजा के प्रति निष्ठावान थी। किंतु अंग्रेजी सत्ता के प्रति उसके मन में आन्दोलन चलाना अत्यंत कठिन कार्य था। इतना होते हुए भी प्रबुद्ध वर्ग ने अपनी लेखनी व वाणी के माध्यम से जन मानस में स्वतंत्रता का बिगुल बजाया। अखिल भारतीय देशी राज्य प्रजा परिपद केअध्यक्ष डॉ. पट्टाभि सीतारमैया ने रियासतों की जनता का पूरा साथ दिया। सन् 1937 ई. में प्रकाशित मेमोरेण्डा आज दि इंडियन स्टेट्स से ज्ञात होता है कि उस समय बुन्देलखण्ड छोटी-बड़ी कुल मिलाकर बत्तीस रियासतें थीं। इन सभी रियासतों से अंग्रेजों की संधि हुई थी। (मेमोरेण्डा मुगल दि इंडियन स्टेट्स, पृ. 24-43, सन् 1937 ई., गवर्नमेंट आफ इंडिया प्रेस, न्यू देलही) इन रियासतों में स्वतंत्रता सेनानियों प्रजामण्डल के माध्यम से आन्दोलन में सहयोग किया।

प्रसिद्ध क्रांतिकारी चंद्रशेखर आजाद भी ओरछा के पास स्थित सातार (ओरछा) में छद्म वेश में रहकर क्रांतिकारी वीरों का संगठन किया था। हर रियासत के कवियों और लेखकों ने कविता तथा लेख के माध्यम से जनता को प्रोत्साहित किया। सभी कवि लेखकों का नामोल्लेख करना विस्तार होगा। कई ऐसे भी कवि थे जिनकी रचनाएँ प्रकाश में नहीं आ सकीं। ऐसे ही कवि नवी वख्श फलक थे। उन्होंने रानी लक्ष्मीबाई के प्रति आठ छंदों की रचना की थी, साथ ही भारत माता के प्रति, भारत की दुर्दशा, भारत माता की पुकार-स्वराज की अभिलाषा शीर्षक छंद लिखे थे। फलक ने सन् 1941 में स्वराज की अभिलाषा नामक कविता में अपना भाव इस प्रकार किया है-

"सुख भोगने की अभिलाषा नहीं नहि कामना नाम की है मन में
परवाह नहीं मरने की मुझे नहि खेद जो बंधन हो तन में।
नहि चाहिए वैभव वित्त प्रभो न निवास हो नंदन कानन में,
पर देख लूं मैं इस भारत पै सुख शांत स्वराज स्वजीवन में।"

रानी लक्ष्मीबाई से संबंधित एक छंद प्रस्तुत है-

निकली किले से हिले श्वेत दुश्मनों के दिल,
कूद जल्द जंग मोरो पंत की लली गई।
कहत फलक छलियों की उस फौज पर,
खूब शमशीर बजी दाल सी दली गई।
चूडियाँ कलाईयों में पहिन लड़ाकू भगे,
झाँसी के चमन की वो महक कली गई।
वाह-वाह बाई जालिमों की मिस्ता काई काट,
जंग के समुंदर में तैरती चली गई।

कहना न होगा कि सन् 1857 की वीरांगना लक्ष्मीबाई पर स्वाधीनता पूर्व और बाद में बहुत अधिक साहित्य लिखा गया। इतिहासकारों ने लक्ष्मीबाई पर अंग्रेजी और हिन्दी भाषा में स्वतंत्रता इतिहास लिखा। कवियों ने उनके नाम से खण्ड काव्य की रचना की। जिनमें कल्याण सिंह, मदनेश, द्वारिकेश जी का नाम अग्रगण्य है। ऐतिहासिक उपन्यासकारों के लेखक बाबू वृदांवन लाल वर्मा का 'झांसी की रानी लक्ष्मीबाई' उपन्यास बहुत प्रसिद्ध है। रानी से संबंधित स्वच्छंद छंद लिखने वालों की संख्या बहुत है।

कुण्डेश्वर साहित्यकारों और क्रांतिकारियों का तीर्थस्थल रहा। ओरछा (टीकमगढ़) रियासत के राजा वीर सिंह जूदेव द्वितीय ने स्वाधीनता संग्राम में भरपूर सहयोग किया। उस समय की परिस्थितियाँ ऐसी थीं कि उन्होंने खुलकर स्वाधीनता संग्राम में भाग तो नहीं लिया किन्तु स्वाधीनता प्रेमियों को अपने यहाँ आश्रय दिया। यह जानते हुये भी टीकमगढ़ क्रांतिकारियों का तीर्थ स्थल बन गया था। शेरे शहीद नारायण दास खरे यहीं की धरती की देन थे। आज नीचे से लेकर ऊपर तक रिश्वत लेने की पूर्ण स्वंतत्रता हो गई है। नारायण दास ने अपने छोटे भाई नाथूराम को किसानों द्वारा प्रदत्त 531 लोन के कारण भारी प्रताड़ना दी थी। यह था उनका आदर्श चरित्र। सन् 1941 में ओरछा सेवा संघ पुनः 1942 बुन्देलखण्ड सेवा संघ का गठन भी किया। उन्होंने बुन्देलखण्ड प्रांत निर्माण का उद्घोष किया। उत्तरदायी शासन की माँग को आगे बढ़ाने के

लिये जिस भक्ति में अपनी चिरसंगिनी के पैजना भी गिरवी रखने की हिम्मत थी, उनके व्यक्तित्व को इससे आंका जा सकता है। उत्तरदायी शासन की माँग का आन्दोलन ही उनकी निर्मम हत्या का कारण बना। श्री खरे जी का बलिदान व्यर्थ नहीं हुआ। जनता को उत्तरदायी शासन प्राप्त हुआ श्री चतुर्भुज पाठक, श्री लाला राम बाजपेयी, लक्ष्मीनारायन नायक, श्याम लाल साहू, प्रेम नारायण खरे आदि सेनानी इसी मिट्टी की देन थे। छतरपुर के चरण-पादुका कांड से तो सभी परिचित हैं।

उनके गुरू पं. बनारसीदास चतुर्वेदी स्वतंत्रता के उपासकों में से एक हैं, उन्होंने उनको ससम्मान आमंत्रित कर कुण्डेश्वर में रहने की सारी सुविधा प्रदान की। पं. बनारसी दास चतुर्वेदी के बुन्देलखण्ड में आते ही पत्रकारिता के क्षेत्र में नई जाग्रति हुई। "मधुकर" पत्र के माध्यम से चतुर्वेदी जी ने बुन्देलखण्ड की प्रत्येक समस्या की ओर लोगों का ध्यान आकृष्ट किया। उन्होंने इस क्षेत्र के जागरूक कवियों और लेखकों को प्रेरणा दी। कुण्डेश्वर स्थित उनके निवास पर साहित्यकारों का जमघट लगा रहता था। साहित्यकारों के साथ स्वतंत्रता प्रेमी क्रांतिकारी भी उनके आश्रय में आकर निश्चिंतता पूर्वक अपनी योजना को आगे बढ़ाने का प्रयास करते रहे। नागपुर के क्रांतिकारी प्रोफेसर रामनरेश सिंह 'जन' उन्हीं की छत्रछाया में रहे। श्री शोभाचंद्र जोशी और वासुदेव सिंह जैसे क्रांतिकारी शिक्षक के रूप में यहीं पर रहे। क्या इस तथ्य का पता श्री वीर सिंह जूदेव को नहीं था? ऐसी बात नहीं है। उन्हें हर बात की जानकारी रहती थी किंतु वे जानते हुये अनजाने बने रहते। अपने गुरु के प्रति उनकी अगाध श्रृद्धा थी। पं. बनारसी दास चतुर्वेदी जी के द्वारा लिखे गये पत्रों से कई तथ्यों का उद्‌घाटन होता है।

"बुन्देलखण्ड प्रांत निर्माण" की योजना चतुर्वेदी जी की देन थी। इस विषय पर उन्होंने 'मुधकर' का पूरा अंक ही निकाला था। यह विशेष अंक आज इतिहास की धरोहर बन गया है।

ग्राम - करेरूआ, पो.- खमरिया
जिला - वाराणसी (उ.प्र.)

अब नईं कोऊ काऊ के लाने

भजन लाल महोबिया

राम राम जै राम बन्दगी
सब हो गये पुराने
अब नईं कोऊ काऊ के लाने॥

सत्य धरम मरजाद बची ती
पुण्य पाप पैचाने
अब नईं कोऊ काऊ के लान॥

परमारथ में सवई साथ थे
अब सब स्वारथ साने
अब नईं कोऊ काऊ के लाने॥

सांसे मन से बात करत ते
अब विष घट उपजाने
अब नईं कोऊ काऊ के लाने॥

सब जन भोले भाले होत ते
अब नईं कछू ठिकाने
अब नईं कोऊ काऊ के लाने॥
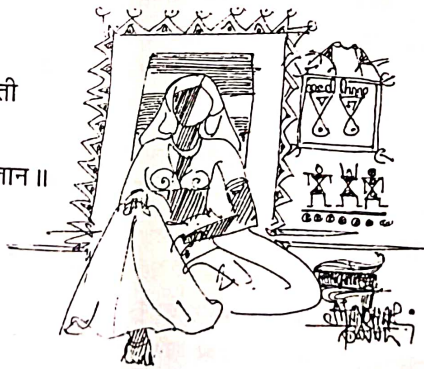
बदला समय बदल गई दुनियाँ
भजन भाव बिसराने
अब नईं कोऊ काऊ के लाने॥

बखत परे पै काम आत ते
अब दुख परे लुकाने
अब नईं कोऊ काऊ के लाने॥

राह गैल में हिलत मिलत ते
अब बरकई कढ़े जाने
अब नईं कोऊ काऊ के लाने॥

बुढ़ऊ सरऊ कोने में बैठे
उनके गये जमाने
अब नईं कोऊ कोउ के लाने॥

- महामंत्री
अ.भा.महोबिया महासभा
जबलपुर

भोला दामाद

डॉ. श्री नारायण पाठक

हमारे पुरखन की बातें, सदैव प्रेरणा कौ अखण्ड स्त्रोत रईं हैं। उनकी जीवनियन कौ अध्ययन अपुन लोगन के लानें सदैव ही शिक्षा-प्रद मार्गदर्शक सिद्ध भओ है। न केवल भारत भरखौं अपितु संसारी भर की सबई मानव जाति के लाने हमाओं जो बुन्देलखण्ड सांस्कृतिक आकर्षण को नोनो केन्द्र रओ है।

अपुन के बुजुर्गन ने सांझ होत बियारी करकें आग के कौंड़न, चबूतरन, चौपालन पै बैठ कें आस-पास के सारे बारे और बूढ़न खाँ रैन काटवे व समय बिलवाबै खोहाँ किस्सन व कहानियन के द्वारा ऐतिहासिक, महापुरूषन, ऋषि मुनिन, राजा-रानी, वीर-योद्धा, साधू-संतन, राजनीतिज्ञन, विदूषकन, भूत-प्रेतन, चिरवा-चिरइयन, मानव जातन, पशु-पक्षिन आदि के विषयन पर अपने गौरवशाली इतिहासन है। सरल, सुबोध और सहज ढंग से कहानिन के द्वारा अपुन के सामने प्रस्तुत कर अच्छो मार्ग दर्शन दओ है। बुजुर्गन की किस्सा कहानिन से अपुन नोनो मार्गदर्शन प्राप्त कर सकत है।

अपुन के पूर्वजनन ने जो भी किस्सा-कहानी अपुन लोगन खों हौं सुनाई उन बन में कौनऊँ न कौनऊँ अच्छो उद्देश्य छिपो रओ। अपुन के लाने उनई की सुनी-सुनाई एक किस्सा अपुन हौं पढ़बे लिख रये।

एक गाँव में एक कोरी रात तो ऊ कोरी के एक भोला नाम कौ लड़का हतो। भोला की शादी उतई के एक गाँव में कोरिन के पुरवा में हो गई। शादी के कछू दिनन बाद भोला के मताई-बाप ने कई कै जारे भोला तैं एकऊ बार अपनी ससुराल नई गओ। ईबार बहू खाँ लिवावै खुदई जइये, और हाँ सुन-अपुन कहूँ जात हैं सो बड़न के सामने निहुर लचक कै बात करने परत है। सौ अब तैं सुसराल जा और रास्ते में बड़े-बड़े लोग के गाँव पड़त है, सो अपुन निहुर-लचक के जइये। और जहाँ रात हो जावै उतई रूक जइये फिर भुनसारे (सुवह) ससुराल के लानें जइये। रात में चलवो ठीक नई रात आए। ऐसी सीख भोला के मताई-बाप ने भोला खें दई।

भोला अपनी ससुराल भोर होतईं निकर परो और जैसंई ऊके मताई-बॉप ने बताईती की कहूँ जाने परत तो निहुर लचक के जानें परत, सो भोला बैसई निहुर-लचक कें ससुराल के लानें जान लगो।

रास्ते में जुंडी के खेत परत ते। उतै खेतन की रखबारी वाले अपने-अपने खेतन पैं रखवारी कर रये हते। बेई समय पै भोला, निहुरे-लचकें अपनी ससुराल की गैल धरें जा रउते तो।

खेतन की रखवारी वालन ने देखों और सोची कि जो कौन आय भुंन्टन कौ चोर जो निहुरे-निहुरे, छिप-छिप कें (निहुरे-लचके) जा रओं। हो न हो हमारे खेतन में चोरी करवे बारौं जोई चोर आय। जेई ने हमारे खेत के भुन्टा चुराये हू हैं ?

खेती के रखवारन नें भोला कोरी हाँ, भुन्टन कौ चोर समझ कै पकड़ लओं फिर खूबई पिटाई कर दई-चोर समझ कै। फिर भोला से पूँछो-कि काये तुमईं आव हमाये खेतन के भुन्टा चोरी करते रये ? भोला नें बताई कि भइया हरौ मैं तो अपनी ससुराल कोरिन के पुरवा जा रओं। मैंने अपुन के खेत के भुन्टा नइ चुराये। किसानन नें पूंछी-तो फिर तुम काये निहुरे-लचकें जा रयेते ? भोला ने कई कि हमाई मताई बाप ने कई ती कि बेटा! घर के बाहर हमेशा, निहुरे लचके बड़े लोगन के बीच में चलने परत है, सो मैं निहुरे लचके चल रओं तो भइया। तब किसासन ने कई कि हम लोगन से गलती हो गई जो तुमाई पिटाई कर दई। हम लोगन ने सोची कि जौ निहुरें लचकें खेत के बीच से जा रओ, बई हमारे खेतन के जुन्डी के भुन्टा को चोर आये। सो भइया हम लोगन से गलती हो गई। फिर किसानन को चोर आये। सो भइया हम लोगन से गलती हो गई। फिर किसानन ने भोला हाँ सीख देत भये बोले-कि भइया अपनी सुसराल निहुर-लचक कें नहीं जानें पड़त है। तौ कैसों जानें पड़त हैं और जो पिटाई कि घटना आज हो गई ऊँ के लाने कहत जाओ कि "जैसो आज भओ ऐसो कभऊँ न होवै।" भोला किसानन की सीख मानकें ऐंसई कहत भओ आगे ससुराल तरफ बढ़न लगो और गैल भर कहत गओ कि जैसों आज भओं, बैसों कभऊँ न हौबे।

रास्ते में एक राजा प्रताप सिंह को गाँव पड़त तो, ऊ राजा प्रताप सिंह के बहुत दिनन में बड़ी मन्नतन में एक राजकुँवर भओं तो। राजा प्रताप सिंह के गाँव में बड़ी धूम-धाम से राजकुँवर को चौक हो रओ तौ सभी नगरवासी खुसी मना रये ते और बधाई गीत गा रयेते। बेई समय पै भोला जो कहत भओ

निकर रओ तो, कै जैसो आज भओ, वैसो कबऊँ न होवे। जा सुनकै राजा प्रताप सिंह के दरबारन में ऊ भोला खाँ पकड़ के राजा प्रताप सिंह के सामने पेश कर दओ। राजा ने देखों कि ईनै न तो हमें पिरनाम करो और झुको। और भोला की जा बात सुनकें कि जो आज भओं ऐसौ कबऊँ न होवे, सुनकै राजा आग बबूला हो गये और दस कोड़ा लगावे को फरमान दे दओ, फिर राजा ने भोला से पूँछी-काये जो बताओ तुमने न तो हमें प्रणाम करो और नाहिं हमारे सामने झुके आव। तुम जौ काये कै रये कि जैसो आज भओ, ऐंसौ कबऊँ न होवैं। भोला ने कई महाराज! हमाई कौनऊँ गलती नइयाँ। हम तो अपने घर से अपनी ससुराल जा रयेते, तौ हमाई मताई-बाप ने कईती कि बेटा! घर से बाहर निहुर लचक कै जारओतौ, पीछे के गाँव के किसानन ने समझी की मैं चोर आओं तो उनने मोय पकड़ कैं मोई पिटाई कर दई और बाद में अपुन ने निहरें-लचकें चलवे की बात बताई तौ उननें कई की अरें। जो तौ गलत हो गओ। अब ऐंसौ करो कै एसौ कहत भये जाओ के जैसो आज भओ, ऐससा कभऊँ न होबै। सो महाराज अपुन ऐंसई बोलत (कहत) भओं जा रओतों, तुम्हारे दरबारन ने मोय पकड़ कैं, अपुन के पास पेश कर दओं। हमाई कोनऊ गलती नइयाँ। महाराज ने भोला की सारी बात सुनके कई-हमसें गलती हो गई जो तुम्हें दस कोड़े मारवे को आदेश बिना सोचें समझें दै दओं। अब जो भओ सो भओ। अब ऐंसौ करौ कि ऐसौ कहत भये जाओं कि ''जैसो आज भओ वैसौ रोजऊँ होवें।'' राजा को हुकुम पा कें भोला अपनी ससुराल के लानें आँगे चलो और रास्ते भर कहत गओं ''जैसों आज भऔ, वैसौं रोजऊ होवैं।''

ससुराल के रास्ते में आँगे एक गाँव अमीरन पुरवा बड़े सेठ को पड़ रओतो। बड़े सेठ कें एकई लड़का हतो। वह भर जुवानी में अकाल मौत के मुँह में समा गओं। पूरों गाँव सेठ के लड़का के गम में गमगीन हतों। तभई भोला कहत भओं ऊँ गाँव से निकरो- ''जैसों आज भओ, वैसौ रोजऊँ होवैं।'' इतनी सुनतई ऊ गाँव बारे और सेठ के लोगन नें ऊ भोला हाँ पकड़ के इतनौ मारो कि ऊहाँ नानी याद आ गई। सेठ के लोगन नें भोला सें पूँछों- कायेंरे तोखाँ तनकऊँ सरम नईं लगत की सेठ के एकई पूत हतो बौ भी भर जुवानी में खतम हो गओं और तुम हों कि ऐसा कहत भये जा रये, ''जैसो आज भऔ, वैसो रोजऊ होवै।'' भइया हरो मैं काय करों? राजा प्रताप सिंह जू के गाँव सें निकरो तौ मैं पहले कात हतो-''जैसो आज भओं वैसों कभऊ न होबै।'' राजा प्रताप सिंह जू नें मोए दस कोड़न को दण्ड दओ, फिर राजा जू नें कई - ''ऐसौं काउत भये जइयौ- जैसौं आज भओं बैसई रोजऊ होवै'' मैं राजा प्रताप सिंह जू कौ आज्ञा कौ पालन करत भये, इतै से निकरों सो तुमाये लोगन ने मोए मारो ओर बोले- काएरे ऐसौं काए कह रये कि जैसौं आज भऔ, बैसई रोजऊँ होवैं। भोला बोलों। सेठ जी को बात समझ में आ गई कि भोला कौ कोनऊँ दोष नइयाँ। भोला को छोड़ के सेठ जी कओं-''सुनो अब आगे ससुराल जात भये जा बात ध्यान से सुनो-जैसों मौका रास्ते में पढ़े वैसों करियों, नई तौ तुमाई ऐंसई पिटाई होत रहै।''

कछू दूर चल कै रास्ता मैं भोला हाँ थकान लगी तौ एक पेड़ के छाँव में अपनों चद्दर बिछा कैं आराम करन लगो। भोला के अगल-बगल कछू पाँच-छै; गधा चर रये हते। भोला ने सोची कऊँ ये गधा परे में मोय खोंद न देवैं तो ऊ ने एक फूटे घर में गधन हाँ बेड़ के छेड़ी लगा दओ। और आराम करन लगों। कछू देर आराम करकै भोला ने अपनी ससुराल की गैलधरी। ससुराल के पहुँचतई ससुराल के घर के पीछे भोला हाँ सांझ हो गई। ऊँखाँ अपनी मताई की सीख याद आ गई- ''जहाँ रात हो जावै, उतई रूक जइऔ बस!'' भोला ने अपनो चद्दर निकालों और उतई ससुराल के घर के पीछे बिछा कै पौंढ़ गओं। ससुराल में लाला (भोला) के आवन की तैयारी हो रइती उनके स्वागत हाँ बरा बन रयेते। पहलो बरा बनाउतन में बिगड़ गओ। बिटियाँ बोली-मताई बरा बिगड़ गओं। मिटा कै दूसरों बड़ा बना लो-मताई ने कई। घर के भीतर की सब बातें, उनको दामाद (भोला) सुन रओतो। कायसे पहले के मकान कच्चे (मिट्टी) रात ते। भुनसारौं होतई भोला अपनी ससुराल जा धमको। सास ने पूँछी-अरे लाला अपुन की आबाई कब भई? जब पहलो बरा बिगड़ गओं तो, तबई आवाई हो गई ती, भोला ने अपनी सास जू से कई। सास ने मन में सोची कि लाला की आबाई तो अवई भई, पर देखौं तौ ने कल सांझ की बात कैसे जानत, हो न हो लाला ज्योतिष में भौतऊँ जानत। ज्योतिष की जा बात गाँव भर में बिजली-सी दौड़ गई। कोरी के दामाद(भोला) की बात सुनकै एक गहुआ गधेरों आओं। ऊनै कोरी के दामाद से कई-लाला जू मोरे गधा कल रात सें घर नई लौटे में सबरी जगह ढूँढ आओ, पर मोय गधा नईं मिले। अगर अपुन जानत हो तौ बताय, मोरे गधा कहाँ गये हुइ हैं ? तुमाये कितने गधा नई आये। कोरी के दामाद ने ऊ गहुआ नाम के गधेरे से पूँछों। हुजूर पाँच-छै गधा नई आये। गधेरा ने जबाब दओ। मैं गरीब गधेरों आओं, अगर गधन की जानाई हो

जावै तो हुजूर अच्छो राय आपका मैं परजन आओं आपकौं जस गाहों। गधेरे नें विनती करी। तुमाये गधा ई गाँव के पश्चिम दिशा में इतै से पाँच कोस में एक पेड़ के पास फूटे घर में बंद हैं, जा अपने गधा लै आओ। ऐसौ कोरी के दामाद ने कई। गधेरें दामाद की बताई ठौर पै गओं। गधेरे हाँ ऊके गधा मिल गये। गधेरे ने सोची कि अरे! कोरी के दामाद बहुतई जानत हैं, देखौ तो उननें ऐसौ बता दओं जैसें यौ दामाद जू नै ही गधन खां ऊ छेंड़ा में बंद कर दओं होवै। गधा मिलने के बाद कोरी के दामाद की बात ऊगाँव क बाहर भी आग सी फैल गल गई कि कोरी कौ दामाद भउतई जानत है।

कोरी के दामाद की सोहरत उतै के राजा झुन-झुन ने सुनी। काये से उतै के राजा की बिटिया (राजकुमारी) कौ नौलखा हार कऊँ हिरा गओ तो जो मिल न रओं तो। राजा झुन-झुन बहुत परेसान हते। राजा ने कोरी के दामाद हाँ नौलखा हार जानने कै लाने राजमहल में बुला के कई,-दामाद जू हमाई लाड़री मोड़ी को नौलखा हार कऊँ हिरा गओ या चोरी चलो गओ? जान के बताओं तो हम तुम्हें एक हजार स्वर्ण मुद्रायें दै हैं, नई तो तुमाओ सर कलम कर दे हैं। जा बात जानवे के लाने हम तुमै तीन दिन को मोहलत देत हैं। राजा झुन-झुन कौ ऐसो हुकुम सुन कै कोरी के दामाद हाँ नींद न आरई हती। काये से वे कछू जानत सोई हते, जो नौलखा हार बता देते। उनकी नींद रफू चक्कर हो गई हती। काये से अब भुनसारे उन्हें नौलखा हार के बारे में कछू पता नई पाउनै सौ उनकी घिचिया काढ़ी जानें। जेई सोच-सोच के कोरी के दामाद हाँ नींद नई आ रही ती- सो वे चिल्ला-चिल्ला के कैय रयेते ''आजा मोरी निदिंया, कल सुबह कटे तोरी घिचियाँ।''

निंदिया नाम की बई मुहल्ला में एक औरत हती जीने नौलखा हार को चुराओं हतो। सौ वा रात में भोला ''कोरी के दामाद'' के पास गई, और बोली-''लल्ला जू तुमाये पैर छूअत हौं, हमारी घिचिया कटनें से बचा लो, आप हमारी जान बचा सकत हौ, नई तौ राजा झुन-झुन हमारी घिचिया भुनसारे काट ले हैं।'' वो हार कहाँ हैं? जो हमारी जानकारी हमें दे दो, तो तुम्हारी घिचिया कटवे से मैं बचा लैहों। ऐसो भोला ने कई। बा हार तालाब के मंदिर के पास बड़े पत्थर के नीचे रख आई हों, सो अपुन जाके राजा हाँ बता कै हमारी घिचिया कटवे से बचा लो। निंदिया नाम की महिला ने कई।

भुनसारौ होतई राजा झुन-झुन जू के मंत्री कोरी के दामाद के घर आ धमके और बोले,- ''चलो राजा साहब ने तुम्हें दरबार में बुलाओ है। नौलखा हार की जानकारी ने मिलवै पर तुम्हें आज मृत्युदंड दयो जाने है। भोला बड़े इतमिनान से मंत्रियन के साथ राज भवन चले गये। राजभवन में राजा ने भोला हाँ बड़े सम्मान से आसन पे बैठाओं'' और बोले-''काय तुमने नौलखा हार के बारे में कछू जानकारी लई।'' हाँ महाराजा नौलखा हार के बारे में मैंने आज रात भर सोचो और गुनत रहो। ई नौलखा हार के मारे मोय रात भर नींद नई आई। भोला ने जवाब दओ। तौ फिर जल्द बताऊ कि नौलखा हार कहाँ गओ? राजा साहब को हुक्म पाके भोला ने बताई कि- नौलखा हार कौनऊँ चोर चुरा कै तालाब के किनारे मंदिर के बड़े पत्थर के नीचे रख दओ-सो अपुन कौनऊँ हाँ भेजे के दिखा लो। राजा के दो मंत्रिन हाँ भोला के बताये ढोंका पै भेज दओ। कछू देर बाद वे मंत्री नौलखा हार राजा झुन-झुन के पास ले आये। राजा झुन-झुन की खुशी को ठिकानों न रओ। उनने कोरी के दामाद से कई, तुमनें नौलखा हार ढूँढ दओ, हम अपुन से खूबई खुश हो गये, सो तुम जो चाहौ आज हमसें माँग सकत हौ। कोरी के दामाद ने मनई मन सोची पैदल चलतन भैतऊँ परेसानी होत है सो काये ने एक घोड़ा राजा जू से माँग लेवें। कोरी के दामाद ने राजा से कई-आप हमें एक घोड़ा दै राखो। राजा जू ने कोरी के दामाद हाँ घुड़सार ले गये और बोले-''जो घोड़ा तुम्हें पसंद होवे सो लैलो।'' भोला ने सोची कोनऊ मरथैल घोड़ा देख ले जो आराम से हमाये काम आहैं मरथैल घोड़ा धीरे-धीरे चल हैं। अपुन है गिरवे को डर न रहैं। एसों सोच कै कोरी के दामाद ने ऊ घोड़ा के ऊपर हाथ रखो जो तीन पाँव से खड़ो हतो कि जों घोड़ा लंगड़ा है सो ई में चलतन गिर है न। वह तीन पाँव का घोड़ा राजा का अपनों घोड़ा हतो, जो अरब किस्म को हतो। बौ घोड़ा छूतई हवा से बात करत तो। राजा ने मनई में सोची कि जो कोरी को दामाद जितनों दक्षिणी विद्या को जानकार है, उतनई घोड़न की नस्ल के बारे में जानत है। देखौं! तो ईनें बई घोड़ा पै हाथ रख दओ जो हमाओं सबसे अच्छौ घोड़ा हतौ। फिर भी राजा ने अपने कैये के मुताबिक भोला हाँ। ऊ घोड़ा दे दओं।

भोला ऊ घोड़ा पै जैसई बैठों और लगाम अपने हाथ में लई, बैसई, ऊ घोड़ा हवा से बात करन लगो। कोरी के दामाद ने कभऊँ घोड़न की सवारी न करी हती, सो भोला घोड़ा की तेज रफ्तार से घबड़ा गओ और अगल-बगल के रूखन के

पकड़न लगो, ताकि वौ घोड़ा से उतर सके, लेकिन काहे हाँ, ऊ घोड़ा की रफ्तार इतनी तेज हती की जोनऊ रूख हाँ भोला पकड़त तो वेई रूख जड़ से उखड़ जात तो। ई सैं भोला औरई घबड़ा गओ। भोला जोर-जोर से चिल्लान लगो-''जहाँ गिरौं सो गुल-गुल होवै-जहाँ गिरौ सो....।'' घोड़ा ने सोची शायद हमारो मालिक (भोला) कह रओ कि गुल-गुल राजा से युद्ध करबे जाने हैं- सो ऊ घोड़ा गुल-गुल राजा के नगर की तरफ औरऊ तेजी से उड़न लगो। गुल-गुल राजा की फौज ने देखो कि एक जनै पेड़न हाँ टाँगे तेजी से उनई की तरफ आ रओं। इतनई में भोला गुल-गुल राजा की फौज के पास पहुँच गओ। फौज हाँ देखतई भोला डर गाओ कि जे तो मोय पकड़ कै मार डाल हैं। मारे डर के भोला के हाथ से पेड़ छूट गये, पेड़ गिरवे से गुल-गुल राजा घायल हो गये और गुल-गुल की फौज राजा हाँ घायल देख कै धर भगी। गुल-गुल राजा ने कोरी के दामाद के सामने घुटने टेक दये और उनकी दास्ता स्वीकार कर लई। गुल-गुल राजा के पराजय की खबर झुन-झुन राजा जू हाँ लगी और वे कोरी के दामाद को स्वागत करवे, गुल-गुल नगर की तरफ बढ़े। काये से गुल-गुल राजा के सामने झुन-झुन राजा जू कभऊँ नही जीत पाये। ऊ प्रतापी गुल-गुल राजा है। कोरी के दामाद ने बड़ी आसानी से चुटकी बजाउत जीत लओं। झुन-झुन राजा जू कोरी के दामाद हाँ अपने गाँव ले आये, और अपनी राजकुमारी कौ व्याव भोला से कर दओं। दहेज में राजा ने अपनों आधो राज्य भी कोरी के दामाद हाँ सौंप दओ।

''भगवान ने जैसी कोरी के दामाद की सुनी, वैसई ईश्वर सबई की सुनै''

टीप :- जो लेख बुजुर्गन के मुँह जवानी सुन कै लिखो गओ है ई में गाँवों में बोले जावै वाली बोली के शब्दन को प्राथमिकता दई गई है जिनके शब्दार्थ लिखे जा रये हैं।

शब्दार्थः- पुरखन-पूर्वज, नोनो-अच्छा, सांझ-गौधूली, बियारी-रात का भोजन, कौड़न-आग का ढेर, बारे-बच्चे, रैन-रात, बिलवावै-समय बिताने, अपुन-अपने, उनइ-उनको, राततो-रहता था, उतई-वहीं, खुदई-स्वयं, निहुर लचक के-सभ्यता के साथ, भोर हो तई-सवेरा होते ही, जुंडी-ज्वार, गैल-रास्ता, भुन्टा-ज्वार का फल, गैलभर-रास्ते भर, मन्नतन-मनौती से, फरमान-आदेश, दरवारन-द्वारपाल, भर जुवानी-भरी जवानी, सुनतई-सुनके, तोखा-तुमको, राजेऊ-रोज, खोंद न देवैं-कचर न देवे, पौढ़ गओ-लेट गया, अवान की-आने की, भुनसारो-सवेरा, भौतऊ-बहुत, परजन-कार्यकर्ता, छेड़ा-चोहद्दी, मोड़ी-लड़की, घिचिया-गला, निंदिया-नींद।

- हायर सेकेन्ड्री क्र. दो के पीछे
साकेत नगर छतरपुर (म.प्र.)

जी की तपन मिटानी

- डॉ. राजकुमार तिवारी ''सुमित्र''

एक झला पानी को वरसो,
जी की तपन मिटानी,
ऐसो जी हो रओ तौ सबको,
जैसें भुँजें भमूदर में,
बात बात में कहत रहे सब,
माँय जनि दो लूगर में,
अब जाकें जी में जी आओ,
(सो) तन की तपन मिटानी।
जैसे चले गलिन में फूहर,
बैसइ जा हवा चलत ती,

लटकोरी सी चनकट मारे,
ओ मारे उचट दुलत्ती,
अब टूटो गरमी को गिरमा,
सबरी तपन मिटानी।
पहलौटी सी खुसी उजागर,,
सब झूम झमक कें गावें,
नन्नी रस बुँदियन खों सब कोऊ,
चूमे चाटे दुलरावें,
ऐसो लगो खजानो मिल गओ,
तन मन तपन मिटानी।।

- सराफा जबलपुर

बुंदेली साहित्य : गद्य एवं पद्य की विकास धाराओं का क्रमिक विश्लेषण

– डॉ. दुर्गेश दीक्षित

डॉ.वासुदेव शरण अग्रवाल ने लिखा है ''लोक का अध्ययन बुद्धि का कौतूहल नहीं है। इसे बस एक और नया शास्त्र कहकर नहीं टाला जा सकता। लोक संपर्क के बिना अन्य शास्त्र सब अधूरे हैं। लोकामृत निबंद जिस शास्त्र में नहीं मिला, वह कितना ही पंडिताऊ हो निष्प्राण रहता है। जो ज्ञान लोक हित के लिए नहीं, वह अधूरा है। वह मानवी चिंतन का छूछा फल है। जो शास्त्र लोक के साथ नहीं जुड़ा, वह बुद्धि का छलावा है।'' बुंदेली लोक साहित्य की गद्य और पद्य की समस्त विधाऐं लोक कल्याण की भावनाओं से आपूरित हैं।

छटवीं शताब्दी से लेकर आज तक बुंदेली पद्य की धारा अविरल गति से प्रवाहित रही है; किन्तु बुंदेली गद्य लेखन का कार्य उन्नीसवीं शताब्दी से ही छुट-पुट रूप में हो पाया है। उसे विशुद्ध बुंदेली गद्य तो नहीं कहा जा सकता वह ब्रज पूर्वी और बुंदेली का ही मिलाजुला रूप है। सन् 1870 में कलकत्ता में फोर्ट विलियम कॉलेज की स्थापना हुई थी। कॉलेज में श्री लल्लूलाल जी हिन्दी के शिक्षक थे। कॉलेज के संस्थापक की प्रेरणा से लल्लूलाल जी ने गद्य लेखन का शुभारंभ किया था और उन्होंने श्रीमद् भागवत के दशम स्कंद के आधार पर 'प्रेम सागर' नाम के ग्रंथ की रचना की थी। ग्रंथ की भाषा ब्रज और बुंदेली का मिलाजुला रूप है। इनके पूर्व गोकुल नाथ, बिट्ठल नाथ ने चौरासी वैष्णव वार्त्ता और दो सौ बावन वैष्णव वार्त्ता और भक्त नाभा दास जी की भक्त माल आदि गद्य ग्रंथ विशेष प्रसिद्धि प्राप्त कर चुके थे। ये ग्रंथ ब्रज और बुंदेली गद्य के मिले जुले रूप थे।

बुंदेला राजाओं के दरवार में बुंदेली बोलबाल की भाषा थी और राजकाज के सारे काम बुंदेली में ही होते थे। राजकीय संदेश, आदेश और पत्राचार बुंदेली गद्य में ही होता था। महारानी लक्ष्मीबाई, महाराज मर्दन सिंह, बखतबली साह, लड़ई सरकार और महाराज छत्रसाल के सैकड़ों पत्र आज भी सुरक्षित हैं। इन्हें बुंदेली गद्य का प्रारंभिक रूप कहा जा सकता है। डॉ.भगवानदास गुप्त नेअपने ग्रंथ ''महाराजा छत्रसाल में'' महाराज छत्रसाल के अनेक बुंदेली पत्रों को उदधृत किया है। इसी तारतम्य में बुंदेली के यशस्वी कवि श्री कैलाश मड़वैया ने अपनी जन्मभूमि के ऋण से उऋण होने हेतु सन् 1977 में ''बुंदेलखंड का विस्मृत वैभव'' इतिहास ग्रंथ लिखकर अनेक विस्मृत तथ्यों को उजागर किया था। ग्रंथ में महारानी लक्ष्मीबाई और महाराज मर्दन सिंह के बुंदेली पात्रों को सम्मिलित किया गया है, जिनमें बुंदली गद्य का प्रारंभिक रूप कहा जा सकता है। विस्तार भय से सारे पत्रों को प्रस्तुत नहीं किया जा सकता। कुछ पत्रों के उदाहरण प्रस्तुत हैं। ग्रंथ में ओरछा की रानी लडई सरकार का मर्दन सिंह जू के नाम का एक पत्र प्राप्त हुआ है।

''महाराजाधिराज श्री महाराज श्री राजा मर्दन सिंह जू बहादूर जू देव एते श्री रानी श्री महारानी श्री रानी लडई सरकार वा जू देव के बांचने आपर अपने समाचार भले चाही जे। इहाँ के समाचार भले हैं। आपर पाती अपनी आई, हकीकत वाकिफ भये, खबर पाये। लिखी सो श्री जू कृपा सो रहा। इहाँ खुशी आनंद सो है, अपने खुशी रहा इसकी खबर पाई। ज्यादा खुशी हासिल भई। जुबानी हकीकत लाला किशोर सिंह ने जाहिर करी है। आप जेठे हैं याकि सलाह विचार पुखता होय। पाती समाचार अपने खुशी आनंद कौ हमेशा रहबी। तिथि आसुन वदी 3 संवत 1914 बि.।'' इस पत्र में लोक प्रचलित उर्दु शब्दावली का प्रयोग किया गया है। महारानी लक्ष्मीबाई के पात्रों की भाषा विशुद्ध बुंदेली है। महारानी जी के सावन सुदी 14 सोमवार संवत 1914 को कालपी से महाराज मर्दन सिंह के समीप एक पत्र भेजा था। जो यहाँ प्रस्तुत किया जा रहा है।

''श्री महाराजधिराज श्री महाराजा श्री राजा मर्दन सिंह बहादुर जू देव ऐते श्री महारानी लक्ष्मीबाई जू देवि के बाचने आंपर उहाँ के समाचार भले चाहिजै, ईहा के समाचार भले है आपर अपुन की पाती आई। सो हाल मालूम भओ और अपुन ने श्री महाराज शाहगढ़ की पाती को हवालौ दओ सो मालूम भओ आपर इ हैं से लिखी कै आप सागर को कूच करें ऊहाँ हो कंपनी बीच में साहवन की है। अपको भारत बखेइत साहगढ वारे राजा को लिवाउत फौज खौ सीधे कूच करें। हम व तात्या टोपे बनाना साहव फौज की तैयारी में लगे आप सीधे नोहघाट पर सर ह्यूरोज की फौज कौ मारत बखेड़त कालपी कूच करे। उहाँ से हम आप सवजनें मिल कें ग्वालियर में अँगरेजन पर

धावा करें अब देर न भओ चाहिजें, देखत पाती समाचार देवे में आबे।''

ये पत्राचार सन् 1857 के स्वतंत्रता संग्राम के अवसर पर हुआ था। इन पत्रों को बुन्देली गद्य की झलक दिखाई दे रही है। यह क्रम अनेक वर्षो तक संचालित रहा। कुछ उत्साही बुंदेली प्रेमियों के मन में बुंदेली गद्य लेखन की ललक जागृत हुइ। श्री भगवान सिंह गौड़ ओरछा ने सन् 1956 में ''अथाई की बातें'' नाम का एक लघु बुंदेली ग्रंथ लिखा जिसमें समसामायिक प्रसंगों की चर्चा की गई। गाँव के किसी एक सार्वजनिक स्थल को अथाई, कहा जाता है। वहाँ पर बैठ कर लोग विविध विषयों पर चर्चा करते हुए मनोरंजन करते हैं। कुछ इसी तरह के सामान्य प्रसंगों को लेकर इस ग्रंथ की रचना की गई है। इसमें बुंदेली गद्य का निखरा हुआ रूप दिखाई दे रहा है। जरा देखिये ग्रंथ के एक अंश को :-

''उमराव अथाई पै आकै बोले कै दायजू मोय परों गौड़ बाबा नौ पुन्न कन्नें, बई में चार हेती नातेदारन खो ज्यावनें ख्वावनें पै मनुवा नाऊ अब जिवैपन की जूठीं पातरें नई उठावन कउत, सो काहोय में जिवैपन सो कैसे कैहों कै जेके अपनी अपनी पातरे फेंकत जाव। लक्ष्वरदार बोले सात पैरी सैंतौ नाऊ जूठी पातरें उठाकें फेंकत आये, अबका बात हो गई जो पातरै नई फेंकन कऊत कछू लेवै देबै की बात तौ नैया'' इसमें विराम चिन्हों की वृष्टि और वाक्य रचना की दृष्टि से थोड़े बहुत दोष हो सकते हैं। किन्तु बुंदेली गद्य का एक व्यवस्थित रूप है। यह क्रम बहुत दिन तक नहीं चल सका। बुंदेली पद्य लेखन तो चलता रहा, किन्तु गद्य लेखन पर अधिक ध्यान नहीं दिया गया। पं.शिवसहाय चतुर्वेदी देवरी (सागर) ने बुंदेली में ''जान पाँड़े'' नाम की लोक कथा लिखी जो बहुचर्चित हुई। उनके पापढ़ नगरी, गौने की विदा और बुंदेलखण्ड की ग्राम कहानियों नाम से तीन कथा संकलन प्रकाशित हुए। संपादकाचार्य पं. बनारसी दास जी चतुर्वेदी के संपादकत्व में प्रकाशित ''मधुकर'' पाक्षिक पत्रिका के अंकों में उनकी बुंदेली कहानियाँ प्रकाशित होती रहीं जो बहुत लोकप्रिय रही।

बुंदेली मंचों के माध्यम से श्री कैलाश मड़वैया बहुत ख्याति अर्जित कर चुके थे। वे समय समय पर बुंदेली कवि सम्मेलन आयोजित करके सारे देश में बुंदेली की अलख जगाते रहे। नवोदित बुंदेली कवियों को प्रोत्साहित करने के लिए बुंदेली काव्य संकलन प्रकाशित करते रहे जिसके कारण बुंदेली कवियों की बाढ़ सी आ गई। उन्होंने म.प्र. की राजधानी भोपाल नगर में रहकर ''अखिल भारतीय'' बुंदेलखंड साहित्य एवं संस्कृति परिषद की स्थापना की और म.प्र., उ.प्र. के लगभग 52 जिलों में जिला इकाइयों स्थापित की। प्रतिवर्ष मई-जून में छत्रसाल जयंती के आयोजन के माध्यम से देश भर के बुंदेली प्रेमी एकत्रित होकर बुंदेली गद्य और पद्य पर विचार-मंथन होने लगा। जगनिक, छत्रसाल और बुंदेल श्री नाम के अलंकर्णों से श्रेष्ठ कृतिकारों को सम्मानित किया जाने लगा किन्तु बुंदेली गद्य लेखन की चर्चा हुई और समस्त उत्साही साहित्यकारों के सहयोग से सन् 1991 में ''बाके बोल बुंदेली के'' नामक बुंदेली गद्य संकलन श्री कैलाश मड़वैया के संपादकत्व में प्रकाशित हुआ जिसकी समस्त हिन्दी संसार में भूरि भूरि प्रशंसा की गई। जिस प्रकार श्री भारतेन्दु हरिश्चंद को गद्य का जनक कहा जाता है उसी प्रकार यदि कैलाश मड़वैया को बुंदेली गद्य का जनक कहा जाय तो कोई अतिशयोक्ति नहीं होगी उनका उत्साह बढ़ता ही गया और सन् 2008 में ''मीठे बोल बुंदेली के'' नामक बुंदेली गद्य का दूसरा संकलन प्रकाशित हुआ। ये दोनों संकलन बुंदेली गद्य के क्षेत्र में मील के पत्थर सिद्ध होगा। इन्हें देखकर तमाम बुंदेली प्रेमियों की आँखें खुलीं और लोग बुंदेली की विभिन्न गद्य की विधाओं के लेखन कार्य में जुट गए।

बुंदेली पीठ वि.वि. सागर के अध्यक्ष डॉ. बलभद्र तिवारी का ''आधीरात के मल्हार'' नामक बुंदेली कथाओं का संकलन प्रकाशित हुआ। डॉ. शरद सिंह सागर का ''राख तरे के अँगरा'' डॉ. रामनारायण शर्मा झाँसी का ''बुंदेली की कहानियाँ'' डॉ. बहादुर सिंह परमार का ''छतरपुर जिले की लोककथाएँ'' और इन पंक्तियों के लेखक के ''प्रेम कौ प्रभाव, अपनौ अपनौ भाग'' और बुंदेलखंड के पर्वों, व्रतों की लोक कथाएँ नाम के तीन संकलन प्रकाशित हुये। अनेक बुंदेलखंड के साहित्यकार इस क्षेत्र में अग्रसर रहे हैं। जिनके सतत प्रयत्न से माँ बुन्देली के भण्डार में वृद्धि होती रहेगी।

इस क्षेत्र में बुंदेलखंड के आकाशवाणी केन्द्रों और विश्वविद्यालयों का कार्य विशेष स्तुत्य है। आकाशवाणी केन्द्रों के ग्राम सभा, चौपाल और धरनी कार्यक्रमों के अन्तर्गत ओपेरा, नाटक, रूपक, एकांकी, बुंदेली कहानियाँ और बुंदेली वार्ताएं समय-समय पर प्रसारित होती रहती है। बुंदेली लोकगीतों के सरस प्रसारण से तो जन साधारण के मन में बुंदेली साहित्य और संस्कृति के प्रति आकर्षण उत्पन्न हो रहा है। विश्वविद्यालयों के हिन्दी पाठ्यक्रम में बुंदेली का समावेश किया गया है। क्षेत्र

के बुंदेली साहित्यकारों पर शोध प्रबंध लिखे जा रहे हैं। आज बुंदेली साहित्य की विविध विधाओं पर शोध प्रबंध लिखे जा रहे हैं। आज बुंदेली साहित्य की, विविध विधाओं पर कार्य करने की साहित्यकारों में होड़ सी लगी है।

चंदेल काल को बुंदेली के साहित्य, संस्कृति और कला का गौरव काल कहा जाता है। इस काल में साहित्य संस्कृति और कला पूर्ण उत्कर्ष पर रही है। महोबा नरेश परमदिदेव के राज कवि जगनिक ने (1165 ई. से 1203 ई.) ''आल्हा खण्ड'' की रचना की थी। इस काल में 23 खण्ड और 50 युद्धों का वर्णन है। इसे बुंदेली का प्रथम ग्रंथ माना जाता है। आल्हा वीरत्व की मनोरम गाथा है। जिसमें उत्साह, गौरव और मर्यादा की सुंदर अभिव्यक्ति हुई है। यह प्रेम, सौहार्द, एकात्म और सद्‌भावना का संदेश देता है। यह साम्प्रदायी सौहार्द का अनुपम उदाहरण है। आल्हा की सम्प्रेपणीयता का रहस्य इसकी जनभाषा बुंदेली में निहित है। यह बुंदेली की वनाफरी उपवोली का प्रमुख ग्रंथ है आल्हा खंड की कुछ पंक्तियाँ प्रस्तुत हैं :-

चंदी पाल की मल्हना रानी, जगनेरी में पहुँची जाय।
गओ हरकारा जगनायक पै, ज़गनिक सों कही सुनाया॥
मल्हना आई देखा जेपै, जल्दी चलौ हमारे साथ।
जनिक आये दौर द्वार पै, मल्हना छाती लियो लगाय॥

जगनिक साजै, घोड़ा साजो, आरति करी मल्हन के नार।
लाज काज सब हाथ तुम्हारे, नेइया खेय लगइयो पार॥
फोदि बेछड़ा पर चढ़ बैठे, मनिया देव के चरण मनाय।
सबै देवतन को सुमिरनकर, जगनिक कूँच कियो करवाय॥
बरह बरस लौ कूकुर जीबै, उर तेरा लौ जियै सियार।
बरिस अठारह क्षत्री जीबै, आगे जीवन को धिक्कार॥

ये बुंदेली पद्य के प्रथम ग्रंथ का लावण्य, काव्य सौंदर्य और भाषा सौष्ठव कुछ विद्वान, जिनमें हरिहर निवास द्विवेदी ने मोयाचल गढ़ के तोमर राजा डूगेन्द्र सिंह के राज कवि विष्णुदास के महाभारत महाकाव्य को हिन्दी और बुंदेली का प्रथम महाकाव्य माना है। जिसकी रचना 14 अक्टूबर 1435 ई. में हुई थी। रचनाक्रम की दृष्टि से यह ग्रंथ आल्हा खण्ड के 300 वर्ष बाद लिखा गया था। इस कारण से इसे बुंदेली साहित्य के इतिहास की दृष्टि से आल्हा खंड को शौर्यकाल के अन्तर्गत रखा जा सकता है। जिसका समय 10 वीं सदी से 14 सदी तक माना जा सकता है। प्राय: आल्हा का गायन पावस ऋतु में ही किया जाता है। एक दोहे में इस बातकी पुष्टि की गई है:-

भरी दुपहरी सरवन गाइये, सोरठ गाइये आधी रात।
आल्हा पवाड़ा वादिन गाइये, जा दिन झड़ी लगे दिनरात॥

14 वीं सदी से 16 वीं सदी तक भक्ति काल माना गया है। जिसके अन्तर्गत महाभारत और रामायण कथा के प्रणेता विष्णुदास, हरिराम व्यास, बलभद्र मिश्र, रसखान और रहीम आदि भक्त कवियों को स्थान दिया जाता है। कविवर रहीम के मन में बुंदेली संस्कृति के प्रति अटूट श्रद्धा थी। उन्होंने एक दोहे में श्रद्धा भाव व्यक्त किया है:-

चित्रकूट में रम रहे, रहिमन अवध नरेश।
जा पर विपदा परत है, सो आवत इहि देश॥

श्री हरिराम जी व्यास सं. 1567 में ओरछा में अवतरित हुए थे। वे तत्कालीन महाराज मधुकर शाह के दीक्षा गुरु थे। वे भगवान कृष्ण के परम भक्त थे और अपने जीवन का अधिकांश समय वृंदावन में ही व्यतीत किया था। उन्होंने ज्ञान, वैराग्य और भक्ति पर आधारित अनेक साखियों और पदों की रचना की थी। उन्होंने राग माला व्यास वाणी, व्यास सिद्धांत, व्यास के पद और रास पंचाध्यायी नाम के ग्रंथ लिखे थे। उनकी रचनाओं में कोमल कान्त पदावली में माधुरी उपासना और श्रृंगार भाव की अभिव्यक्ति हुई है। उन्होंने बुंदेली मुहावरों का सुंदर प्रयोग किया है। जरा, कुछ उदाहरण देखिये :-

''और सकल साधन नीरस, यारस विन सव गुर माटी।
अलकनि ओट पलक नहिं नैनन, हिरनी सी विड़री॥
बातजि खैचत खाल वार की, लीपत भुस पर भीति।
इहिं रस नवधा भक्ति उबीठी, रस भागौत कथा की॥''

17 वीं और 18 वीं सदी तक श्रृंगार और भक्ति काल सुनिश्चित किया गया है। इस समय के बुंदेली कवियों की रचनाओं में श्रृंगार और भक्ति का मिला जुला रूप दिखाई देता है। जिनमें केशवदास, विहारी मधुकर शाह और पद्‌माकर का नाम विशेप उल्लेखनीय है। ओरछा की पुण्य नगरी में अवतरित आचार्य केशवदास जी को रीतिकाल का प्रथमाचार्य माना जाता है। उन्होंने राम चंद्रिका, रतन बावनी, कवि प्रिया, रसिक प्रिया, जहांगीर जस चंद्रिका, वीरसिंह देव चरित, विज्ञान गीता नाम के अनेक ग्रंथ लिखे थे। जिनमें बुंदेली साहित्य और संस्कृति का प्रभाव दिखाई देता है। एक रसिक प्रिया का छंद प्रस्तुत है :-

केसव राइ बुलावत है चित चारू बिलोचन नीचे करौ जू।
कालि करे वर एक विसो परों वीस विसे व्रत ते न टरौ जू॥
आगि लगै तेरे कालिके सीस परों पर जाश्वाजागि परौ जू।

आजु मिलों तौ मिलो ब्रज राजहिं नाहिं तौ नीके है राज करौ जू॥

रीतिकाल के सर्वश्रेष्ठ कवि विहारी का जन्म बुंदेलखण्ड में हुआ था। उनकी ससुराल मथुरा में थी। वे राजा जय सिंह के दरबारी कवित थे। एक दोहे से उनके जन्म और ब्रज निवास की ध्वनि निकलती है :-

जनम ग्वालियर जानियो, खंड बुंदेले बाल।
तरूनाई आई सकल, मथुरा बसि ससुराल॥

उनके एक दोहे से प्रसन्न होकर राजा जयसिंह ने एक दोहे पर एक स्वर्ण मुद्रा देने की घोषणा की थी। उनका वह प्रसिद्ध दोहा था :-

नहिं पराग नहिं मधुर मधु, नहिं विकास एहि काल।
अली कली ही सो बिंध्यों आंगे कौन हबाल॥

उनकी सतसई में बुंदेली शब्दों का इतना प्राचुर्य है कि विद्वानों को उसे अन्य भाषा का बताने में संकोच होता है।

रससिद्ध कवि पद्माकर :- इनका मूल नाम प्यारेलाल था। इनके पिता श्री मोहनलाल भट्ट सागर के शासक श्री रघुनाथराव के आश्रित थे। उनका जन्म संवत 1810 वि. में सागर नगर में हुआ था कुछ विद्वान उनका जन्म बॉदा में मानते हैं। वे हिम्मत बहादुर और प्रतापशाह, अर्जुनसिंह के दरबारी कवि रहे हैं। उन्होंने प्रतापशाह विरूदावली, हिम्मत बहादुर विरूदावली, अर्जुन राय सा के अतिरिक्त ईश्वर पचीसी, राम रासायन और गंगा लहरी नाम के ग्रंथ लिखे थे। वे बुंदेली की कोमल कान्त पदावली में श्रृंगार, वीर एवं भक्ति भाव की कविता लिखने के लिए प्रसिद्ध रहे हैं। पद्माकर जी का एक सुप्रसिद्ध छंद प्रस्तुत है:-

फागु की भीर अभीरन में, गहि गोविंद लै गई भीतर गोरी।
भाइ करी मन की पद्माकर, ऊपर नाइ अबीर की झोरी॥
छीनि पितंबर कम्मर ते, सुविदा दई मीड़ि कपोलन रोरी।
नैन नचाय कही मुसकाय लला फिर आइयौ खेलन होरी॥

नैन नचाय में कितनी सुंदर व्यंजना है। इस छंद से बुंदेली का माधुर्य छलक रहा है। उनकी भापा भावों के अनुरूप अपना स्वरूप बदलती रहती थी।

लोक कवि ईसुरी :- बुंदेली के कवियों में लोक कवि ईसुरी का प्रमुख स्थान है। वे बुंदेली के फाग भयी गंगाधर, ईसरी और ख्यालीराम के सर्वश्रेष्ठ कवि थे। उनमें आशु कवित्व की शक्ति विद्यमान थी। वे चौकड़िया सम्राट थे, ''यदि उन्हें बुंदेली का मानक कवि कहा जाय तो अतिशयोक्ति नहीं होगी। ईसुरी का रचनाकल उन्नीसवीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध से बीसवी शताब्दी के प्रथम दशक तक माना जाता है।'' ईसुरी का जन्म मऊरानीपुर के समीप मेढकी ग्राम में हुआ था। धौर्रा, बगौरा, धबार उनकी कर्मस्थली रही है। उन्होंने ''रजऊ'' को आराध्य मानकर सैकड़ों फागें लिख डाली थीं। उन्होंने स्वयं ही लिखा है:-

''नित नई फाग रचें ईसुरी, गाबें धीरे पण्डा''

उनके मन में ग्राम बगौरा के प्रति विशेष आकर्पण था। उन्होंने एक फाग में लिखा था :-

''गंगा जू लौ मरे ईसुरी, दाग बगौरा दइयौ।''

यदि उन्होंने बुंदेल खण्ड का पर्याय कहा जाय तो कोई अतिशयोक्ति नहीं होगी। विस्तार भय के कारण उन की विविध रसो की फागों के उदाहरण तो नहीं दिए जा सकते उनकी एक फाग का उदाहरण प्रस्तुत है :-

''मोरी खबर सारदा लइयो, कंठ विराजी रइयो।
में अपढ़ा अच्छर ना जानौं, भूली कड़ी मिलइयो॥
तोरे डेरा हिंगलाज में, इयॉ लो फेरा दइयो।
'ईसुर' कहत सत्रु के बाने, छीन कै हमखौ दइयो॥''

राष्ट्रकवि घासीराम व्यास :- आपका जन्म 5 सितंबर 1903 को मऊरानीपुर में हुआ था। उनके पिता का नाम मदनमोहन व्यास था। वे स्वतंत्रता संग्राम सैनानी थे उनके ग्रंथों में सरसी। किसान बुंदेली खण्ड चंदमा शीर्षक रचनाऐं बहुचर्चित हैं। जिनमें अतीत का गौरव झलकता है। झाँसी की रानी कविता का उदाहरण प्रस्तुत है:-

''बातन में कलकत्ता लयो जिन,
धातन में पटना छपरे की।
लातन लूट लाहौर लई,
मदरास लई मदरास खरे की॥
'व्यास' कहै जिन बम्बई सूरत,
औध लई बिन कौध करे की।
हॉसी नही यह सॉसी कही,
झॉसी भई उनें फॉसी गरे की॥''

ये हैं बुंदेली भाषा का अविरल प्रवाह जो व्यास जी की कविता में सदैव प्रवाहित होता रहा है।

बुंदेली के कुछ प्रमुख आधुनिक कवि और उनके काव्य ग्रंथ :-

राम चरण हयारण मित्र झाँसी की भेंट, सरसी साधना लौलैया, संस्कृति और साहित्य आदि प्रमुख ग्रंथ हैं। श्यामसुंदर बादल का फाग साहित्य लक्ष्मी प्रसाद शुक्ल वत्स, का चैतुवा,

लोगड़िया, और नरइयाँ, भैयालाल व्यास का ''हरदौल चरित'' ओम प्रकाश सक्सेना 'प्रकाश' की चौकियों के विविध संकलन अवधेश का शर्मणा महाकाव्य, संतोष सिंह बुंदेला के गाँव की संध्या, रमटेरा की तान मिठौवा, पनिहारिन, फागुन के मेह, माधव शुक्ल मनोज के चले आइयो हो, नीके वसंती आ गये निदो, हो गई धूरा गुलाल पिया, झर गये फूल कनेरारे, हाथ उठा चौकन्ना से. श्री शिवनंद मिश्र बुंदेला तुरकनने तिलीसी, झाँसी वाली रानी, गाड़ीवान, श्री कैलाश मडवैया का ''आँगन खिली बुंदेया, महाराज मर्दन सिंह महाकाव्य का'' पं. गुणसागर सत्यार्थी का रंग फुहारों, बुंदेली के नवगीत, प्रयोग वादी रचनाएँ, श्री अवधकिशोर जड़िया बुंदेली का श्रृंगार, राधा-कृष्ण छंद, बुंदेलखंड, झाँसी वाली रानी, डॉ. प्रेमलता नीलम का हरदौल, नजर भर हरौ, श्री रतिभान तिवारी 'कंज' का गाँव के गलयारे, बैदेही बन गमन, डॉ. दुर्गेश दीक्षित का सगुन की हरइया, बुन्देलखण्ड के अमर सपूत, नवल किशोर सोनी मायूस के सारे जू, पछी, मजूरा, आदि प्रमुख रचनाएँ हैं। आज भी अनेक नवोदित कवि नवीन बुंदेली रचनाएँ लिख लिखकर माँ बुंदेली का भण्डार भर रहे हैं। उनसे बुंदेलखण्ड को बहुत बड़ी आशा है।

- कुण्डेश्वर, टीकमगढ़ (म.प्र.)

दिन नीरे लगत बसन्तन के

– प्रेमनारायण पाठक 'अरूण'

(1)

दिन नीरे लगत बसन्तन के-दिन नीरे लगत बसन्तन के॥
अब ऋतुराजा दरशन के-दिन नीरे .... ॥
पीरे-पीरे पैरें बाने
जोड़ा सन्त महन्तन के-दिन नीरे........... ॥
बरन-बरन के रंग सुहाने
आये अन्तन-अन्तन के-दिन नीरे .... ॥
जाने माने भौत पुराने
लगवैं मीत चिरन्तन के-दिन नीरे .... ॥
भारी दुख हरकें, सुख देवैं
ऐसे वैद्य जड़न्तन के-दिन नीरे .... ॥
'अरूण' शीतके आये बुढ़ापे
करौ ध्यान मन चिन्तन के-दिन .... ॥

(2)

दिन पीरे-पीरे आन लगे-दिन पीरे-पीरे आन लगे॥
शीलत वान सिरान लगे-दिन पीरे-पीरे .... ॥
सरसों राई रंग उड़ेलें
आमन मौर दिखान लगे-दिन पीरे-पीरे .... ॥
कोयल बोलै अमरईया में
भ्रमर आन मंड़रान लगे-दिन पीरे-पीरे .... ॥
बरन-बरन के फूल फूल रयै
पके पात पतयान लगे-दिन पीरे-पीरे .... ॥
कामदेव घर-घर में घुसकें
खूब करन हैरान लगे-दिन पीरे-पीरे .... ॥
'अरूण' छाये ले जो परदेशै
लौट घरन खाँ जान लगे-दिन पीरे-पीरे .... ॥

(3)

रंग डारें नन्द के लालन पै-रंग डारें नन्द के लालन पै
फागुन मनाहौं गालन पै-रंग डारें .... ॥
पीताम्बर की चुनरी बनाहौ
बूंदा लगाहौं भालन पै-रंग डारें .... ॥
ओटक हो-हो चोट बचाहौं
पिचकारी की घालन पै-रंग डारें .... ॥
बृज बारन कौ जोर चलै ना
बृज बालन की चालन पै-रंग डारें .... ॥
ग्वाल बाल जो जाल विचारें
जाल डारहौं जालन पै-रंग डारे .... ॥
पकर 'अरूण' खाँ नाच नचाहौं
झाँझ मृदंग की लालन पै-रंग डारें .... ॥

- सहायक शिक्षक
सटई-जिला,
छतरपुर (म.प्र.)

नानकपुर के नकटा

– अश्विनी कुमार तिवारी

भौत दिना पैलऊं की बात है। नानकपुर गांव में एक माते हते। उनकौ नाव तो गटूं माते। वे भौतई भले मानुष हते। सब जनें उनें भारी जानत-मानत और भौतई चाऊत ते। काये के वे भौतऊ पर सुवारती हते। अर समाज के सब कामन में वे अगिंई रत ते। सो समाज में उनकी भारी धाक हती। जैंसई उनकी धाक हती बैंसई उनकी पोषाक हती। वे अच्छी लपेटा की घुटनयाऊ सपेत परदनियां और सपेतई रंग की अच्छी मिरजाई पैरत ते। संगे मूंड पै सपेत रंग कौ सुवापा बांदत ते। ऐई पोषाक के संगे-संगे उनकी ऊँची पूरी कद काठी, बड़ी-बड़ी भूरी-बिलरू आंखें अर है सो बड़ी-बड़ी सपेत मूंछे हतीं। सो ऐई हुलिया के संगे वे जब अपनी अथाई पै बैठ कें गुड़ाखू को हुक्का गुड़गुड़ायें सो ऐसें लगें जैसे कौनऊं बूडौ शेर गुर्रा रव होये। ऐई गुर्राट के संगै उनकैं मुलक्कान जायजात हती। गटूं माते कैं भारी सौनों-चांदी पइसा-डब्बल मौरें-सौरें टका कल्दार अर है सो भारी खेती बारी राबै। सो वे अर उनके लरका वारे खूब खायें अर मजे सें रायें।

उनकैं चार लरका हते। जिनके नाव ते हरजू, विरजू, सरजू अर दुरजू। गटूं माते के चारई लरका भारी हट्टे कट्टे अर खूबई तंदुरुस्त राबैं। जैंसई उनकी तंदुरुस्ती राय बैंसई उनके तन पै-बरदी राय। वे अच्छौ सपेत रंग कौ चूड़ीदार पजामा अर सपेतई रंग की कुरता पैरत ते। संगै उनकी मूंड पै सपेत रंग की सुवापी अर है सो कंदन पै लाल रंग की पिछौरिया भारी चमकत राय। ऐई चमक के संगे उनकी बड़ी-बड़ी लाल-पीरी आंखें राबैं। अर है सो संगै उनके गालन पे बड़ी-बड़ी गलमूछें ऐसें तर्रानी रायें जैसें कौनऊं जुवान शेर अपनी पूंछ को झौंरा तरयिं होये। ऐंसई तरटिदार मस्ती में मस्त गटूं माते के लरका हमेसूं ठलुवन के संगें रै कैं ठलवाई के कामन में समव बिताऊत रायें। ऐसें वे भौतऊ आलसी अर भारी बदमाश हो गये। काये के वे काम धाम तो कछू करें नैं अर है सो बदमाशी करकें दिन भर ठलुवन के संगे रै कें तासपत्ती खेलें संगे गांजी पियें। अर है सो वे अपुनी धुन में मस्त जब देखो ठलुवन के संगे मुस्टनडा से फिरत रायें। इसें गटूं माते के लरकन के कऊं ब्याव-काज नैं भये। अर है सो जब देखो जब ठलुवन के संगे जस के तस वे तो फिरतई राबैं। ऐंसई-ऐंसई होत करत भौत दिना हो गये। सो गटूं माते अपने लरकन की हालत देख कें चिंता में पर गये। ऐसें गटूं माते हते सो वे बूड़े तौ होई गये ते संगै उनें लरकन की चिंता नें आन गेरो। ईसें बुढ़ापे में वे कमजोर भये अर कमजोरी में बीमार हो गये। ऐसें गटूं माते हते सो बीमार होकें खटिया पै डर रये।

अब का भव कै उनको गौर-गियांसौ करबे वारौ कोऊ नैं राय। काये कै उनके लरका तौ खुदई की धुन में मस्त रायें। अर है सो मस्ती में मस्त रै कैं वे तौ ठलुवन के संगै कऊं तासपत्ती खेलत फिरें कऊं गांजौ पियत फिरें। ऐसें नैं तौ उनें अपनी फिकर राय। ने कछु घर की फिकर राय। और है सो न उने अपने बापई की फिकर राय। इसें गंटू माते हते सो बिना धरी धोरी से खटिया पै बीमार डरे रायें। सो कछू दिना बीमारी की हालत में खटिया पै डरें-डरें गटूं माते हते सो परलोक सिधार गये। फिर का भव के गटूं माते के परलोक सिधारबे के बाद उनकी पूरी जायजात अर है सो पूरी खेती बारी चौपट हो गई। काये कै गटूं माते के लरका तौ कछू करकैं जानतई नैं हते। सो बस वे तौ तासपत्ती अर गांजे की धुन में ठलुवन के संगै लगे-लगे सब खात-पियत रये। ऐसें जो कछू सोनों-चांदी पइसा-डब्बल मौरें-सौरें टका-कल्दार गटूं माते नें जोर तंगोर कै धरो तो सो बौ सब उनके लरकन नें मिटा डारो। अर है सो संगै उनने पूरी खेती बारी मिटा डारी। ऐसें जब उनकैं कछू नैं बचो सो वे खाबे पीबे खौं भैरा गये।

फिर का भव कै "भूखन मरता सबई करम करता।" सो गटूं माते के लरका भूखन के मारें हैरान-परेशान होकें गांव में चोरी-भड़याई कौ काम करन लगे। अर चोरी-भंड़याई करकैं वे अपुनौं पेट भरन लगे। ऐई के संगै चोरी भंड़याई के कामन में उनकौ नाव सौ खुल गव अर वै खूब जाहर से हो गये। ईसें गाँव के सबई जनें उनपै निगरानी सी करन लगे अर उनें उंगरयाऊन लगे। काये कै वे कऊं काऊ कौ ढोर-बछेरू गैर कें ले जाबें अर जाकें अंत काऊ खों बैंच आवें। अर है सो कऊं काऊ कौ ढोर-बछेरू गैर कैं ले जावैं अर जाकैं अंत काऊ खों बैंच आवैं। अर है सो कऊं काऊ के घर में घुसकैं बासन-भाड़े सौनों-चांदी पइसा-डब्बल जो कछू उनके हांतै लगै सो वे चोरी-भंड़याई करकैं लै जावैं। अर है सो ऐंसई ऐंसई वे अपुनौं गुजारौ करें। अर ऐंसई-ऐंसई होत-करत कैऊवन जांगां चोरी भंड़याई के कामन में रंगे हांतन पकरे गये। अर कैऊवन बेर

गांव वारन नें उनें समजा-बुजा कैं अर चेतावनी दै कैं भगा दव। मनों वे तोऊ पै नैं मानें। अर है सो चोरी-भंड़याई के काम खौं वे आनगांव की गैल धरन लगे। अर आनगाँव जाकें वे चोरी-भंड़याई करकें अपुनौं पेट पालन लगे।

ऐंसई-ऐंसई होत-करत एक दिना का भव कै गटूं माते के चारई लरकन नें सलाह करी कै चलो आज तौ सब जनें दलीपुर चलें। अर दलीपुर चलकें उतई कछू करबू-धरबू संगै खाबे-पीबे को इंतजाम करबू। सा ऐंसी सलाह करकें वे बड़े भुनसारे सें दलीपुर खौं निकर गये। संगै उनें जां कऊं भूख-प्यास लगी सो काऊ सें मांग-चूंग कै खात-पियत अर चलत-फिरत दिन डूबें वे दलीपुर जा पौचे। अर दलीपुर के एक चौंगड्डा पै नीम के पेड़े तरें बनें चौंतरा पै वे बैठ गये। दिन भर चलत-फिरत वे कछू हार गये ते सो हरारत के मारें वे उतई ऊ चौंतरा पै लुड़क कैं पर रये। अर चौंतरा पै परें-परें चौरई जनें कछू अपने गुनतारे में डूब गये।

अब का भव कै दलीपुर में एक हते लंबरदार। अर उनकौ नाव तौ वीरसींग लंबरदार। वे भौतई तेज-तर्रार अर भारी ताकतवर हते। गांव में उनकौ भारी दब-दबा अर भौतऊ चला हतो। सबई जनें उनकी दहशत में रात ते अर है सो सबई उनकौ खूब खौप खात ते। इतै तक कैं अरोस-परोस के सबई गाँवन लौ दलीपुर के लंबरदार वीरसिंग की खूबई धाक हती। जैंसई उनकी धाक हती बैंसई उनकी साक हती। उनसें चोर-उचक्का भंड़या-बदमाश सबई जनें भारी डरात ते। उनके डरन के मारें कौनऊं चोर-उचक्का भंड़या-बदमाश दलीपुर में घुसबे की हिम्मत नैं करत तो। अगर कऊं काऊ खौं उनसें कछू जरूरी काम परबै तौ ऊ उनसें मिलबै खौं उनकी बखरी जरूरई आऊत-जात रत तो। अर है सो ऐई के संगै अगर कऊं कौनऊं अंत गांव सें कोऊ अजनबी आदमी कछू जरूरी काम काम सें दलीपुर आबै तौ ऊ सबसे पैलें वीरसींग लंबरदार सें मिलबै उनकी बखरी जरूरई आऊत-जात तो। उनकी बाखर दलीपुर के ओई चौगड्डा वांरे नीम के चौंतरा लो हती जितै गटूं माते के चारई लरका जा परे ने। वे नौनें वीरसींग लंबरदार सें नैं मिले। उतई पैं का भव कै वीरसींग लंबरदार की उनपै नजर पर गई। सो नजर के परतन वीरसींग लंबरदार खौं उनपे कछू शंका सी भई। ऐंसें वीरसींग लंबरदार हते सो वे शंका में पर कैं मनई मन कछू गुनतारौ सौ करन लगे। गुनतारे में लगें-लगें उनें रात सी हो गई सो रातई रात उननें अपने कछू दर्जन खांड़ आदमनों खौं निगरानी अर चौकसी के लानें चौकन्ना रैबे की तैयारी करी। ऐसें निगरानी अर चौकसी की तैयारी में उनें भारी रात बीत गई। सो देर रातै वीरसींग लंबरदार नें ब्यारी करी। अर ब्यारी करकें निगरानी के लानें उननें खुदई चौकन्ना होकें अपने पइसा-डब्बल अर कीमती चीजन-बसतन कौ पक्कौ इंतजाम करो। अर फिर कतरना लैकें वे अपुनी बाखर के पूजाघर में धरी एक खूब बड़ी खाली कुठिया में जा बैठे।

फिर का भव कै आधी रातै गांव में जब खूबई सुनसान अर सन्नाटौ सौ परो सो गटूं माते के चारई लरका उठे। अर कंछू कानाफूसी करकें वे वीरसींग लंबरदार की बखरी में घुवा टारकें जा घुसे। अर वीरसींग लंबरदार की बाखर में घुसकें उन चारई जनन नें चोरी-भंड़याई करबे के लानें उनकी पूरी बखरी छान मारी। मनों उनें कौनऊं चीजें-बसतें सौनौं-चांदी पइसा-डब्बल मौरें-सौरें टका-कल्दार कछुवई हातै नैं लगो। सो चारई जनें वीरसींग लंबरदार की बाखर के पूजाघर में एक जांगा ठिठक कैं रै गये। अर वे ठांडे-ठाड़ें मनई मन कछू गुनतारौ सौ करन लगे। फिर का भव कै गुनतारे में लगें-लगें उन चारई जनों की नजर वीरसींग लंबरदार की बखरी के पूजाघर में धरी एक खूब बड़ी कुठिया में पै गई। सौ ऊ कुठिया खौं देखतनई वे भौतऊ खुश हो गये अर खुशी के मारें उनकी बाछें खिल गई। कायै कै ऊ कुठिया पै लक्ष्मी जू की छाप बनी ती अर है सो संगै ओई पै तामें के कुले पइसन की माला डरी ती। जियै देख कैं उननें सोसी कै ई कुठिया में जरूरई कछू भौत भारी खजानौं धरौ हुईये। ऐंसी सोसत भये खुशी के मारें उछल कैं वे चारई जनें ऊ कुठिया लौ जा पौचे। अर कुठिया लौ जाकें वे चारई जनें उकता कैं ऊ कुठिया में देखबे के लानें न्यौरन से लगे। सो बड़े लरका हरजू नें कानाफूसी करकें कई कै जो कोऊ बड़ौ है सबसें पैलें कुठिया में ओई देखै अर है सो ओई कुठिया में सें सामान निकारै। सो सब जनें जां के तों ठिठक कैं रै गये। अर तुरतई हरजू कुठिया में ढूंकन लगो।

फिर का भव के ऊ कुठिया में वीरसींग लंबरदार तौ कतरना लयें बैठेई ते। सो कुठिया में जैंसई हरजू ढूंको बैंसई वीरसींग लंबरदार नें कतरना सें ऊकी नाक काट लई। सो हरजू नें तुरतई अपुनी पिछौरिया सें नाक-मौं दबाव अर चिमानौं-चिमानौं एकदम आंखें मीचें उतै सें उचक्कें एक कुदाऊं दूर जा ठांडौ भव। सो हरजू की हालत देख कैं विरजू, सरजू अर दुरजू नें मनई मन जौ गुनतारौ करो कै होये नैं होये कऊं ई कुठिया में सांसऊं भौत भारी खजानौं आ धरो है जियै देख कैं हरजू एकदम हड़बड़ाय गव है। सो ऐईसें ऊ अपुनी पिछौरिया सें

नाक-मौं ढांकें अर चिमानौं-चिमानौं एकदम आंखें मींचें भारी अचरज में आ पर गव है। ऐंसी गुनत भये उननें सोसी कै तनक हमई खौं देखन दे कै ई कुठिया में ऐसौ काय धरो है। अर वे उकता कैं तुरतई कुठिया में देखबे के लानें न्यौरन से लगे। सो विरजू ने कानाफूसी करकें कई कै जो कोऊ बड़ो है सबसें पैलें कुठिया में ओई देखै अर ओई ऊ कुठिया में से सामान निकारै। सो सब जनें जां के तां ठिठक कें र गये। अर तुरतई विरजू कुठिया में ढूंकन लगो। फिर का भव कै ऊ कुठिया में वीरसींग लंबरदार नें कतरना लयें बैठई ते। सो कुठिया में जैंसई विरजू ढूंकौ बैंसई वीरसींग लंबरदार नें कतरना सें ऊकी नाक काट लई। सो विरजुवई नें तुरतई अपुनी पिछौरिया सें नाक-मौं दबाव अर चिमानौं-चिमानौं एकदम आंखें मीचें उतै सें उचक्कें एक कुदांउं दूर जा ठांड़ो भव।

ऐंसें-ऐंसें होत-करत हरजू अर विरजू तौ अपुनी-अपुनी पिछौरिया सें नाक-मौं दबायें अर चिमानें-चिमानें एकदम आंखें मीचें एक कुदाऊं दूर जा ठांड़े भये। अब पराये घर में घुसकैं चोरी-भंड़याई के काम में एक-दूसरे सें वे कछू कै नें सकें। ईसें जैसौ उनकी समज में आबै सो वे ऊंसई करें। सो अब हरजू अर विरजू की हालत देख कैं सरजू अर दुरजू नें मनई मन जोई गुनतारौ करो कै होये नैं होय कऊं ई कुठिया में सांसऊं भौत भारी खजानौं आ धरौ है जिये देख कैं जे औरें एकदम हड़वड़ाय गये। ऐंईसें जे औरें अपुनी-अपुनी पिछौरिया से नाक मौं ढांकें अर चिमानें-चिमानें एकदम आंखें मीचें भारी अचरज में आ पर गये हैं। सो ऐंसी गुनत भये उननें सोसी कै तनक हमई खौं देखन दे कै ई कुठिया में ऐंसौ काय धरो है। अर वे उकता कैं तुरतई कुठिया में देखबे के लानें न्यौरन से लगे। सो सरजू नें कानाफूसी करकें कई कै जो कोऊ बड़ो है सबसें पैलें कुठिया में ओई देखै अर ओई ऊ कुठिया में से सामान निकारै। सो दुरजू हतो सो जां कौ तां ठिठक कैं रै गव। अर तुरतई सरजू कुठिया में ढूंकन लगो। फिर का भव कै ऊ कुठिया में वीरसींग लंवरदार तौ कतरन लयें वैठई ते। सो कुठिया में जैंसई सरजू ढूंकौ वैंसइ वीरसींग लंबरदार नें कतरना सें ऊकी नाक काट लई। सो सरजुवई नें तुरतई अपुनी पिछौरिया सें नाक-मौं दवाव अर चिमानौं-चिमानौं एकदम आंखें मीचें उतै से उचक्कें एक कुदाऊं दूर जा ठांड़ो भव।

अब का है हरजू, विरजू अर सरजू तौ अपुनी-अपुनी पिछौरिया सें नाक-मौं दवाये अर चिमानें-चिमानें एकदम आंखें मीचें एककुदाऊं दूर जा ठांड़े भये। अव वचे ते अकेले दुरजू सो ओई हरजू, विरजू अर सरजू की हालत देख कैं मनई मन अब जोई गुनतारौ करो कै होये नैं होये कऊं ई कुठिया में सांसऊं भौत खजानों आ धरो है जिये देख कैं हमाये जे तीनई भैया भौतऊ हड़बड़ाय गये। ऐईसें जे औरें अपुनी-अपुनी पिछौरिया सें नाक-मौं ढांकें अर चिमानें-चिमानें एकदम आंखें मींचें भारी अचरज में आ पर गये हैं। ऐंसौ गुनतारौ करत भये ऊनें सोसी कै तनक मोई खौं देखन दे कै ई कुठिया में ऐंसौ काय धरौ है। अर ऐंसी सोसत भये तुरतई दुरजू कुठिया में ढूंकन लगो। फिर का भव कै ऊ कुठिया में वीरसींग लंबरदार तौ कतरना लयें बैठेई ते। सो कुठिया में जैंसई दुरजू ढूंसो वैसई वीरसींग लंबरदार ने कतरना से ऊ की नाक काट लई सो दुरजुवई नें तुरतई अपुनी पिछौरिया सें नाक-मौं दबाव अर चिमानौं-चिमानौं एकदम आंखें मींचें उतै सें उच्चकें एक कुदाऊं दूर जा ठांड़ौ भव।

अब का भव कै ''भई गत सांप छछूंदर केरी।'' काये कै गटूं माते के चारई लरका तौ अपुनी-अपुनी पिछौरिया सें नाक-मौं दबायें अर चिमानें-चिमानें एकदम आँखें मींचें वीरसींग लंबरदार की बाखर के पूजाघर में एक कुदाऊं ठांड़े रायें। सौ नैं तौ अब उनपै भगतन बनें अर है सो नैं उनपै कछू करतन बनें। काये कै कुठिया में कतरना लयें बैठे वीरसींग लंबरदार नें एक-एक करकें उन चारई जनों की नाक काट डारी। अर है सो फिर तुरतई कतरना हांत में लयें वीरसींग लंबरदार कुठिया में सें निकर कैं बायरैं आन ठांड़े भये। अर ठांड़े होकैं उननें तुरतई अपने आदमनों खौं कूका दव। सो कूका सुनकैं तुरतई उनके सबरे दर्जन खांड़ आदमी जौन चौकसी में लगे ते वे सब दौर कैं उतै आये अर गटूं माते के चारई लरकन खौं गेर लव।

ऐसें वीरसींग लंबरदार नें गटूं माते के उन चारई लरकन खौं नकटा करके पकरो अर लै जाकैं राज दरबार में पेश कर दव। सो राजा साहब नें वीरसींग लंबरदार की बहादुरी पै खुशी होकैं उनें खूब सारी इनाम दई। अर गटूं माते के चारई लरकन सें राजा साहब नें पूंछतांछ करी सो उननें अपुनौं चोरी-भंड़याई कौ जुरम कबूल कर लव। ईसें राजा साहब नें चोरी-भंड़याई के जुरम में उनें कारागार में डार दव। ऐंसें बुरये करमन अपुनी नाक कटायें ''नानकपुर के नकटा'' हते सो चोरी-भंड़याई के जुरम में कारागार भुगतन लगे। किसा हती सो पूरी भई। किसी कौ जो मतलब सई, कै बुरये करमन बुरई गत भई। अर बदमाशन खौं कछू सीक सी भई, कव बड़ेदा कैंसी कई।

- इंदिरा प्रियदर्शनी वार्ड,
शाहगढ़, जिला सागर (म.प्र.)

आल्हा : बुंदेलखंड की अनूठी पहचान

– डॉ. राहुल मिश्र

ढोलक की थाप का साथ देती मंजीरे की धुन के साथ गाया जाने वाला वीर गीतात्मक काव्य आल्हा बुंदेलखंड की अनूठी तहजीब का बेमिसाल नगीना है। आल्हा में यूँ तो महोबा के दो वीरों की कथा है, किंतु आल्हा के गायन की अपनी विशिष्ट शैली के कारण यह दूर-दूर तक प्रसिद्धि पाया है।

लौकिक रास परंपरा की आदिकालीन रचना जगनिककृत परमाल रासो के आधार पर प्रचलित आल्हा गीतों की उत्पत्ति की कथा जितनी रोचक है, उतना ही मर्मस्पर्शी है। इनका विकास और विस्तार भी। गौरवशाली अतीत से परिचित कराने के साथ ही समाज को एक सूत्र में बाँध सकने की क्षमता आल्हा गीतों में है।

जगनिक कृत परमाल रासो की प्राचीन पाण्डुलिपि अप्राप्य है और इस कारण यह माना जाता है कि जगनिक की यह रचना प्राय: लोक-कंठों में जीवित रही। सन् 1865 के आसपास एक अंग्रेज कलेक्टर सर चार्ल्स इलियट ने आल्हा गवैयों की सहायता से वाचिक परंपरा में जीवित आल्हा को लिपिबद्ध कराया। ऐसा ही प्रयास विसेंट स्मिथ ने किया। बाद में सर जार्ज ग्रियर्सन के संपादन में सन् 1923 में डब्ल्यू. वाटरफील्ड द्वारा हिंदी से अंग्रेजी में आल्हा का अनूदित संस्करण आक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस से छपा। लोक काव्य आल्हा को लिपिबद्ध करके संरक्षित और संकलित करने का यह संभवत: पहला प्रयास था। इसके बाद आल्हा के कई संस्करण अलग-अलग छापाखानों में छपे। आज भी गँवई-गाँव के मेलों में आल्हा की किताबें बिकती हुई देखी जा सकती हैं।

बनावट के लिहाज से इसमें बावनखंड हैं। संयोगिता स्वयंवर, परमाल का ब्याह, महोबा की लड़ाई, गढ़मांडो की लड़ाई, नैनागढ़ की लड़ाई, बिदा की लड़ाई, मछलाहरण, मलखान का ब्याह, गंगाघाट की लड़ाई, ब्रह्मा का ब्याह, नरवरगढ़ की लड़ाई, ऊदल की कैद, चंद्रावल की चौथी लड़ाई, चंद्रावल की विदा, इंदलहरण, संगलदीप की लड़ाई, आल्हा की निकासी, लाखन का ब्याह, गाँजर की लड़ाई, पट्टी की लड़ाई, कोट-कामरू की लड़ाई, बंगाले की लड़ाई, अटक की लड़ाई, जिंसी की लड़ाई, रूसनी की लड़ाई, पटना की लड़ाई, अंबरगढ़ की लड़ाई, सुंदरगढ़ की लड़ाई, सिरसागढ़ की लड़ाई, सिरसागढ़ की दूसरी लड़ाई, भुजरियां की लड़ाई, ब्रह्मा की जीत, बौना चोर का ब्याह, धौलागढ़ की लड़ाई, गढ़चक्कर की लड़ाई, देवा का ब्याह, माहिल का ब्याह, सामरगढ़ की लड़ाई, मनोकामना तीरथ की लड़ाई, सुरजावती हरण, जागन का ब्याह, शंकरगढ़ की लड़ाई, आल्हा का मनौआ, वेतवा की लड़ाई, लाखन और पृथ्वीराज की लड़ाई, ऊदल हरण, बेला को गौना, बेला के गौना की लड़ाई, बेला और ताहर की लड़ाई, चंदनबाग की लड़ाई, जैतखंब की लड़ाई, बेला सती। आल्हा के ये बावन खंड आल्हा गायकों को समग्रत: याद नहीं रहते। वैसे भी अब अल्हैनों की परंपरा सिमटती जा रही है। अब आल्हा के कुछ प्रचलित खंड ही प्राय: गाए जाते हैं।

बुनावट की दृष्टि से देखा जाए तो आल्हा में लगभग सत्रह प्रकार के छंदों का प्रयोग हुआ है। इसमें कहीं-कहीं संस्कृत के श्लोक हैं तो कहीं पर गद्य का प्रयोग भी हुआ है। वीर रस की प्रधानता होने के कारण इसका गायन भी ओजपूर्ण होता है। हर घटना और युद्ध या वीरता के बखान के लिए सुर और ताल के विशिष्ट उतार चढ़ाव और अनूठी शैली श्रोताओं को न केवल मंत्रमुग्ध कर देती है वरन कथा का सटीक और जीवंत चित्रण भी कर देती है।

लोक काव्य आल्हा में आल्हा को ही नायकत्व का दर्जा प्राप्त है क्योंकि वह दूसरे खंड से लेकर बावनवें खंड तक मुख्य भूमिका अदा करता है। वह वीरता, गंभीरता, धैर्य और साहस जैसे उदात्त गुणों का स्वामी है। राजा परमार, राजा होने के बावजूद कायरता, स्वार्थ और भीरूता का प्रदर्शन करता है। परमाल की पत्नी मल्हना या मलना, आल्हा-ऊदल की माँ दिवला, मछला और बेला जैसे नारी पात्र भी हैं, जो मध्ययुगीन भारतीय महिलाओं का आदर्श प्रस्तुत करतीं हैं और वीरांगनाएँ भी हैं। आल्हा, ऊदल, मलखान और इंदल के चरित्र को विस्मृत नहीं किया जा सकता, जिनके प्रश्रय में कथा का विस्तार होता है।

धर्म, आध्यात्म और संस्कृति का समन्वय आल्हा में स्पष्ट परिलक्षित होता है। आल्हा गायन की शुरूआत में की जाने वाली स्तुति विभिन्न मत-मतांतरों के मध्य समन्वय स्थापित करती प्रतीत होती है-

सुमिर भवानी दाहिने, सनमुख रहे गनेस
पांच देव रक्षा करें, ब्रह्मा, विष्णु, महेस॥
काली सुमिरौं कलकत्ते की, जगदंबा के चरन मनाय।
अन्नपूर्णा तिरवा वाली, जगमग जोत रही छहराय।
सुमिर भवानी कलपी वाली, मनिया सुमिर महोबे क्यार॥

स्थानीय देव-देवियों की उपस्थिति आल्हा की लोकग्राह्यता की प्रतीक बन जाती है। यह लोक ग्राह्यता वर्ण और जातियों के समन्वय और विभेद को मिटा देने के कारण भी है।

सगुन विचारै बनिया बाट्, बाम्हन लेय साइत विचार,
हम क्षत्रिय लोहा लादे हैं, सो हम बेचें कौन बजार।
नाई-बारी हो तुम नाहीं, घर के भैया लगौ हमार।
मान महोबै रो रख लेवों, दोनों हाथ करौ तलवार॥

इसके साथ ही आल्हा में नीति व ज्ञान की बातें भी वर्णित हैं। यथा-

पानी जैसो बुलबुला है जो छन माँही जैहे बिलाय,
सदा तुरैया ना बन फूलै यारों सदा न सावन होय।
सदा न मैया की कुक्षा में धरिहौं बार-बार अवतार,
जस अम्भर कर लेव जुद्ध में, काया छार-छार हवै जाय॥

ऐसी ज्ञान व नीति की बातें भले ही कथा-विस्तार में महत्वपूर्ण स्थान न रखतीं हों, किन्तु नीति व ज्ञान की अनूठी-अनौपचारिक पाठशाला के रूप में समाज के बड़े तबके को व्यावहारिकता और सामाजिकता सिखाने में बहुत खास भूमिका अदा करती रहीं हैं।

मनोरंजन और समय व्यतीत करने के साधन के रूप में आल्हा का गायन शिक्षाप्रद भी हो जाता था। इसमें अंतर्निहित ढेरों कथाएँ, गल्प और आख्यान प्रकीर्ण साहित्य की महत्वपूर्ण धरोहर हैं।

मध्ययुगीन सामाजिक, आर्थिक, सांस्कृतिक और धार्मिक स्थितियों के चित्र भी आल्हा में उभरते हैं। सिद्ध और नाथ पंथियों का प्रभाव, जादू-टोने, ज्योतिष, तंत्र और स्वप्न-अपशकुन, पुनर्जन्म तथा भूत-प्रेत आदि की उपस्थिति आल्हा को समग्रता प्रदान करती है। यही सब इसकी व्यापकता और स्वीकार्यता के केन्द्र में है।

समूचे उत्तर भारत में, बुन्देलखंड, ब्रज, राजस्थान, बैसवारा, अवध और भोजपुर में विभिन्नताओं के साथ आल्हा गायन की, अल्हैनी की व्यापक परंपरा प्रचलन में रही है। बरसात के समय, किसानों-मजदूरों के फुर्सत के समय गाँवों की चौपालों, अथाई और बैठकों में होने वाली अल्हैनी सभी को एक सूत्र से जोड़ देती थी। आल्हा के तालन सैयद का चरित्र सांप्रदायिक एकता और सौहार्द का प्रतीक है-

राम का मित्तर जामवंत था और पांडो का कृष्ण अवतार,
आल्हा का ताला सैय्यद है, काम करे जो सोच विचार।

सैकड़ों वर्षों तक अपने वाचिक माध्यम से लोक महाकाव्य आल्हा जनपदों, गाँवों और कस्बों में राष्ट्रीयता की अलख जगाने, नीति विज्ञान सिखाने और मनोरंजन करने का माध्यम बना रहा। इसकी लोकप्रियता तुलसी के मानस के समकक्ष बैठती है। बिना पुस्तकाकार पाए, लोकजीवन में, लोक-कंठों में जीवित और निरंतर जीवंत रहने वाली यह विधा, यह काव्य आज देश के विकास के व्युत्क्रमानुपाती होकर मिट रहा है।

टेलीविजन, इंटरनेट और अन्य संचार साधनों ने बहुत कुछ बदल दिया है। आज अल्हैते नहीं मिलते, गाँवों में अथाई नहीं लगती, बरसात में भी, आल्हा नहीं सुनाई पड़ता। यह संकट हमारी पहचान का है, हमारे अतीत के गौरव क्षरण का है, हमारी संपदा के विनाश का है। इसे बचाने, संरक्षित और संवर्द्धित करने का दायित्व आज की पीढ़ी का है, वरना आने वाली पीढ़ी के लिए आल्हा काव्य ही नहीं, शब्द भी अपरिचित रह जाएगा।

- प्राध्यापक,
केन्द्रीय बौद्ध संस्थान, लेह (लद्दाख)
संस्कृति कृषि मंत्रालय, भारत सरकार
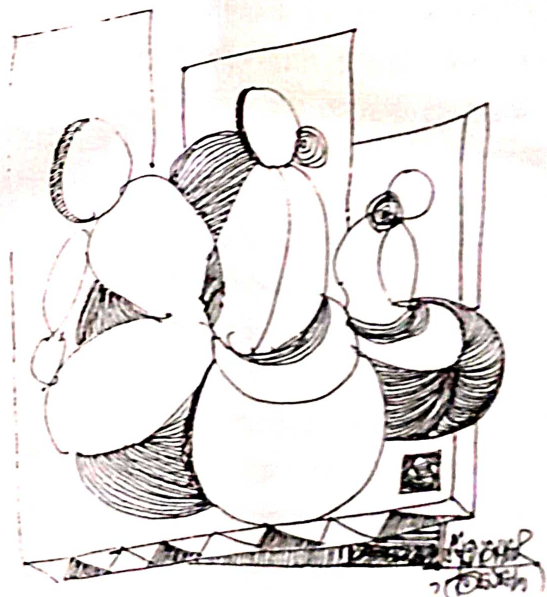
लोरी : स्वरूप और उत्स

–डॉ. श्यामबिहारी श्रीवास्तव

लोरी गीत की ही रूप है। जैसे गीत में एक ध्रुव पंक्ति होती है जिसे प्रत्येक छंद या अंतरा के बाद टेक के रूप में दुहराया जाता है। इसी प्रकार लोरी में भी ध्रव पंक्ति होती है। जिसे प्रत्येक अंतरा के बाद दुहराया जाता है।

लोरी शब्द की व्युत्पत्ति स्नेह प्रदर्शक शब्द लोर, लोरना से हुआ होगा। लोर का अर्थ चंचल, लोल, आंसू, उत्सुक आदि है तथा लोरना का अर्थ लिपटना, लोटना, चंचल होना आदि है परन्तु 'लोरी' शब्द गीत विशेप के अर्थ में प्रयुक्त है। ऐसा गीत जिसे माँ द्वारा बच्चे को सुलाने के लिए गाया जाता है। लोरी गायन की परम्परा भारत के सभी अंचलों में रही है। ये लोक संस्कृति के अंग हैं। शिशु के जन्म के उपरान्त जब शिशु कुछ महीने का हो जाता है तो उसे झूले या पलने में लेटाकर सुलाया जाता है। कुछ शिशु झूले या पालने में लिटाये जाते समय रोते हैं किन्तु जब माँ लोरी गाती है तो शिशु गीत की मधुर कोमल लय में मुग्ध होकर निद्रामग्न हो जाता है।

लोरी गीतों का शिल्प और संरचना संगीतात्मकता से युक्त होती है। आंचलिक बोली के शव्दों व लहजों के विविध प्रयोगों के साथ ये लोरियाँ भारत के भिन्न-भिन्न अंचलों में शिशुओं को सुलाने के लिए गायी जातीं हैं। आधुनिक युग में जहाँ व्यक्ति की जीवन शैली और रहन-सहन में परिवर्तन हुआ है, वहाँ इन लोक संस्कारों में भी परिवर्तन हुआ है। उच्च शिक्षा प्राप्त स्त्रियां इन पुराने ढर्रे की लोरियों को गाने में शर्म का अनुभव करती हैं। वे उन्हें आज की परिनिष्ठित भापा की शब्दावली में ढालकर गाना पसंद करतीं हैं। कुछ पारम्परिक लोरियाँ यहां प्रस्तुत की जा रही हैं। इन लोरियों पर भी आधुनिकता का थोड़ा बहुत प्रभाव भाषा संरचना में दिखाई देता है।

लोरी

अपने गोपालजू को पलना डार झुला दउंगी,
झूला डार झुला दउंगी-अपने गोपाल जू कों।
जब मेरे गोपाल जू खिलौना मांगे,
चकरी, भौंरी, अंटा गोली और खिलौंने ला दउंगी।
जब मेरे गोपाल जू कलेवा मांगे
माखन मिसरी दूध मलाई और मिठाई ला दउंगी।
जब मेरे गोपाल जू सवारी मांगे
हाथी, घोड़ा, ऊंट पालकी गाड़ी ला दउंगी।

उपर्युक्त लोरी भक्ति भावना से भरी है। माँ अपने शिशु को गोपाल जू कहकर संवोधित कह रही है। शिशु को बहलाने के लिए अथवा लोरी को लम्बा करने के लिए चकरी, भोंरा, अंटा गोली आदि खिलौनों का कलेवा मांगने पर माखन, मिसरी, दूध, मलाई, मिठाई देने और सवारी के लिए हाथी, घोड़ा, ऊँट, पालकी, छकड़ा गाड़ी आदि का उल्लेख किया गया है। माँ अपने शिशु के समृद्ध और सुखी जीवन की कामना करते हुए लोरी गाती है।

तू झूल मोरे ललना, पलना में झूल
बाबा के अंगना में डरो है पलना
दादी लगावें पलना में फूल मोरे ललना..... ।

उपर्युक्त लोरी का कथ्य बिल्कुल सादा है। माँ शिशु को संबोधित कर रही है कि मेरा लल्ला पलने में झूलेगा। पलना बाबा के आंगन में स्थित है। दादी पलने में फूल लगाकर सुसज्जित करती हैं। लोरी को लम्बा करने के लिए फूफा, बुआ, काका, देवर, देवरानी, जिठानी, जेठ, ननद, ननदेऊ आदि सम्वंधों का उल्लेख किया जाता है। इस प्रकार की लोरियों की एक परम्परा है। परिवार और समाज में सम्वधों की समरसता, एकता तथा संवेदना को सुदृढ़ करने में इन लोरियों का भी महत्व है।

मेरो खेलैंगो कुंवर कन्हाई झुंझना सोने कौ।
सोने को झुंझना बाबा लियाये
दादी लेत बलैंया-झुंझना सोने कौ।......

उपर्युक्त लोरी में शिशु के खेलने का उल्लेख किया जा रहा है। माँ शिशु को झूले में लेटाकर गाती है। मेरा पुत्र कन्हैया-झुनझुना से खेलेगा। झुनझुना सोने का है। यह सोने का झुनझुना बाबा लाये हैं। दादी जी बलैयाँ लेती हैं। ऐसे लोरी गीतों में आगे की पंक्तियों में जेठ-जिठानी, देवर, देवरानी, ननद-ननदेऊ आदि सम्वंधों का उल्लेख किया जाता है जिससे लोरी लम्बी हो जाती है है और सगे-संवंधी अपने नाम का उल्लेख सुनकर प्रसन्न होते हैं।

झुंझना दैदो लला के हाथ,
चाँदी कौ झुंझना, सोने कौ झुंझना
झुंझना बजै दिन और रात।
सोने को झुंझना बाबा लै आये
दादी खिलावें दिन रात।.....

पूर्व प्रस्तुत लोरी जैसा ही कथ्य उपर्युक्त लोरी का भी है। केवल राग, ध्वनि, लय और संगीतात्मक स्वर में विभेद है।

झूला में झुंलेंगो हमारो ललना
लीजो-लीजो सासू जी हमारौ ललना
तुम्हें दादी कहैगो हमारा ललना
झूला में झूलेंगो हमारो ललना
लीजो-लीजो जेठानी हमारौ ललना
बड़ी अम्मा कहैगो हमारो ललना
तुमें काकी कहैगो हमारो ललना
झूला में झूलैगो हमारौ ललना
लीजो-लीजो ननद जी हमारौ ललना
तुमें बुआ कहैगो हमारो ललना
झूला में झूलैगो हमारौ ललना
बाजे घुंघरू हंसैगो हमारो ललना
झूला में झूलैगो हमारौ ललना

उपर्युक्त लोरी दादरा या ठुमरी जैसी लय में है। माँ अपने शिशु को झूला में झुलाते हुए गा रही है। लोरी को लम्बा करने के लिए पारिवारिक सगे संबंधियों का उल्लेख किया गया है। सासूजी लल्ला को लेना ये आपसे दादी कहेगा, जिठानी जी लल्ला को लेना, यह आपसे बड़ी माँ कहेगा। इसी तरह देवरानी, ननद आदि के लिए कहा जा रहा है पर मुख्य विषय शिशु को पलने में लिटा कर झुलाते हुए सुलाना है।

सोजा सोजा वारे वीर
वीर की बलैंयां लैंहों जमना के तीर

यह एक पारम्परिक लोरी है। देश के विभिन्न अंचलों में भाषा और बोली के लहजे में अन्तर के साथ इसे गया जाता है। इस लोरी ने कुछ आंचलिक लोकगीतों को भी जन्म दिया है जो लोरी के रूप में अन्य प्रकार की अभिव्यक्ति के उद्देश्य से लिखे गए हैं। दतिया के प्रसिद्ध हास्य कवि चतुर्भुज दीक्षित 'चतुरेश' द्वारा आज से छियालीस-सेंतालीस वर्ष पूर्व ऐसे ही कुछ लोकगीत बुन्देली में रचे गये हैं। एक टूटी-फूटी पंक्ति मुझे ससंदर्भ याद आ रही है। सन 1962 में चीन ने भारत पर आक्रमण किया था, उस समय कवियों ने इसी संदर्भ में रचनाएँ लिखीं थीं। तब चीन के प्रधानमंत्री चाऊ एन लाई थे। 'चतुरेश' ने लोरी की उपर्युक्त पंक्तियों की भांति लोक लय का प्रयोग अपने उस बुंदेली गीत में किया है-

मेरौ लाला लरबे जैहें
दुश्मन कें दो लातें दैहे
झुला देउ माई श्याम परे पलना।
काऊ गुजरिया की नजर लगी है सो रोऊत है ललना।
राई नौन उतारौ जसोदा खुशी भये ललना।
काहे के तोरे बने पालना रेशम के गंसना।
जो मोरे ललना कों पलना झुलावे दैहों जड़ाऊ कंकना।
सबरे बिरज की सख्यिाँ जुर गईं घाल लये री पलना॥

उपर्युक्त लोरी 'कृष्ण' परक है। इसमें कृष्ण को प्रतीक मानकर माँ अपने शिशु की कुशल कामना करती हुई उसे पलने में झुलाने और सुलाने का प्रयास कर रही है। लोरी गीत में माँ को यशोदा का प्रतीक माना है और पूरी लोरी कृष्ण-यशोदा के संदर्भ में प्रस्तुत की गई है। यह लोरी पचास साठ वर्ष पूर्व मैंने अपनी माँ से सुनी थी, जो झूला झुलाते समय मेरे छोटे भाई के लिए गाती थी। गीत की लय, धुन सब वही पर एकाध शब्द भर का अंतर गाने वालों के द्वारा कर लिया जाता है, क्योंकि लोरियाँ अधिकतर कंठस्य रहीं है। उपर्युक्त गीत में 'झुला देउ माई' है जबकि मैंने 'झुलाओ माई' भी सुना है। इसी तरह 'अगर-चंदन' शब्द परिमार्जित है। इसके स्थान पर 'अनन-चनन' तथा 'अगर चनन' शब्द युक्त गीत भी मैंने सुना है किन्तु उपर्युक्त लोरी गीत सर्व शुद्ध है। बुंदेलखण्ड के अतिरिक्त अन्य अंचलों में भी आंचलिक बोली के लहजे के साथ यह लोरी प्रचलित है।

आधुनिक युग दूरदर्शन वाला युग है। नई सभ्यता, नई जीवन शैली है। अब झूलों और पलनों का स्वरूप बदलता जा रहा है। आज की माँ अपने शिशुओं को लोरी गाकर नहीं सुलाती। फिर भी जहाँ बड़ी बूढ़ियां घर में हैं वहाँ अब भी लोरी के अंश सुनने को मिल जाएंगे। आधुनिक जीवन इतना व्यस्त, त्रस्त और तनावग्रस्त है कि लोरी जैसे कोमल गीतों को गाने की मानसिकता ही सुरक्षित नहीं रह पाई।

- अनन्य कॉलोनी, सेंवढ़ा
जिला, दतिया (म.प्र.)

बुंदेली कहानी -

इनसै तुलसी गंगा हरी

-दिनेश चन्द्र दुबे

खूब बढ़ा मूँड। बाहर खौ निकरी पर रई बड़ी-बड़ी आँखे। उनसैऊ-ऊचौ साड़े छः फुटा शरीर। ता वै वकील। आवाज शेरन जैसी। जैसी कौनऊ गुफा में सै गर्जना होरई होय। और उतै बे बूढ़े। सत्तर के आस पास के हुयें। पर चकित है वे जा टैम पै। उनै नैकऊ डर नई लगत का? मौड़ा बदल परें तौ? वै खुद डरा रई ती। उनकी अवाज पूरे मुहल्ला में गूंजी थी आधी रात कें।

'नई अभैई खाली कर घर। जौ शरीफन कौ घर है। अपनौ कमाऊत खाउत। गुन्डा बदमाशन के लाने कौनऊ जगा नईयाँ जा घर में। तेरी बाते तेरी शराब की धुतई में सुन लई कालई।

डर के मारें वे रोकी ती। अब सो तो गऔ। परों पराऔ आधी रात के काँ फिर तुम बाप हौ के........।

'चुप रह। तई नै विगारौ। नई तौ वोय भी जई टैम घर सै....'

वे तब तक इतै उतै फिरत रये ते बड़बड़ात, जब तक कार कौ शहर उठा कै चुपचाप बड़ौ बयालीस साल कौ रघ्घू अपनौ बैग लै के बाहर नई निकर गऔ तौ।

अबै तक वे कभऊ उनसै नई डराई, लेकिन आज पैली बार वे डरा के मौ ढांक के चुपचाप सोबे को बहानौ कर भई परी रई ती।

तीन चार दिना सै वे मायके में जरूरी काम हौवे के कारण बाहर हती। ऐन टैम उनसे कई भी हती फौन पे उननें, लेकिन वे नई आ पाई ती। जा बीच का भऔ उनै नई मालूम, लेकिन इतके पतौ उनै आऊ तनई लग गऔ तौ कै जौन मौड़ी खौं देखवे खौ बुलाऔ गऔ तौ वौ आई ती। बा के रिश्तेदार आये ते। लड़की ज़ौ वचन दये जावे वै कै रघ्घू शराब नई पी अब आगे दस साल छोटी हौवे के बावजूद तैय्यार हो गइ थी। शायद रघ्घू के सच्चे मन से अपनी कमजोरी तक न छुपावे और घर में सब तरा की सुख सुविधा हौवे के कारण।

पतौ चलौ प्रिया नाब है मोड़ी कौ। तीन बैनन में सबसे छोटी एम.ए., एम.लिब, पास। दस हजार तन्खा पा रई ती। बाय आज कल। मताई के संगै अकेली खती जई शैर में। बाप पैलैई मर गऔ तौ। दो बैने अपनी-अपनी ससुरार में हती। जाकौ भी ब्याव हो गऔ तो वकील सें, लेकिन एकई साल बाद टूट गऔ तौ। मारपीट रात दिन की और माँग धाँग के कारण अदालत से प्रियाई ने तलाक लऔ तो। बाने दूसरे ब्याव की अखबार में निकर वाओ तो। रघ्घू ने मोबाइल पै अपनौ प्रस्ताव भिजवाऔ तौ। बाप से सम्पर्क कर वे की खबर कर कैं वे जानती है सब। बाप की याद इन लोगन खौ तवई आऊत जब कछू काम कौनऊ तरीका से न बन रऔ होय। बाप कलेक्टर रै चुकौ। वकालत कर रऔ टैम काटवे। तापें कहानिया, किस्सा कविता से पूरी दुनिया में नाम है सो अलग। जइ सै...

पाँच मोड़ी मौड़ा है पैली से। रघुआ दूसरे नम्बर कौ है। मताई की जायदाद की लालच में अबै तर ब्याव नहीं कर पाओ। कारण बाँय चइये पढ़ी लिखी और खपसूरत लुगाई और मताई खौ चइये, गाँव में घूंघट डार के घर में बासन भाड़े समार वे वारी, खुदई जैसी लुगाई। जमीर दारिनी की ठसक गई नई अबै तर जब तक कै आदमी ने अठारा साल पैले छोड़ के उनै घर में ला ठाड़ौ करौ। पन्नाई में वे क़लैक्टर बन के आये ते और वे नई कलर्क हती। अपने आदमी से तंग आ कै उनने भी तलाक लऔ तौ कै आँखे लड़गई ती। फिर ऐसी निभी कै आज तक जा पूरे घर में उनई की फोटू रंगी। कभऊँ नई उतरी चाय केसैऊ मौका परो होय। जई सै उनकी भी फोटू छाती में कऊ ऐसी छपी कै, बूढ़े हो गये दोऊ जने, लेकिन एक के प्रान आजऊ दूसरे में बिदे लगत। मजा जौ है कै एक पईसा आज तक तन्खा में से जा घर पै खर्च नई कराउत। और घर कौ कछू काम करौ तो लड़ पर। जे हात बासन माँजवे के लाने नईयाँ। हमै प्रेम के लाने है समझी। मजदूरी आजाय तब स्वाभिमान के लाने और बात है। वरना नौकरानियाँ काये के लाने लगी।

आज भी जब वे नौकरी के लाने चलन लगी तौ दई खुदई टिफिन से रब दौड़े ते। तब तर काम वाली नई आई तो। वो बासन माँजन लगी तौ रोक दऔ तो नई वो आयेगी। वरना निकाल दूंगा। काल रघुआ की वघै सैई जौ हो रऔ। बाकी मौड़ी आई ती। हमै लगौ कै.... इसकी नजर में औरते केवल.... अरे औरत तो लक्ष्मी होत। पर जा के लाने पईसन से सब खरीदौ जा सकत। जा सै हमनेई भगा दई ती मौड़ी। कोऊ हम

पै विश्वास करत.... जवान वहू विटिया निडर हौके भेज देत। जाकौ मतलब जौ थोड़ी होत कै..... काल शराब के नशा में प्रिया कौ वचन दै के घरे लौटो तौ कैरओ ऐसे तो सत्रासौ साठ घटन में हम जा चुके। नौकरी छोड़ कै जौ लड़की गाँव में नई रै तौ मताई खौ का फायदा? हमें नई करने जा सै व्याव। हम तौ ऐंसई ठीक हैं।

तुम नई हते तौ हमने भी समझाओ तौ के अदबूढ़े तौ होई गये। छुट्टियन में वौ गांव भी जै हैं। पैले व्याव तौ हौन देओ।

'अब आगई समझ में कै काये रातइ के भगाने परौ तौ नइ तौ आज को दिना भी खराब जातौ। रँडी बाज जुआरी, इनसै तुलसी गंगा हारी, अम्मा सई कतती। खुद कछू कर नई रऔ, लड़की खौ भी कछू करन नई दैन चाऊत। वे दिना गये जब लड़का लड़कियन में फरक हते। जा मामले में तौ सोचो जाय तौ कायदे से अपनौ कपूत लड़की लायक नइयां। जौ तौ गुलाम है मताई कौ नौकर जेसो। खारओ तो मताई कौ वनाऔ भऔ और शराब पी रओ तो वइके पइसन की। पवई सें भी वैन के संगे काये आऔ तो मालूम ढाई वजै रात कै धुत लौटो तो मताई ने गरिया कै कई ती के निकर जा इतै से। लुआ ला कोऊ बना के खबाबे वारी और रात के ढाई वजे तक किवार खोल के डारैं तेरौ इन्तजार करवे वारी। सौ इतै आऔ तौ। जो सोचके के श्याद कोऊ प्रैम करवे वारी मिल जाय तौ सुधर जाये, लेकिन मैंने तौ पैलई कैदई ती कै यदि मैं फिर से जा मग में पढूंगा तो लड़की कौ वाप बन के रिश्तो तै कर.... जब रिश्तौ हटौ नईयाँ तौ फिर इतै परे रैकें मुफत की रोटी तोरवे को मतलव।

जाँ सें आफिस के लाने टैम्पों मिलत वॉ तक पैदल चलकर जाती हुयी वे सोचती जारई तौ उनै लग रई कै नई सई वे नई हती। वेई सही हते। उनकी वेवाक, सचाई प्रभाव के कारन जौन रिश्तौ हो रऔ तौ जब उसमें उनै हर तरा का नुकसान हतौ वे काये कराते मारकूट कै अपने लड़का खौं। कौऊ और की वेटी खौ वहू बना कै घरै ल्यावे के पैले यदि हर कोऊ जई तरीका से सोचे तो काय खौ जे किरदन्त मचे रवें घरन में जो मचे हैं।

ऑफिस पहुंच कर जब वे काम आरंभ करवे की तैय्यारी करन लगी तौ जाने काये उनके मन मे उनके प्रति एक अजीव सी इज्जत आज और वढ़ गई ती।

– पूर्व जज/अधिवक्ता
68, विनय नगर 9
ग्वालियर- 92 (म.प्र.)

बुंदेली चार मुक्तक
(रधिया सम्बंधी श्रृंगार परक)

– डॉ. शिवाजी चौहान 'शिवा'

1

सारी

रधियै जचत बैगनी सारी लम छर देह इकारी।
इन्द्र धनुप सी सोभा छिटकत , नभ से धरा मझारी॥
ऐसी सुन्दरता न देखी जब सें सुरत समारी।
धन्न शिवाजी वाने जी पै नेह नजरिया डारी॥

2

रधिया सिर पै खेप धरें गई, कइअक हिया हरें गई।
कैबे के लानें घूंघट लयें सामें नैन करें गई॥
एक कलश करया पै धारें, लरका सौ पकरें गई।
साँसी केरए सुनो शिवाजी, खों पर राम गरें गई॥

3

रधिया के विन लगत न नीकौ, जां देखों ताँ फीकौ।
जीखों देख देख कें रत ते, तकें आसरौ कीकौ। राके॥
घर के भीतर घुसौ न जावै दु:ख जाने को जी कौ।
वौ जी का कत हुयै शिवाजी, हीरा खोगव जी कौ॥

4

रधिया है अन्तर की पीरा, रहत विरह के तीरा।
जीखों छाती सें चिपका कें, जिऊत रहत जौ जीरा॥
पालत पोषत वड़े नेह सें, जियै नैन को नीरा।
वारु मइना हरौ शिवाजी, राखत विरछ सरीरा।

- गुरसराय
झाँसी (उ.प्र.)

ससुरार में मौरो पैलो दिन

(एक बुंदेली जनी की कहानी, ओई की जुबानी)

– धीरेन्द्र शर्मा (कौशिक)

"बऊ तौ, बैंन! कछू सांवरी सी लगत।" एक जनी सई बैठी दूसरी जनी से बोली।

"दूबरी पतरी सोऊ है।" दूसरी जनी सोऊ कै उठी।

"दूबरी पतरी की कौनऊ बात नइयां काए प्रकाशउ त मौटो-ताजो आय है पर सांवरोपन जरूर खटकवे वारौ गत।" तीसरी कछू सांवरी ढिगनी सी जनी बोली।

तबई गोरी, ऊंचे कदवारी एक और जनी इन बातन खों न कै उठी-हो का गयो सो अब॥ अगर बऊ सांवरी या कारी ऊ लगै हमाये बिटवा प्रकाश खौं जैसे कि मोय लग रई। गर उये पसन्द न आई तौ फिर का ? हम तौ दूजौ ब्याव रचैं अपने लाड़ लड़ैते मौड़ा को।"

न जानें काए ? मोरे दिल में ऊ दिना की जे बातें ज्यों की यों लिख सी गई हैं। अब जब कभऊं मैं अकेली बैठी होत, तौ बातें मोय याद आउन लगतीं। आज हमाए वे अबै तक आए इयाँ। बच्चे सब सो गए हैं। औ मोरो जौ सो सोच तनकऊ क्कतई नइयाँ-परत दर परत ऐसें उकरत आऊत जैसें आजई की होय जा बात-ऊ दिना 23 जून 1951 हती। मोय एक पालकी में बिठायें चार कहार एक घैरं लयें चले जा रयेते-नायके सें विदा करा के। ज्यों ज्यों पालकी हिचकोले बढ़त जात तीं। मैं नई जानत ती कै मोय अब कैसे लोग-लुगाईयन के बीएच में जा पौंचनें। तौऊ धीरज धरें, मन खौं तसल्ली दयें और हरदे में एक उमंग छिपायें, दिल खों करों करें, चली जा रई ती। अगाऊं-अगाऊं बाजे बजत चले जा रये ते औ पछाऊं-पछाऊं कछू जनें हंसत-खिल खिलात बतयात चले आऊत ते। उनमें ऐसौ एकऊ न दिखात तो कै जीसें अपने मन की काती, उसें कछू सुनती। ऐसे अई मनई मन सोचत जा रई ती कै अचानक पालकी रूक गई। अनजानी, अनदेखी, बेपेंचानी बिलात की लुगाईअन ने मोय पालकी से उतारो। जौन द्वारे पै मोय उतारो, ऊके बगल में एक मंदिर औ पीपर कौ बिरवा हतो, फिर सिड़िया चढ़के पत्थर के फरश पै पोंची। उतई एक बैठका में मोय हम उम्र बिटियन में लै जाकें छोड़ दओ गओ। एक तो मैं भोजपुरी औ वे सवरी बुन्देलखण्डी वे हमाई बोली समझें न हम उनकी। खैर जैसे तैंसे वा रात उनई सब जनन के संगे सोई।

दूजो दिन हास-विलास, मौज-मस्ती, हंसत-गाऊत सबके संगे ऐसे निकर गओ कै कछु पतौ अई न चलो। सांझ की बेरा आ गई। फिर का ? मोय सामें वारे घर में लै जाओ गओ जितें धूम-धाम के बीच गायन-वादन चल रओ तो। संगे बीच-बीच में ढुलक और रमतूला की संगत एक अलग समा बांध गई ती। बिलात की लुगाई जुर आई तीं। रंग बिरंगे लहंगों पर वन्न-वन्न की ओढ़नी, चुनरियाँ अपनो अलग रंग बिखेर रई तीं। कोऊ-कोऊ उनमें बढ़िया साड़ियों में सज-धज कें आई तीं। अब तौ मैं अपने घर गई ती सो मोरे भी कपड़ा बदल कें दूसरे नोने-सलोने कपड़े पैना कें नई दुलहनिया सौ सजाओ गओ। सजा तौ मैं दई अई गई हती। अब मोय सबरी लुगाईन के बीच मौंचायने मुंह दिखाई के लाने लुआ जाओ गओ भौतई चहल हती वा बेरा। हक्की-बक्की सी मैं नाँय-माँय देखत सब जनन के संगे चली जा रई ती। तबई एक जांगा आंगन के बीच मोय खड़ी कर दओ गओ। संगै जे (पति) सोऊ ठांड़े करे गए। अब एक के बाद एक लुगाई आऊत ती औ चलनी अपनी आंखन पै लगा मोय देखत ती। कछु चीज, आभूषण या रूपैया हाथ में थमाऊत तीं औ चली जात तीं। कछू लुगाई दूसरी ताई खों। ठाँड़ी-ठाँड़ी बातें करत जात तीं औ हंसत जात तीं। ऊ वखत किये ख्याल हतो कै को का कर रओ। वे बातें कछु तौ मोरे समझई में ना आऊत तीं। मैं भोजपुरी, मोय उन दिनों बुंदेली तौ बिलकुल न आउत ती।

ससुरार की देरी-आंगन की पैले दिना की वे बतियाँ मैं जाने कब तक सोच-सोच दूबरी होत राती कै तई द्वारे की सांकर यकायक खनखना उठी। मेरे वो आ गए ते। यादों की कड़ियाँ अचानक टूटीं, मानो मैं सोऊत सें जगी। किवार खोल मैं उनें भीतर लिवा लै आई। ब्यारी कराबे के लाने मैं उनसे बोली- "धोओ हाथ गोड़े जल्दी सें औ आ जाऔ चौका में ! मैं चली उतै।"

"का बच्चा सो गए ?"

"काए ! अब तक जगत राते का ? देर काए हो गई तुमें? चलौ पैंला खाना खाऔ जल्दी!"

''नई ! तनक इतै आऔ पैला! खाना होत रै। विलात रात धरी।''

बे अब तक कपड़े उतार हाथ-पाँव धो चुके ते। उनकी बात को जुआब देबे मैं उनई की ताई जात भई बोली- ''आ रई, पै तुम पैलां जौ तौ बताऔ। क्याऊं तुम दूजो ब्याव तौ न करौ अब ?''

''काए! तुम जौ काए आय-चाय जब पूंछत रातीं ? का तक कयें ! भला को दैहे मोय अपनी बिटियाँ ? जा न देखें वौ कै चार बच्चनको बाप और ऊपै परिवार नियोजित ! को कर है मोसें ब्याव। ई बूढ़ी उमर में ?''

''मैं करौं का ? मोय तौ अपनी ससुरार कौ वौ पैलो दिन कंभऊ नई भूलत। ऊ दिना की वे बातें याद आऊतीं सो डर सौ लगन लगत।''

''तौ चलो ना फिर बैड-रूम तांय, अपुन दोऊ जनें आज फिर हंसत-खेलत हनीमून मनाकर दूसरौ ब्याव रचा लइए। सो ऊ दिना बारी बात सई हो जाय। काए अब नए शिशु के आवे कौ डर तौ हैई नइया। भला हो इन परिवार नियोजन वालों का कि इननें हमाई जे चिंतायें तौ मिटा ई दईं।'' इतनौ कह वे ठठाकर हंस परे औ मोय भी हंसी आये बिना न रई।

''स्मृति''

- मऊरानीपुर जिला-झाँसी (उ.प्र.)
पो. व पिन- 284204
दूरभाष- 05178-261298

गाँव में

-साकेत 'सुमन' चतुर्वेदी

तुमई बताओ कैसे तुमखाँ, मीत बुलावें गाँव में
नईं कछू भी बचो है थोरों, आज गाँव को गाँव में

कछू दिनां का गाँव के मोंड़ा, बड़े शहर रै आए
उनने घर में और गाँव में, फेर-बदल करवाए
शहर उखर कें आगओ जैसे, आज हमाये गाँव में
नईं कछू भी बचो है थोरों, आज गाँव को गाँव में

हारमोनियम की जागां अब सिन्थेसाइजर बज रये
लोकगीत ओं नृत्य की जागां जैक्सन जैसे नच रये
'मैलोडी' क्या खूब बतारये, कौआ जैसी कांव में
नईं कछू भी बचो है थोरों, आज गाँव कों गाँव में

तीज और त्यौहार परव-व्रत भूले हैं अब सारे
हार, उसार, रखत, खों भूले रात दिनां भुन्सारे
टी.वी. टेप, वीडियों से चिपके बैठत हैं चाव में
तुमई बताओ कैसें तुमखों मीत बुलावें गाँव में

डुबरी, लटा, महेरी, तस्मै, मालपुआ न भावें
दूध, मलाई, दई, अथानों, भाजी, नहीं पुसावें
जीव लपकगई ड्रिंक चाकलेट, चाऊमीन ओं पाव में
नईं कछू भी बचो है थोरों, आज गाँव को गाँव में

बिन्नू संजवे और संवरवे ब्यूटी पार्लर जा रईं
बिनां पुतों मों भौड़ों दिखवें खुप्की, खाल, खुजारईं
कॉस्मोटिक्स की चीजें ल्यावें, बुरई वे दूने भाव में
नईं कछू भी बचो है थोरों, आज गाँव कों गाँव में

लओ बैंक सें लौन, नई तों जगां बेंच दई सारी
धंधों की सब पुंजी नशा दई कभऊँ जुऐ दें डारी
बैन क्वारी घर में बैठी, दद्दा खिच रओ ताव में
नई कछू भी बचो है थोरों आज गाँव कों गाँव में

भलमन्स्यात न बची गाँव में मेर-जोर है टूटो
जीखाँ मौका मिलो, ओई नें गाँव खों बेजां लूटो
आफत पें अब कोऊ न ठाड़ो जाके होत बचाव में
नहीं कछू भी बचो है थोरों आज गाँव को गाँव में

- 36/15, प्रेमगंज, सीपरी-झाँसी
जिला-झाँसी (उ.प्र.)

बुंदेली के समय व मौसम का बोध कराने वाले शब्द

– डॉ. सरोज गुप्ता

बुंदेलखण्ड के लोगों ने समय व मौसम का बोध कराने वाले शब्दों का विभाजन बड़ी बारीकी से किया है। ग्रामीणों की सजगता, पैनी व सूक्ष्म निरीक्षण दृष्टि बुंदेली शब्दों से अभिव्यक्त होती हैं। बुंदेलखण्डी शब्दों द्वारा सूर्योदय के पूर्व से आकाश की गतिविधि देखकर समय का विभाजन अत्यन्त सटीक व सार्थक है। सबसे पहले 'तारा उंगे'' सुकवा' शुक्रतारा उगता है जो कि सबेरा होने की सूचना देता है। यह तारा ब्रह्ममुहूर्त में उदय होता है इसे प्रभाततारा भी कहा जाता है। फिर 'झुकमुको' होता है जब कुछ दूर का नजर आने लगता है उसके बाद 'भुनसारा' हो जाता है। चिड़ियाँ बोलने लगतीं हैं। पूरब की ओर कुछ उजास दिखने लगता है तब भोर हो जाती है। प्रभात या उजेला हो जाता है। 'पौ फटने' के साथ आकाश में प्रकाश की हल्की पीली आभा, चहुँदिश फैलने लगती है। सबेरा हुआ, प्रत्यूष बेला आ गयी। 'दिनऊगे' सूर्योदय का समय ब्रह्म बेला या उषाकाल कहा जाता है। दिन उगने के बाद जब सूर्य ऊपर चढ़ जाता है 'दिनचढ़े बेला' कहते है और एक पहर बीतने पर 'दुफरिया' होने लग जाती है। बारह बजते बजते या जब सूर्य ठीक ऊपर आ जाता है तो 'दुफरिया खड़ी' हो जाती है। ग्रीष्म ऋतु की खरी भरी दुफेरी का समय टीकाटीक दुफरिया का है। जब गर्मी बहुत तेज व असहृय हो जाती है। तो उसे 'चिल्लाटे की दुफरिया' कहते हैं। दुपहरी ढलते ही 'तिपहरी' शुरू हो जाती है। जिसे 'अथोली' जोर कहते हैं। इसके बाद 'दिनलौटे' का समय प्रारंभ होता है।

बुंदेली में सन्ध्या की प्रक्रिया काफी लम्बी है। दिन का चौथा पहर दिनढलानी बेला, है। 'लौंलईयाँ' सूर्यास्त या अंधकार होने के कुछ पहले का समय है जब आकाश में प्रकाश की हल्की सी लाली से सरोबार हो जाती है। 'झुटपुटौ बेला' झुकमुक करते करते डूब जाती है। सूर्य छिप जाता है और 'झुटपुट' होने लगता है। 'अंथऊ की बेरा' जैन लोगों के भोजन का समय है। दिन डूबे 'दीयाबत्ती वेरा' का शुभारंभ होता है इसके बाद 'बियारी की बेरा'- रात्रि के भोजन का समय होता है। तारागण दिखाई देने लगते है 'गईरातै' रात क्रमशः गहराती है। 'रातभींजै' में रात भीगने लगती है। गाँवों में पहले पहर के बाद सोता पड़ जाता है। 'मछिरूया धुंधरियारों' अंधकार बढ़ता है। 'सूता पड़ानी' समय के बाद दीये गुल हो जाते हैं रात सॉय-सॉय करने लगती है। एकाध जगह दरवाजे पर लालटेन भुकभुकाती रहती है। आधीरात या 'निशीथ बेला' का बोध तंत्र मंत्र, चोरी करने व जगाने वालों को ही अधिक होता है। रात्रि के तीन बजे 'भुंसारी रात' का समय है इसके कुछ समय बाद 'दिखा दिखौ' प्रारंभ होता है।

बुंदेलखण्डवासियों के लिए ऋतु चक्र का विशेष महत्व है। वर्ष का पहला चौमासा गर्मी (चैत, वैशाख, जेठ, अषाढ़) दूसरा चौमासा वर्षा (सावन भादों, क्वार, कार्तिक) या पावस कहा जाता है जिसे चातुर्मास भी कहा गया है। अन्तिम चौमासा शीतकाल (अगहन, पूस, माघ, फाल्गुन) कहा जाता है। ऋतुओं की गिनती षटऋतु पर आधारित होती है यथा बसन्त, ग्रीष्म, वर्षा, शरद, हेमन्त, और शिशिर। कृषि कार्यों के लिए फसल काटने के लिए चैतुआ अपना विशेष स्थान रखते है। जेठ, अषाढ़, खेत की तैयारी और बागवानी के लिए है। भदवारा वर्षा के लिए कुंआर कार्तिक नयी फसल की तैयरी के लिए प्रसिद्ध है।

बुन्देली के सर्दी, गर्मी एवं बरसात के शब्द सापेक्ष बोध प्रखरता से प्रकट करते है। 'बदरूखो' जब आकाश में बादल छायें हों। 'बदराघाम' बादलों में से फूटती हुई धूप तथा 'थिगराबदरा' बादलों के टुकड़ों का बोध कराते है। 'घामों' के द्वारा धूप का पता लगता है 'घमौरी' वह धूप है जो बुरी न लगे। 'घमौरियां' तेज गर्मी के कारण शरीर पर होने वाली छोटी-छोटी फुन्सियाँ है। कोरोघाम प्रातः व शाम की धूप जो तेज न हो। 'छमछइयाँ धूप' छाँह का मिश्रण है। 'उगार' में आसमान साफ दिखाई देता है। फागुन का जाड़ा (गुलाबी ठण्ड) जिसमें गर्मी सुहावनी लगती है। चैत में चिनचिनाहट शुरू हो जाती है। वैशाख में तपन बढ़ जाती है। लू गरम हवा लपट के झौंको के साथ 'झकर' चलने लगती है। जेठ में सूर्य वृष के हो जाते है तब तापमान चरम सीमा को पहुंच जाता है 'रातै तँवक' उठती है। अषाढ़ में पानी कभी 'झला' एक बार पानी बरस कर रूक जाये के द्वारा, कभी 'पीटा कौ' खूब जोर का पानी 'रिमझिमावौ' हल्की बूंदों वाला पानी बरसना, 'सूदी बूंदन बरसवो' हवा के रूख के बिना पानी गिरना 'झलाझल बरसवो' जमकर पानी

गिरना, 'उरबतियाँ बहवो' इतना पानी बरसना कि मकान की छतों से पानी बह निकले 'पौरा चलबौ' सड़कों व गलियों को भर जाना 'बादर दबबौ' पानी के साथ बादलों का उमड़ना घुमड़ना प्रारंभ हो जाता है। असाढ़ में बारिश के बाद 'उमस' होने लगती है। कुआर का घाम बड़ा तीखा हो जाता है। कार्तिक से 'रातसियराने' लगती है। पूस और माघ में 'चिल्ला जाड़ौ' पड़ता है ठिठुरन होने लगती है। 'सुर्रक' के द्वारा बहुत ठण्डी हवा छेदने लगती है। 'माउठ' जाड़े के दिनों में पानीका बरसना। 'कौर' कुहरा दबना जन जीवन को प्रभावित कर देता है। इस प्रकार बुंदेली शब्दों की न जाने कितनी सूक्ष्म अभिव्यक्तियों से ओतप्रोत विधायें न केवल हमें आश्चर्य चकित करती हैं वरन हमारे ज्ञान तन्तुओं को झकझोरती भी हैं। श्री हरगोविन्द गुप्ता कहा है कि लोकजन पृथिवी पुत्र है। उनके श्रम और तप से पृथिवी ठहरी है। लोकजन की सजगता, पैनी बुद्धि हित-अनहित को ताड़ लेने वाली सहज वृत्ति की जितनी चर्चा की जाये कम है।

- सहायक प्राध्यापक
शास. स्नातको. कन्या
महाविद्यालय, सागर (म.प्र.)

बुंदेली मेला

- नवलकिशोर सोनी 'मायूस'

मँहनन पैलाँ हौन लगत है लगवे की तैयारी।
काँलौ करिये हम बुंदेली मेला की बड़वारी॥

दिनकें खेल कूँद होंवे मँइ हो गम्मत रातन में।
बनवें उतइँ बुंदेली व्यंजन भले लगें खातन में।
बुंदेली पैराव देखकें जाँय सबइ बलिहारी॥

आला लमटेरा होवें मँह गारीं कातिक सैरें।
ढिमरयाइ कछयाइ घँसन है मनकें ऐंनई गैरें॥

अक्क वक्क भूलत हैं सुनकें लेद गोट बिलवारी।
जौंलौ राइ न देखें तौंलौ जीखाँ राइ न आवै।
ढुलक नँगड़िया ठनकत रावै भुन्सारे हो जावै॥

जमे रात असफेरभरे के अनगिनते नर नारी॥
नाँच होत घुरवन को नौंनों और होत है दंगल।
होत रात है हटा नगर में कैउ दिनों लौ मंगल॥

ऐसो लगन लगत है मानौं आ गइ होय दिवारी।
जौन कला खाँ अवलौं ओजू जानत कोउ हतो नाँ।
लोक संस्कृति हती हिरानी हमखाँ हतो पतो नाँ॥

सबरें आज उजागर हो रहँ उनखाँ मिली चिनारी।
बुंदेली दरसन में मिलती बन्न बन्न कीं बातें।
जिनै पड़े से होंय उमंगन की मन में बरसातें॥

कविता लेखक पड़त खिल जावै जियरा की फुलवारी।
हमें सोउ ई दइयाँ भैया मेला देखन जानें।
और उतइँ गौरीशंकर जू के दर्शन कर आनें।

राम करै जा मंसा पूरन हमनें जौन विचारी।
हमइँ उतइँ चण्डी मैया जू के मंदिर हो आहैं।
विपता आन परै कौनँउ तौ छिन में माई मिटा हैं।
हमँन जा मायूस सुनी है मूरत भौंतउ प्यारी॥

कोतवाली के पीछे,
छतरपुर (म.प्र.)

बेड़नी

–मनोहर काजल

'रामकली ने जहर खा लिया तुलसीबारे में, अभी-अभी फगुनिया कह रही थी।' सावित्री ने यह बात देहरी पार करते ही ही बड़ी मामी से कही, जो मुझे कटोरे में सब्जी परोस रही थी।

'क्या....?' आश्चर्य और अविश्वास से मैं एकदम चौंक पड़ा और मेरे हाथ में लिया हुआ रोटी का टुकड़ा थाली में गिर गया, बड़ी मामी का हाथ भी सब्जी परोसते-परोसते झटके से रूक गया। कुछ क्षणों के लिए जैसे एक सनाका-सा खिंच आया था वातावरण में। तभी एक कोने से, अपने झुर्रीदार हाथों से सुमिरनी टटोलती नानी की घरघराती हुई आवाज गूंजी, चुड़ैल को मरना ही था तो समसानघाट में जाकर मरती, कुलच्छनी तुलसीबारे में कहाँ मरने गई। जाते-जाते तुलसीबारा भी भ्रष्ट कर गई।

किसी की मौत... और इस पर भी पवित्रता-अपवित्रता का आरोप..... कैसी भी थी रामकली पर... आगे जैसे मैं कुछ सोच न सका। थाली में हाथ धोकर चौके से बाहर निकल आया।

'अरे लल्ला रोटी तो खाता जा......' पर बड़ी मम्मी की आवाज कहीं बहुत पीछे रह गई थी।

बड़े दरवाजे की देहरी पारकर मेरे कदम तेजी से गाँव के कच्चे रास्ते को पार करते हुए तुलसीबारे की ओर बढ़ते जा रहे थे। पर मन जैसे पंख लगाकर पहले ही तुलसीबारे में पहुंच चुका था। कैसे रामकली ने जहर खाया होगा ? फिर जहर खाया ही क्यों ? और वह भी तुलसीबारे में कितने-कितने चक्कर काट रहा था मन!

'जुहार, राजा भैया।' सामने से किसी ने आदरपूर्वक जुहार किया तो संकोच के साथ मैंने हाथ जोड़ दिए, जहाँ एक तरफ तन-मन को अजीब-सा बड़प्पन घेर लेता, वहीं दूसरी तरफ संकोच की परिधि भी बढ़ जाती। जब भी अपने मामा के गाँव आता हूँ तो गाँव के छोटे-बड़े सभी इसी तरह से आदर देते हैं, बड़े मामा की गाँव में अच्छी इज्जत थी। पर मुझे जब अपने से कोई बड़ा इस तरह आदर देता है, तो बड़ा अजीब-सा लगता है कई लोग तो पैर भी छूने लगते। भांजे को वैसे भी गाँव में बहुत मानते हैं, यहाँ तक कि मेरी बड़ी मामी मेरा नाम नहीं लेती थीं। छोटी मामी शहर की थीं, कभी कभार नाम तो ले लेती तो नानी डांट देती थीं, 'सुसरी, भनेज का नाम लेत है,' और छोटी मामी का शहरी चेहरा एकदम छोटा हो जाता था।

उस समय भी जैसे मैं संकोच में सिमट गया। जुहार करने वाले ने मेरे लिए रास्ता भी छोड़ दिया था और मैं दृष्टि झुकाए ही आगे बढ़ गया। आने वाले के पीछे से आती हुई परछाई सामने ही चली आ रही थी। कोई स्त्री थी। मैंने रास्ता बदलकर ऊपर कीपगडंडी पर पैर रखा ही था कि पीछे से तेज आवाज सुनाई पड़ी, 'ससुर, सामने से ही फेंटा मारत चली आत है। देखत नहीं, कुँवरजूं आ रहें है ?'

उस तेज आवाज से जैसे मैं भी कुछ हड़बड़ा सा गया और दृष्टि सामने आने वाली पर अटक गई। हरे रंग की साड़ी की सुनहरी कौर के बीच से झाँकता हुआ गोरा मुखड़ा, बड़ी-बड़ी, कज्जल-कोर, कंटीली आँखे उनमें से झाँकती हुई चंचल हँसी.... जैसे ही एकबारगी पलक थमी, आँख से अंतर तक वह छवि उतर गई। और पैर की चप्पल पगडंडी पर से खिसक जाने से मैं गिरते गिरते बचा।

भारी-भारी तोड़लों की आवाज के बीच खीं-खीं की एक अल्हड़ तेज हंसी गूंजी, और शर्म से लाल होकर मेरी कनपटी तक झनझना उठी।

'अरे ...रे...रे.... क्या हो गया कुँवरजूं ?' शायद पीछे से उस गाँववाले ने मुझे फिसलते हुए देख लिया था।

'कुछ नहीं। कहकर मैं तेजी से आगे बढ़ गया। पीछे पलटकर देखने को बहुत मन किया पर फजीती में भला कैसे देखता। पर वह हँसी जैसे मेरे तन-मन को झकझोर गई थी।

वह गाँववाला अपनी स्त्री को गरियाने लगा था, 'ससुरी, शरमी नहीं लगत, इस तरह खीं खीं हँसल करके हँसत है ?' पर मैंने जैसे कुछ नहीं सुना। मैं जो बहुत पहले गाँव की चौपाल में नाचने आई उस स्त्री के बारे में सोच रहा था जो बात-बात पर खूब खीं-खीं करके हँसती थी और नाचने पर खूब फिरकनियाँ लगाती थी। न जाने क्यों मुझे वह हँसी बहुत अच्छी लगी थी। वहं हँसी अब भी मेरे दिमाग में गूंज रही थी। मैंने पलटकर देखा, स्त्री पुरुष दोनों की परछाइयाँ काफी दूर निकल गई थीं। अचानक स्त्री ने पलटकर देखा और मैंने

एकदम चेहरा घुमा लिया। लगा, फिर से चप्पल फिसल जाएगी।

अचानक मुझे लगा, वह स्त्री वहीं रामकली ही थी, चौपाल में नाचनेवाली बेड़नी। ठोड़ी पर गुदा हुआ नीले रंग का फूल अभी भी मेरी आँखों की कोरों में चटख रहा था पर काले भौरों जैसे बालों के बीच झाँकती दिप-दिप करती वह मोटी सिंदूर रेख... और गोरे माथे पर बड़ी सी टिकुली... मन में उठते हुए ऊहापोह विचारों को जमीन जैसे कहींभी छूने नहीं दे रही थी।

रामकली तो बेड़नी थी.... बेड़नी नाम मात्र से ही जैसे एक कचोटता हुआ सा जुगुप्सा का भाव मन में भर आया। इसकी शादी कैसे हो गई ?

पहली बार मैंने गाँव में बेड़नी शब्द सुना तो बड़ा अजीब सा लगा, 'भला बेड़नी क्या होती है ?' सुनकर मेरा ममेरा भाई शिब्बू बड़ी जोर से हो-हो करके हँस पड़ा था, 'बेड़नी पतुरिया को कहते हैं, शादी ब्याह में नाचती है। गाँव की चौपाल में उस नाचने वाली को नहीं देखा ?' और शिबू को याद दिलाते ही तीखे नाक नक्शोंवाला गोरा चेहरा मेरी आँखों में तैर आया। बड़ी-बड़ी काली, कंटीली आँखे.... कमल की रेखा जैसे कान तक खिंची हुई थी और झिलमिल करती हुई दंत पंक्तियों के बीच पान की पीक से भरी हुई हँसी.... जब चौपाल के ऊपर गहराते हुए मटमैले अंधेरे में भभकती हुई गैस बत्तियों के प्रकाश में नाचती हुई रामकली को देखा, तो देखता ही रह गया था। इस किशोर उम्र में नारी का सौन्दर्य और आकर्षण कोई विशेष मायने नहीं रखता.... पर इस समय सचमुच मुझे लगा था कि इतनी सुन्दर औरत मैंने कभी नहीं देखी, सिनेमा के पर्दे पर भी नहीं।

परन्तु मेरी उत्सुकता उस समय अजीव सी घृणा में बदल गई जब शिब्बू ने बताया कि यह बेड़नी अच्छी औरतें नहीं होती। वे कभी-कभी अपना शरीर भी बेचती है।

और मैं आश्चर्य से मुंह फाड़े अपलक शिब्बू के खुले मुख की तरफ देखे जा रहा था। क्या सचमुच ऐसी ही होगी ? 'नहीं, रामकली ऐसी हो ही नहीं सकती। अन्दर से कोई अदृश्य सी चोट मेरे अंतर्मन को कचोट रही थी।

इसके बाद जब भी मैंने रामकली को देखा, मन में घृणा के साथ-साथ एक अजीब-सी उत्सुकताा भी बंध जाती।, और एक दिन तो गजब ही हो गया।

खूब रात हो गई थी चौपाल में, खड़े-खड़े मेरे पैर दर्द करने लगे थे। मैं बार-बार शिब्बू से कहता, 'चल, घर चलें। नींद आ रही है।' पर शिब्बू थोड़ी देर और, बस कहकर फिर मशालों की रोशनी में फिरकनियाँ लगाती रामकली को देखने लगता। चकरी की तरह घिन्नाती हुई रामकली की नंगी, गोरी, दूध-सी सफेद कमर और अधखुले टखनों पर सचमुच गैस बत्तियों का पीला प्रकाश सोने के पानी की तरह चिपका लग रहा था, जिसमें न चाहते हुए भी आँखें बार-बार चिपक जातीं और फिर वहांसे जैसे छूट ही नहीं पाती। पर अन्दर ही अन्दर एक अपराध भावनासी सहमी बैठी थी जो रह रहकर रोक बैठती कि मुझे यह सब नहीं देखना, यह सब अच्छा नहीं है.... पर

और अपनी इसी उधेड़बुन के बीच देखा, सलाम बजाती हुई रामकली मेरे बगल में बैठे हुए ठाकुर के पास आई। ठाकुर के हाथ में दस रूपए कड़कता हुआ नोट जो था। आते ही जैसे गजब हो गया, नाचते नाचते रामकली एकदम ठाकुर की गोद में कटे वृक्ष की तरह गिरी और उसने अपने दांतों के बीच दस के नोटस को दबा लिया। ठाकुर जब तक रामकली के मुख पर झुकता, वह बिजली की तरह छिटककर मेरी ओर आ गई। मुझे लगा, कहीं रामकली मेरे ऊपर ही न आ गिरे, मैं इसी डर से पीछे हटा, तब तक रामकली ने चट से मेरे बाएँ गाल को चूमा और हँसती हुई पानी की गोल गोल चक्करदार लहरों की तरह दूर चली गई।

रामकली की इस हरकत से पूरे चौपाल में एक ठहाका गूंज उठा और सबकी दृष्टि मेरे मुख पर आ टिकी। शर्म, खीज और गुस्से से जलती हुई मेरी आँखे जैसे तरतराने को हो आई थीं और मैं सीधा घर भाग गया था। मारे उत्तेजना के उस रात एक क्षण के लिए भी मैं सो नहीं पाया था।

और शिब्बू को तो जैसे मजाक का नुस्खा मिल गया था, ऐ कैसे लगा था रे ? मुझे करती न ऐसा, तो मैं तो.... कहते कहते अजीव सी हँसी हँस उठता हुआ शिब्बू और मुझे उसके टेढ़े जमे हुए सामने के दांत बेहद घिनौने लगने लगते।

आज उन्हीं सब बातों को याद करके न जाने मन कैसा-कैसा हो रहा था। उसी रामकाली ने आज जहर खा लिया था। 'नहीं नहीं।' अनजाने में ही जैसे आत्मा चीखकर प्रताड़ित सी हो उठी।

उस दिन जब पहली बार रामकली के बारे में शिब्बू ने बताया था कि बेड़नी बुरी औरतें होती हैं, तो मैं विश्वास नहीं कर सका था और आत्मा किसी अनजाने दर्द से कचोट उठी थी। आज इसी रामकली के जहर खाने की बात मन प्राणों को

अन्दर तक उकेलती हुई मथ गई थी। बढ़ते हुए कदमों में और तेजी आ गई, मैं दिल्ली से जल्दी तुलसीबारे मैं पहुंचकर रामकली को देखना चाहता था। क्या सचमुच रामकली ने जहर खा लिया है।

आँखों को देखने से क्या मिल जाता है, कोई नहीं जानता, फिर भी कैसी सागर की सी उत्ताल लहर भरती मन प्राणों में, जो किनारा छुए बगैर पीछे नहीं लौटती।

ठीक ऐसे ही तो उस दिन मैं रामकली को देखने गया था, जब पता चला था कि ठाकुर ने कुछ दिन के लिए रामकली को रख लिया है.... एसी बातें जल्दी पता नहीं चलती पर शिब्बू पता नहीं कहाँ से यह सब खबर कर लेता। रामकली के बारे में तो उसे जैसे सबकुछ मालूम था।

ठाकुर की हवोली गाँव की सबसे बड़ी हवेली थी। गाँव का सबसे धनी मानी किसान वहीं था। उसी हवेली का एक हिस्सा एक दम अलगे थलग था जो कंचन पोखरा की कगार पर बना था। उसे सब रंग महल कहते थे। बाहर से एकदम टूट फूट गई थी इमारत, पर भीतर से अभी भी बहुत मजबूत थी। उसी में रामकली का डेरा था।

जब मैं कंचन पोखरा के किनारे पहुंचातो रामकली तालाब में डुबकी लगाकर लोटे से सूर्य भगवान को अर्ध्य दे रही थी। एकदम दूध सी उजली, सफेद, गीली साड़ी में लिपटी हुई गुलावी देहयष्टि और कमर से नीचे तक लहराते हुए एकदम भौंर जैसे काले बाल....।

कुछ क्षणों के लिए जैसी मेरी आँखे और कैशार्य की देहरी को लाँघता हुआ मन उस सद्य: स्नात संगमरमर की सी भव्य देहयष्टि में चिपककर रह गया था।

अव मैं चलता हूं, गोवर्धन से जरूर कह देना।

अरे बबुआ, दूध तो पीते जाओ। मैं तुम्हारे लिए दूध ही लेने तो अंदर गई थी।

'मैं दूध तो पीता हीनहीं'

'तो रूकों, जैं जल्दी से चाय बनाकर लाती हूँ।' रामकली जल्दी से फिर भीतर जाने लगी पर मैंने रोक दिया, 'नहीं , नहीं' रहने दो। मैं चाय भी नहीं पीता।' और सच में मुझे चाय का दूध जरा भी अच्छा नहीं लगता था। घर में सभी जानते थे कि दूध देखकर ही मुझे मितली आने लगती थी।

काली, भरी-भरी आँखें एक क्षण के लिए जैसे अविश्वास से मेरे ऊपर टिकी रहीं.... फिर उनमें अचानक ही जलजला सा आ गया।

'साफ-साफ यह क्यों नहीं कहते बबुआ कि मैं छूत हूं, नीच हूं, बेड़नी हूं, इसलिए तुम मेरे हाथ की चाय और दूध नहीं पी सकते। 'कहते-कहते रामकली की तीखी आवाज अपने ही तीखेपन से टूटती हुई भरभरा उठी।

'नहीं, नहीं यह बात नहीं है।' रामकली के इस आरोप और अचानक ही उसके बदले हुए रूप को देखकर सचमुच मैं एकदम अचकसा सा गया था। कभी स्वप्न में भी कल्पना नहीं की थी इस आरोप की, पर रामकली कहती ही गई, 'तुम क्या बबुआ, पूरा गाँव ही छूत समझता है। जब मैं सचमुच पतुरिया थी, तो यही गाँव वाले मेरे तलुवे चाटते थे। यही तुम्हारे गाँव का सरपंच .... तुम्हारे डेढ़ हाथ का तिलक लगाने वाला मामा.... सब मेरी देहरी पर नाक रगड़ते थे औरआज जब मैं एक का हाथ पकड़कर सुहागिन बन गई तो सब थू थू करने लगे। आज भी सब यही घात लगाए हैं कि मैं वही बेड़नी बन जाऊं, वही कूल्हे मटकाकर उनकी हवस पूरी करू। पर बबुआ, तुम देख लेना.... मैं मर जाऊंगी, पर झुकूंगी नहीं, यही गोवर्धन, जिसकी आशनाई की दुहाई पर उसके नाम का सिंदूर भरने के लिए मैंने अपनी जान दाँव पर लगा दी, एक दिन मेरे नाम को रोएगा, जो आज गाँववालों के बहकावें में आकर मुझे जलील करता है, मुझे अभी बेड़नी ही समझता है।'

रामकली का मुख आग और आँसुओं की उमस में जैसे झुलस रहा था, और मैं मोहासन्न सी, अपलक दृष्टि से उसकी तरफ देखे जा रहा था। आखिर रामकली यह सब मुझे क्यों सुना रही थी? मैं तो एकदम अनभिज्ञ था इन सारी बातों से ? फिर बड़े मामा पर इतना बड़ा आरोप ?.... भीतर ही भीतर मन जैसे अव्यक्त कटुता से छटपटा उठा, पर अचानक ही शिब्बू की बातें मेरे कान में गूंज गई, 'रामकली से प्रायश्चित करवाने में ठाकुर और बप्पा की मिलीभगत थी। तो क्या सचमुच ?

मैंने रामकली की ओर देखा, वह भी मेरी ही ओर देख रही थी। एकाएक उसकी आँसुओं से झिलमिलाती हुई पलकें हल्के से काँपी, 'बबुआ, क्या तुम भी यह समझते हो कि मैं वही पहले जैसी हूँ जरा भी नहीं बदली ?'

और मुझे लगा, अब मैं अपने आप को रोक नहीं पाऊंगा, मेरे मन का जन्मतात संकोच एकदम तिरोहित हो चुका था। शायद इसी संकोच के कारण मैं अब तक अपने आपको छलता रहा था। अब मैं छोटा भी नहीं था जो रामकली की दृष्टि पड़ते ही भाग जाता। अब मैं.... और मैं एकदम बोल पड़ा, मन की जैसे समस्त भावनाएँ तरंगित हो उठी थी मेरे स्वर से। मैं तो

तुम्हें पहले भी ऐसा नहीं समझता था। लोग कहते थे तो विश्वास नहीं होता था। पहले जानता भी तो कुछ नहीं था। पर आज जानकर भी मन में यही विश्वास है कि तुम जरा भी वैसी नहीं हो जैसा कि लोग तुम्हारी सिंदूर भरी माँग और भली लगती है। तुम्हारी बच्ची तो सचमुच बहुत प्यारी है। मुझे लगा जैसा मेरा स्वर जरूरत से ज्यादा भावुक हो आया था, पर मैं रूका नहीं कहता गया। 'चाय, दूध मैं कुछ भी नहीं पीता, मुझे जरा भी अच्छी नहीं लगता। मना करने का मेरा कोई और अर्थ नहीं था..... हाँ यदि तुम्हें मेरी बात पर विश्वास न हो' तो एक गिलास पानी दे दो। जरूर पी लूंगा। मुझे प्यास भी लगी है।

रामकली वैसी ही जलजलाती हुई आँखों से मेरी तरफ देखती रही, न जाने क्या देख रही थी कि अचानक ही अछोर तरलता से भरी आँखें एक अजीब सी विद्रुप हंसी से भर उठीं,

'बबुआ, तुम मेरे हाथ का पानी भी न पियो तो अच्छा है। मुझे आज भी वह दिन याद है जब तुम छोटे थे और तुमने मेरा दिया हुआ आम नहीं लिया था। आज पानी देकर तुम्हारा धरम नहीं बिगाड़ूंगी.... और हाँ, तुम मुझे अच्छा समझते रहे, इसके लिए जिन्दगी भर तुम्हारी ऋणी रहूंगी।' कहते-कहते झटके से रामकली ने एक हाथ से अपनी बच्ची को गोद में उठा लिया और दरवाजा भेड़ती हुई अंदर चली गई।

तरल आँसुओं से झुलती हुई इस एकदम अनजान और अपरिचित विद्रुप हँसी ने अपमान और ग्लानि से पत्थर की तरह जड़ बना दिया था.... अंतर में जैसे सब कुछ सूख गया था... भेड़े हुए दरवाजे की सांकल अभी भी हिल रही थी। वस्तुस्थिति का बोध होते ही मैंने आवाज देना चाही, पर सूखे होंठों से कुछ नहीं फूटा। मन में आया सांकल खटखटाऊं, पर वह भी न हो सका वापस घर लौट आया।

आज फिर उसे देखने जा रहा हूं....

तुलसी बांर पर गाँव के कई लोग इकट्ठा हो आए थे। सीढ़ियों के पास कुछ औरतें भी बड़े-बड़े घूंघट किए आपस में खुसपुसा रही थीं। मुझे देखते ही वे एक तरफ हट गईं। मैं जल्दी से सीढ़ियाँ चढ़ गया। देखा, रामकली मंदिर की देहरी पर सिर रखे अस्त व्यस्त सी पड़ी थी। होंठों के किनारोंसे सफेद झाग निकल रहा था। बंद पलकें रह रहकर सिहर उठती थीं।

मेरे आ जाने से पास में खड़े गाँव वाले भी जैसे चुप से हो गए। गोवर्धन रामकली के पैरों की तरफ चुपचाप खड़ा था। मुझे देखने के लिए उसकी दृष्टि उठी। फिर गिर गई। उसमें कहीं कुछ भी नहीं था। सब एकदम चुपचाप खड़े थे और रामकली सबकी आँखों के सामने दम तोड़ रही थी।

एक कुत्ते का पिल्ला भी यदि इंसान की आँखों के आगे दम तोड़ता है तो उन आँखों में उसकी मौत के दर्द की टीस उभरती है, पर यहां तो इंसानों के बीच एक इंसान दम तोड़ रहा था और सब तमाशाई की तरह चुपचाप उसे मरते देख रहे थे।

अंदर-ही अंदर उफनते हुए आक्रोश को दबाकर मैंने चारों तरफ एक दृष्टि फेंकी, लगा, जैसे सब चेहरे बस एक ही साजिश में शामिल हैं। सब जानते हैं कि रामकली मर जाए। मुंह से भले ही कोई कुछ न कह रहा हो.... पर सभी के आशंकित और घृणा से सहमे हुए चेहरों पर यही लिखा हुआ था।

पर मेरा अंतर्मन चीख उठा। नहीं रामकली इस साजिश का शिकार नहीं बनेगी। दृढ़ निश्चय और अनजाने आवेश से मेरा पूरा शरीर ऐंठ आया था। अपने पर भरसक काबू रखते हुए मैं गोवर्धन से बोल पड़ा, मुंह क्या देख रहे हो ? जल्दी जाकर..... वैद्यजी को बुला लाओ। अभी कुछ नहीं बिगड़ा है, सब ठीक हो जाएगा।

गोवर्धन जैसे नींद से जागा, ठीक है कुंवरजू, मैं अभी जाता हूँ। तभी रामकली ने क्षीण कराह के साथ आँखें खोली और दृष्टि मिलते ही झाग से सने हुए होंठ थरथराए, बबुआ, तुम ? 'टूटते हुए स्वर में अविश्वास और उत्सुकता का मिला जुला भाव था। मुझे लगा रामकली बच जाएगी।

'जल्दी जाओ, गोवर्धन'! मैंने फिर गोवर्धन को झकझोरा, तब तक रामकली की कमजोर आवाज फूटी, 'अब कोई जरूरत' नहीं है बबुआ, बसस गाही-बेगाही की बेला है।' टूटती हुई आवाज लटपटाने लगी थी, बबुआ, मेरे मरद से कह देना मुझे सुहाग की चूनर में लपेटकर दागे, ताकि अगले जनम में सुहागिनी ही बनूं।' पता नहीं कैसी विकल व्यथा भरी थी रामकली की आवाज में कि मेरी आँखों की कोरें गर्म आंसुओं से तरतरा उठीं। गोवर्धन भी जैसे पिघल आया था। 'कैसी बात करती है तू, तुझे कुछ नहीं होगा। अभी हरिया वैद्यजी को लेकर आता है। तू इस जनम में भी सुहागिनी ही कहलाएगी। मैंने तेरी माँग में सिंदूर भरा है, राख नहीं।' और बच्चों की तरह विहल होकर गोवर्धन ने रामकली के सिर को अपनी गोद में रख लिया और गमछे से उसके मुंह का झाग पोंछले लगा। मौत से रिश्ते टूटते ही ज्यादा हैं पर कभी कभी मौत टूटे हुए रिश्तों को जोड़ भी जाती है, और ऐसे रिश्ते कभी नहीं टूटते। इंसान

चला जाता है पर रिश्तों का अहसास जिन्दा रहता है।

एकाएक इन्हीं आत्मीय क्षणों के बीच रामकली ने मेरी तरफ देखा.... निमिष मात्र के लिए जैसे सबकुछ सहम-सा गया। भरी-भरी काली आँखों की कोरों में न जाने क्या हुलस-हुलसकर फूटने को छटपटा रहा था। अंतरंग करूणा-जनित व्यथा .... आत्मा प्रतारणा का मूक हाहाकार....

न जाने क्या था वह... मैं कुछ नहीं समझ पाया, और दूसरे ही क्षण एक क्षीण सी तरल हंसी पतले सिहरते हुए होंठों पर बिखर गई, मानो कह रही हो- ' मैंने कहा था न बबुआ... मैं मर जाऊंगी पर झुकूंगी नहीं ..... और....'

और सचमुच रामकली झुकी नहीं, बल्किजीत गई.... गाँववालों ने तुलसीबारे का नाम ही बदल कर, बेड़नीबारा रख दिया। मंदिर के सामने ही एक पक्का चबूतरा बन गया है। मंदिर में जल ढारने के लिए आई हुई गाँव की बहू-बेटियों बेड़नी के चबूतरे पर भी जल ढारती हैं, दीप जलाती हैं, और अखंड सुहाग की मनौती और कामना करती हैं। पता नहीं कितनी लाल चूनरों के टुकड़े बंधे हुए हैं पूरी हुई मनौतियों के रूप में।

शायद रामकली की आत्मा भी तर गई होगी।

पर मेरे मन में आज भी वहीं काली आँखों की हुलस-हुलसकर फूटती हुई छटपटाहट भरी है। जब भी गाँव आता हूँ तो कंचन पोखरे पर सफेद कमलों के बीच किलोल करती हुई बटकुइयों को जरूर देखने जाता हूँ। क्रीं...क्रीं... की आकुलक करूण पुकार जैसे मेरी छपछपाहट में समाहित हो उठती है. और मेरी आँखें सुनहरी बटकुइयों के किसी जोड़े की तलाश करती हैं। शायद अब उसका जोड़ा बन गया होगा.....

और लगता है, जब तक मैं इस जोड़े को देख नहीं लूंगा, मेरा मन ऐसे हीअशांत रहेगा... क्यों....?

बहुत सवालों का कोई जवाब जो नहीं होता।

-- पाठक कालोनी, दमोह (म.प्र.)

कलकल बहे है पिया नदिया सुनार

सावन का मौसम है छाई बहार,
धरती करै है पिया, देखो श्रृंगार।
खेतों-खलियानों नें, पुष्पित-उद्यानों नें,
गीत मधुर गाये हें, भंवरे-मस्तानों नें।
बलखाए-कश्ती सो खेवे मलहार,
कलकल बहे है पिया, नदिया सुनार।
अमवा के बागों में रेशम के धागों में,
झूला-झुलाए प्रीत, प्रीतम के रागों में।
मनमोही-मतवाली बहक-बयार,
मनवा सुहाये पिया, फूलों के हार।
सावन का मौसम है... ।
यौवन के मेले हें, छैला अलबेले हें,
उर-मन हर्षाते-स्वप्नों के रेले हें।
सुन्दर-सुवास, देखो हो गये सुवार,
नयनों ने खोले पिया, स्वप्नों के द्वार।
सावन का मौसम है ...।

-उमेश विश्वकर्मा 'आहत'
रमा कवि वार्ड, हटा

लोग करें सब हाँसी

-प्रेमशंकर ताम्रकार 'घायल'

देखो तो जरा घूरकें, सुख करमन में नईयाँ।
वे तो बैठीं बिड़ी बना रईं, फिल्म देख रये सैंया॥
जा चौरासी कैसें कट है, घर में दानों नईयाँ॥
मैं तो बी.ए.पास धरी हों, वे हैं चौथी फेल।
सूदे सादे लगें बिजूके, जे करमन के खेल॥
ठाँड़े ठाँड़े घूमत बलमा, ठाँड़े ठाँड़े खावें।
भोपाली से डोलत आवें, साथ कछू नईं लावें॥
भाँज भाँज सिमइयाँ रर दईं लेन लगी हर साले।
कपड़ा उन्ना फटे चौंथरा, कैसें उनखों पालें॥
एक पोलका नौं नौं छेदे, पेरें, घुतिया उगरारी।
मोरी टेर सुनो तुम मोहन, हे कृष्ण मुरारी॥
मैं तो सूक टटेरो हो गई, वे परें परें अर्रावें।
पौआ खों हांतई न लगावें, पूरी बोतल सटकावें॥
मेला देखन संगे ले गये, भरो बुन्देली मेला।
बरन बरन की लगी दुकानें, पास में नईंयाँ धेला॥
लरका हरसो फुग्गा चाने ''घायल'' बिद गई दांति।
मार शरम लजवन्ती हो गई, लोग करें सब हाँसी॥

-सेवा केन्द्र, बड़ा बाजार
हटा, दमोह

हटा नगर के प्रवेशद्वार

–माखन लाल नेमा

हटा नगर की स्थिति अपने आप में अनुपम है सुनार नदी के किनारे पर बसा हुआ यह लघुकाय नगर काशी के घाटों से होड़ करता है इसी लिए इसे ''उप काशी'' कहा गया है। घाटों पर बने हुए देव मंदिर इस नगर के आध्यात्मिक गौरव को सहज आभासित करते हैं इस नगर के सौन्दर्य को निहारने के लिए जो जन हटा में प्रवेश करते हैं उनका स्वागत करने के लिए हटा के विभिन्न प्रवेश द्वारों पर यहां की पूर्व समाज सेवकों की उपस्थिति उनके स्वागत के लिए तैयार प्रतिभात होती हैं इन समाज सेवकों ने हटा नगर के लिए क्षमतानुसार त्याग किया है उनके त्याग को प्रेरणा स्रोत बनाते हुए उनकी स्मृति में कु. पुष्पेन्द्र जी हजारी की सत प्रेरणा से नगर परिषद हटा में विभिन्न प्रकार के प्रवेश स्थल (मार्ग) पर विभिन्न समाज सेविओं का स्मरण कर उनके नाम के प्रवेश द्वार बनाये गये हैं। इस कार्य के लिए कु. (पुष्पेन्द्र सिंह हजारी) नि:संदेह प्रशंसा के पात्र हैं, क्योंकि उन्हें बिना किसी राजनैतिक दल, सम्प्रदाय, जाति का भेदभाव किये बिना उनकी नगर की दी सेवाओं के आधार पर उनका पुण्य स्मरण कर प्रवेश द्वारों का नामकरण उनके नामों पर करके उनके प्रति समाज की कृतज्ञता ज्ञापित की है, क्योंकि नगर परिषद एक सामाजिक निकाय है। नगर पालिका द्वारा हटा में आठ प्रवेश द्वार बनायें गये हैं।

1. दमोह नाका- दमोह से पन्ना जाने वाले मार्ग पर प्रथम द्वार ''धर्मेन्द्र सिंह हजारी स्मृति द्वार'' हैं। यह द्वार श्री धर्मेन्द्र सिंह हजारी के नाम पर रखा गया हैं वे इस नगर के मालगुजार रहे हैं उनके पूर्वजों ने देव श्री गौरीशंकर के मंदिर की स्थापना की थी, जो कि जनजन की आस्था का केन्द्र है उन्होंने अनेक मंदिरों की स्थापना की एवं सरंक्षण किया। नगर पालिका का परिपद हटा के सन 1956 में नगर पालिका अध्यक्ष भी रहे हैं इस प्रवेश द्वार पर देव श्री गौरीशंकर मंदिर की दूरी 1.5 कि.मी. पन्ना 98 कि.मी., चंडी मंदिर 1.5 कि.मी. कुण्डलपुर 22 कि.मी. दर्शाया गया है। राजशाही परम्पराओं से घने जुड़े श्री हजारी अपने विनम्र सौम्य, सरल, सहज उपलब्धता के मानवीय गुणों के लिए हटा नगर के इतिहास में अविस्मरणीय रहेंगे।

2. ''राघवेन्द्र सिंह हजारी स्मृति द्वार'' दमोह पन्ना मार्ग पर गंगाझिरीया के पास स्थित है। हटा आगमन नगर पलिका परिपद आपका हार्दिक स्वागत करती हैं।

स्व. श्री राघवेन्द्र सिंह हजारी हटा की राजनैतिक पीढ़ी के अग्रणी प्रतिनिधि के रूप में स्व. हजारी की संघर्ष गाथा रचनात्मक अवदान। साहित्यानुरागिता, प्रभावशाली सम्मोहक व्यक्ति हमेशा याद रखे जावेंगे। बुंदेली लोक कला संस्कृति और संगीत भाषा के पुनरूत्थान के सद् प्रयासों का प्रतिसाद विगत वर्षो से सफल बुंदेली मेला आयोजन की सद् प्रेरणा अनुज पुष्पेन्द्र सिंह हजारी को अपने अग्रज राघवेन्द्र सिंह से ही प्राप्त हुई। हटा का जवाहर नवोदय विद्यालय और स्नातक महाविद्यालय भी स्व. राघवेन्द्र सिंह की देन है आप 59 से 70 पुन: 75 से 79 तृतीय बार 84 से 85 तक नगर पालिका के अध्यक्ष पर रहे।

3. ''रामकृष्ण श्रीवास्तव स्मृतिद्वार'' अंधियारे बगीचा में स्थित है।

स्व. श्री रामकृष्ण श्रीवास्तव एडवोकेट एक कुशल विधि वेता के नाते प्रशासनिक, समाजिक, राजनैतिक हल्कों में अपनी अद्भुत एवं अमिर छाप छोड़ने वाले व्यक्तित्व के धनी इंसान के रूप में सुविख्यात रहे नगर पालिका अध्यक्ष के रूप में उन्होंने अपनी कुशाल प्रशासक की छवि जीवंत की। आप 24/7/54 से 23/3/56 फिर 1/6/59 से 8/8/61 तक नगर पालिका के अध्यक्ष रहे।

4. **''आचार्य श्री विद्या सागर महाराज द्वार''** जनकपुर में स्थित है। संत शिरोमणि आचार्य श्री विद्या सागर जी का जन्म स्थान सदलगा (बेलगाम) कर्नाटक 10 अक्टूबर 46 शरद पूर्णिमा उनकी शिक्षा हाईस्कूल मराठी माध्यम कन्नड़ मुनि दीक्षा 30 जून 62 आचार्य पद दीक्षा 21 नम्बर 72 नसीरा बाद राजस्थान विश्व बन्दनीय दिगम्बर जैन संत आचार्य श्री विद्या सागर जी महाराज का बुंदेल खंड की पावन धारा सन 76 में कुंडलपुर आगमन हुआ यहां पर चातुर्मास उपरांत प्रथम द्वार हटा आगम हुआ हटा प्रवास के दौरान स्वचरित समणसुत्तम (जैनगीत) का प्रथम वार 24 घंटे का अखंड पाठ का शुभारंभ आचार्य श्री द्वारा हुआ सन 76 से 81 तक आचार्य श्री का अनेक बार हटा आगमन हुआ और महिना दो महिना तक लगातार प्रवास में क्षेत्र की जनता को सानिध्य एवं आत्म बोध प्राप्त हुआ।

5. **''लटोरीलाल मोदी स्मृति द्वार''** हटा स्नेह मार्ग पर स्थित है। स्व. श्री मान लटोरीलाल मोदी हटा तहसील के जवाहर वार्ड के निवासी है श्री मोदी नगर पालिका हटा में सन 69 से 79 तक लोकप्रिय पार्षद रहे। आपके द्वारा विभिन्न समितियों का सफल संचालन किया। आप जिला कांग्रेस कमेटी के जिला उपाध्यक्ष पद पर रहे। कौशलाधीरा मंदिर विकास कमेटी के अध्यक्ष कौलाधीश कीर्तन मंडल में अध्यक्ष थे।

स्व. श्री मोदी जी ने प्राथ. शाला वजरिया वोर्ड शाला में मंच वनवाया जिसमें उनका नाम अंकित हैं।

6. **''नाथूराम सराफ स्मृति द्वार''** पेट्रोल पंप से तिगड्डा मार्ग पर स्थित हैं।

स्व. नाथूराम जी सराफ समाज के प्रतिष्ठित व्यक्ति थे। सादा जीवन उच्चवविचार में विश्वास करते थे नगर पालिका हटा में आप हंसमुख, लोक प्रिय, समाज सेवी व्यक्ति रहे।

7. **''पं. गया प्रसाद पांडे स्मृति द्वार''** हटा बटिया गढ़ मार्ग पर स्थित हैं।

पं. स्व. श्री गया प्रसाद पांडे स्वतंत्रता सेनानी रहे तथा 57 से 62 तक हटा विधान सभा क्षेत्र के कांग्रेस के विधायक रहे। मध्यम वर्गीय जीवन जीने वाले स्व. पांडे जी निराभिमानी व्यक्ति थे। उन्होंने अपना सारा जीवन अभावों में स्वाभिमान पूर्वक बिताया। वे एक सुविख्यात ज्योतिर्विद और कर्मकांडी पंडित थे।

8. **''स्व. बाबूलाल बजाज स्मृतिद्वार''** स्व. श्री बाबूलाल जी बजाज कमेठ जुझारू नेता थे। वे सन 1954 में प्रथम नगर पालिका अध्यक्ष रहे। तत्पश्चात कई वर्षों तक जनपद सभा के सभापति रहे। जिला कांग्रेस अध्यक्ष 64 से 66 तक थे। वे गौरीशंकर मंदिर ट्रस्ट के आजीवन सविच रहे शिक्षा प्राप्त जगत को उन्होंने जनपद सभा के माध्यम से 99 एकड़ जमीन भवनों एवं खेल मैदानों के लिए क्रय करके दी। यह उनका हटा नगर के शैक्षणिक उत्थान के लिए उत्कृष्ट प्रयास था। अग्रवाल महासभा का प्र.अधिवेशन 1936 एवं द्वितीय अधिवेशन 56 में श्री बाबूलाल बजाज की संरक्षण एवं नेतृत्व में सम्पन्न हुआ उनकी सामाजिक सेवाओं को देखते हुए नगर परिपद हटाने चंडी जी से बजरिया जाने वाले मार्ग पर श्री बाबूलाल बजाज स्मृतिद्वारा निर्मित किया है।

- बड़ा बाजार,
हटा-दमोह (म.प्र.)

केशव की समकालीन परिस्थियाँ और उनकी कलम

-डॉ. कैलाश बिहारी द्विवेदी

आचार्य केशव दास के साहित्य पर उदय के समय साहित्य जगत में जो परिस्थितियाँ थे, जैसे एक संस्कृत की काव्य परम्परा का भाषा अर्थात हिन्दी में चलन प्रारंभ हो चुका था। दूसरे कृष्ण काव्य प्रभूत मात्रा में लिखा जा रहा था और तीसरे राम भक्ति की शाखा में तुलसी जैसे दिग्गज राम के चरित्र नायक बनाकर रामचरित्र मानस की रचना कर चुके थे।

इन परिस्थितियों का दबाव केशव के मन मस्तिष्क पर अवश्य रहा होगा। परिणाम स्वरूप उन्होंने सभी दिशाओं में लक्ष्य निर्धारित कर उनको प्राप्त करने के लिए कलम चला दी। उनके सभी लक्ष्यों पर एक संक्षिप्त दृष्टिपात से प्रसंग अधिक स्पष्ट हो सकेगा।

केशवदास जी के भाषा में काव्याचार्य के रूप में अभिर्भाव के सम्बंध में आचार्य रामचन्द्र शुक्ल ने लिखा है-

''केशवदास के पहले संवत् 1598 में कृपाराम थोड़ा रस निरूपण कर चुके थे। इसी समय चरखारी के मोहन लाल मिश्र ने श्रृंगार सागर नामक एक ग्रंथ श्रृंगार संबंधी लिखा। नरहरि कवि के साथ अकबरी दरबार में जाने वाले करनेश कवि ने करणाभरण श्रुतिभूषण और भूपभूषण तीन ग्रंथ अलंकार संबंधी लिखे, पर अब तक किसी कवि ने संस्कृत साहित्य शास्त्र में निरूपित काव्यांगों का पूरा परिचय नहीं कराया था। यह काम केशवदास जी ने किया।

वे काव्य में अलंकार का स्थान प्रधान समझनेक वाले चमत्कारी कवि थे, जैसा कि उन्होंने स्वयं कहा है।

''जदपि सुजाति सुलक्षिनी सुबरन सरस सुव्रत।
भूषन बिनु न बिराजयी कविता, वनिता मित्त॥''

अपनी इसी मनोवृत्ति के कारण उन्होंने भाभह, उद्‌भट और दण्डी आदि प्राचीन आचार्यों का अनुसरण किया जो रस, रीति आदि सब कुछ अलंकार के अंतर्गत ही लेते थे, साहित्य शास्त्र को अधिक व्यवस्थित और समुन्नत रूप में लेने वाले मम्मट, आनन्दवर्धनाचार्य और विश्वनाथ का नहीं। (हि.सा.का इति. आचार्य रामचन्द्र शुक्ल 16वां संस्करण पृष्ठ 200)

''केशवदास जी संस्कृत के पण्डित थे अतः शास्त्रीय पद्धति से साहित्य चर्चा का प्रचार भाषा में पूर्ण रूप से करने की इच्छा उनके लिए स्वाभाविक थी।'' (वही पृष्ठ वही)

भाषा अर्थात हिन्दी में प्रचारित करने के पीछे संभव है उनकी यह भावना रही हो कि उनके पूर्ववर्ती जायस, कबीर सूरदास, अष्टछाप के कवि तथा लगभग समकालीन कवि रहीम और तुलसीदास जी ने भाषा में लिखकर लोकप्रिय अर्जित कर ली थी। इस कारण उनके मन में एक स्पर्धात्मक भावना भी रही हो सकती है। इसलिए उन्होंने अपने लेखन के लिए भाषा (हिन्दी) को अपनाया। रामचंद्रिका में अपने वंश परिचय में .... उपज्यौ तिनके मंदगति सुत कवि केशवदास, रामचंद्र की चंद्रिका भाषा करी प्रकाश। इसी प्रकार कविप्रिया में भी कहा है ''भाषा बोल न जानि है जिनके कुल के दास। भाषा कवि भी मंदगति तिंह कुल केशवदास॥''

उपर्युक्त पंक्तियों में अपने आप को मंदमति कहकर विनम्रता का परिचय तो दिया ही है, लेकिन इसी शब्द से उनके मन का खेद भी स्पष्ट होता है और यह भी स्पष्ट होता है कि भाषा (हिन्दी) में लिखाना मंदगति लोगों का काम है।

दूसरी स्थिति यह थी कि उस समय के और थोड़े से पूर्वकाल के सभी कवि रामभक्ति और कृष्ण भक्ति समंबी काव्य, भाषा में लिख रहे थे, जिनमें कृष्ण भक्ति में सूरदास जी और रामभक्ति में तुलसीदास जी सिरमौर थे, जो अपने जीवनकाल में ही राजदरबारों में नहीं बल्कि जन जन के हृदय में पैठ कर अपार श्रद्धा और लोकप्रियता अर्जित कर चुक थे।

इसलिए संभव है कि उनके मन में भी इन भक्त कवियों के आराध्य कृष्ण और राम को भी अपने काव्य का वर्ण्यविषय बनाने की इच्छा जागृत हुई हो।

केशवदास जी ने रसिकप्रिया में जिस तरह श्रृंगार रस से ओतप्रोत रचनाओं में नायक के रूप में श्री कृष्ण का उपयोग किया, जिसमें सूरदास की तरह भक्ति या समर्पण का नितांत अभाव है। उसमें श्री कृष्ण की रसिकता को ही मुख्य आधार मानकर अपने मन की संपूर्ण रसिकता को उड़ेल दिया है।

केशवदास जी तत्कालीन सभी स्थितियों पर कलम चलाना चाहते थे। इसलिए उन्होंने राम को वर्ण्यविषय के रूप में लेका रामचंद्रिका का सम्वत 1658 में प्रणयन किया। रामचंद्रिका के प्रारंभ में ही उन्होंने कह दिया कि-

''जागत जाकी ज्योति जग एक रूप स्वच्छंद।
रामचंद्र की चंद्रिका वर्णत हों बहुछंद॥''

उपर्युक्त दोहे से दो बातें स्पष्ट होती हैं। पहली यह कि

कवि राम के यश और वैभव का वर्णन करना चाहता है और दूसरी यह कि वर्णन के माध्यम से कवि अपना छंदशास्त्रीय उच्चकोटि का ज्ञान भी प्रदर्शित करना चाहता है। इसी कारण रामचंद्रिका में प्रचलित एवं अप्रचलित अनेकानेक छंदों का प्रयोग किया गया। इसी के साथ रामचंद्रिका को महाकाव्य का रूप देकर महाकवि कहलाने की पात्रता भी अर्जित करना चाहता था।

महाकाव्य के लक्षणों में नवरसों का प्रयोग भी आवश्यक होता है किन्तु रामचंद्रिका में रामचरित संबंधी मर्मस्पर्शी प्रकरणों जैसे दशरथ प्राण त्याग, राम वन गमन, चित्रकूट में राम भरत मिलाप, सबरी का आतिथ्य, सीता हरण और शक्ति लगने पर लक्ष्मण मूर्च्छा जैसे कारूणिक प्रसंगों में केशवदास जी इन स्थलों का या तो सांकेतिक शैली में या फिर अपने ही ढंग से वर्णन करके नवरस प्रयोग की परम्परा की निर्वाह मात्र किया है तथा वस्तु वर्णन जैसे सरयू वर्णन, दशरथ के हाथी, बाग तथा अवधपुरी, दशरथ की राज्यसभा, विश्वामित्र आश्रम, पंचवटी, दण्डकवन, गोदावरी वर्णन आदि का विशद और श्रांगरिक वर्णन किया है। प्रकृति के वर्णनों में चमत्कार प्रदशर्न के लिए प्रात: कालीन सूर्य के लिए कै शोणित कलित कपाल यह किल कापालिक काल को जैसी वीभत्स उपमा तथा राम को उलूक की उपमा दी गई है।

वर्णनों की विशदता ओर विभिन्न छंदों की प्रदर्शनी लगाने के प्रति केशवदास जी का अधिक ध्यान रहने के कारण रामचंद्रिका का कथासूत्र अत्यंत शिथिल हो गया। ऐसा प्रतीत होता है कि कवि का मुख्य उद्देश्य रामकथा के बहाने विविध छंदों की प्रदर्शनी लगाना था। इस तथ्य की पुष्टि इस बात से भी होती है कि रामचंद्रिका के प्रारंभ में भी कहा गया है कि ''रामचंद्र की चंद्रिका वर्णत हों बहुछंद'' और पुस्तक के अंत में भी परिशिष्ट के रूप में प्रयुक्त छंदों की सूची मय परिभाषा के प्रस्तुत की गई है। यह भी सम्भव है कि उनके मन में दो लक्ष्य साधने की बात रही हो कि रामकथा कहकर भक्त कवियों में अपना नाम भी गिना लिया जाये और साथ ही आचार्यत्व का सिक्का जमाने का चमत्कार भी पैदा किया जाये। जो भी हो, रामचंद्रिका के अध्येता विचार कर सकते है।

यद्यपि लक्ष्मण परशुराम संवाद, अंगद रावण संवाद जैसे सशक्त, नाटकीय और मनोरंजक प्रसंगो की आयोजना जो केशव ने की है वह हिन्दी जगत में अद्वितीय है, तो भी तुलसीदास के रामचरित मानस द्वारा उकेरी गई राम की धीरोदात्य, धीरललित और धीरविक्रम मूर्ति जो जनमानस में गहरे बैठ गई है उसको आघात लगता है। उस लोकनायक राम की तुलना केशव के राम की तुलना में सहज ही जनमानस को आक्रान्त कर लेती है और केशव राम के ऊपर अपने मान की श्रांगारिक भावनाओं को थोपकर उनके साथ खिलवाड़ भी करते प्रतीत होते है।

वास्तविकता यह है कि राम के प्रति केशव के हृदय में न भक्ति भाव था न उनके मर्यादा पुरूषोत्तम रूप के प्रति श्रद्धा। इसका प्रमाण यह है कि एक रहस्यमयी घटना के फलस्वरूप ओरछा में पधारे रामराजा सरकार के बारे में केशव के काव्य में वर्णनात्मक या भक्तिपरक एक भी पंक्ति नहीं है, जबकि रायप्रवीण के वर्णन में तो माता सीता की फीकी पड़ जाती हैं। वे केवल रमा हैं। रायप्रवीण तो उमा, रमा, ब्रह्माणी सब कुछ हैं।

वे पुनरूक्ति की परवाह न करके अनुदित राम-राम रटने की बात करते हैं। वे राम को परब्रह्म तथा अवतारमणि भी कहते हैं। राम को अपना इष्ट बनाना भी स्वीकार करते हैं, परन्तु यदि केशव के मन में राम के प्रति भक्ति भाव होता तो वे राम के लिए उलूक की उपमा देते न वन पथ में चलते सीता राम और लक्ष्मण के लिए ग्रामीणों द्वारा शंकालु और संवदेनशील शब्दों- ''किधौं मुनि शापहत, किधौं ब्रह्मदोपरत, किधौं कोऊ ठग हैं'' का प्रयोग कदापि नहीं करते।

इसी तरह उदयकालीन सूर्य के वर्णन में सूर्य के जीवजगत के जीवनदाता के रूप को भूलकर 'क' का अनुप्रास भिड़ाने की जुगत में लगे रहे। उपमा तो वीभत्य है ही। वीभत्य भी एक रस है यदि उसकी पृष्ठभूमि में कोई उदात्त उद्देश्य हो तो वह भी हृदय में आनंद का उद्रेक करता है जैसे, रक्तबीज के रक्त को महाकाली द्वारा पान करना। इसके पीछे अत्याचारी राक्षस के उत्पात से लोक को मुक्ति दिलाना है परन्तु सूरज की वीभत्स उपमा की पृष्ठभूमि में ऐसा कोई महान उद्देश्य नहीं है।

शायद आचार्य शुक्ल को अधिक गुस्सा आ गया होगा कि उन्होंने केशव को हृदयहीन कह दिया है। वैसे यह सत्य है कि केशव की भावुकता पर कुटिल और श्रांगारिक सामन्ती संस्कृति हावी रही है। शुक्ल जी का यह कथन कि ''केशव की रचना को सबसे अधिक विक्त और अरूचिकर करने वाली वस्तु है-आलंकारिक चमत्कार की प्रवृत्ति, जिसके कारण न तो भावों को प्रकृत व्यंजना के लिए जगह बचती है, न सच्चे हृदयग्राही वस्तुवर्णन के लिए। पदकोप, वाक्यदोप आदि तो बिना प्रयास जगह-जगह मिल सकते हैं। कही

उपमान भी बहुत हीन और बेमेल हैं जैसे राम की वियोग दशा के वर्णन में यह- 'बासर उक सम्पत्ति उलूक ज्यों न चितवत।' '' (वही पृ. 204)

शुक्ल जी का उपर्युक्त कथन तो सही है की केशव की भाषा अटपटी है। जानिये मानिये गनिये लेखिये आदि शब्दों के प्रयोग से वे छंद की अनेक जगह पदपूर्ति करते हैं। इससे ऐसा लगता है जैसे पाठक पर उनकी बात समझने के लिए दवाव डाला जा रहा है। अभव्यिक्ति प्रसादमयी न होने के कारण ही यह उक्ति चल पड़ी है कि कवि को देन न चहो विदाई तो पृछो केशव की कविताई।

दरवारी सोच, स्वार्थ, प्रतिहिंसा और कुटिलताओं से भरा रहता है। केशव पर यह भी आक्षेप है कि उनके मस्तिष्क में दरवारी ठाट-वाट रहता था तो वे कुटिल सोच के कैसे अछूते रह सकते थे ? रामचंद्रिका के सातवें प्रकाश का एक दोहा दृष्टव्य है।-

''सावेत सीता नाथ के, भृगु दीनी लात।
भृगुकुलपति की गति हरी, मनो सुमिरि वह बात॥''

अर्थात सीतानाथ राम विष्णु के अवतार हैं। विष्णु भगवान की छाती पर भृगु ऋषि ने लात मारी थी। राम को उस समय की यह बात स्मरण हो आयी कि इन्हीं भृगुकुलपति परशुराम के पूर्वज ऋषि ने मुझे विष्णु रूप में लात मारी था तो उन्होंने परशुराम के धनुष पर बाढ़ चढ़ाकर भृगुकुलोद्भूत परशुराम की इच्छागति का हरण कर उन्हें महेन्द्र पर्वत पर सीमित कर बदला ले लिया।

- टीकमगढ़ (म.प्र.)

''राना लिधौरी'' के 'बुन्देली हायकू'

-राजीव नामदेव (राना लिधौरी)

1. पी के जी रए,
चून तक नइयां।
आँसू पी रए॥

2. चली धनियाँ,
पहन पैजनिया।
भरैं पनियाँ॥

3. वखत परैं,
गदबद हैं देत।
आज के नेता॥

4. गाँव के जन,
काम बनै बढ़िया।
पूजें मढ़िया॥

5. वोट के लाने,
पैसा, दारू बँटात।
कौल धरात॥

6. गाँव के जन,
काम बनै बढ़िया।
पूजें मढ़िया॥

7. जीत गर्रात,
करिया है बंदरा।
नेता की जात॥

8. कच्ची अमियाँ,
भड़िआई से खावै,
सबकौ भावे॥

9. कछु शर्मायें,
मन ही मन भाये।
मुढ़ी हिलाये॥

10. को सांची-सांची,
चढ़ जाये वो फांसी।
कलजुग में॥

11. दूध नीखरा,
मिलत है नईयाँ।
भूखी गईयाँ॥

12. ऊपर वारों
देख तमाशों नेंचे।
अखियाँ मींचे॥

13. बाँट है खाई,
कंजूस की कमाई।
अलफतिया॥

14. मूँछ है ऐंठे,
वे शासन कौ पैसा।
चाँप के बैठे॥

15. बुन्देली गीत,
सेरे फागें दिवारी।
नोरता गारी॥

16. वनरा सोहरे,
बिलवारी दादरे।
टेरें मलार॥

17. कभऊँ पूरे,
नई होत सपने।
टलुअन के॥

- टीकमगढ़ (म.प्र.)

महाकवि ईसुरी-बुन्देली महाकाव्य-एक अनुशीलन

-डॉ. सुशीला

संस्कृति साहित्य में समृद्ध महाकाव्य परम्परा है। जो अधिकांशतः राजाश्रयी महाकवियों द्वारा विरचित राज-राजेश्वरों के जीवन चरित्रों पर आधारित है और कमोवेश यह प्रवृत्ति आगे चलके हिन्दी साहित्य में भी देखने को मिलती है। किन्तु किसी साहित्य कार जीवन-चरित्र पर महाकाव्य का प्रणयन नगण्य है। डॉ. राम नारायण शर्मा का रचित महाकवि ईसुरी ऐसी काव्य कृति है जिसे विद्वानों ने महाकवि ईसुरी के समग्र जीवन चरित्र पर आधारित प्रथम बुंदेली महाकाव्य माना है। अतः एवं इस महाकाव्य पर समुच्चित विचार करना आवश्यक हो जाता है।

बुंदेली में महाकाव्य परम्परा- बुंदेली महाकाव्य परम्परा अतिप्राचीन है। किन्तु इस सत्य का उद्‌घाटन साहित्य हास में बहुत बाद में देखने को मिलता है। इसका कारण बुंदेली को भाषा का नामकरण में हुई देरी को जाता है। अद्यपि अभी भी कुछ दुरा ग्रह इस के पीछे अभिव्यक्त होते रहते है। किन्तु इससे बुंदेली को एक भाषाई रूप देने में भाषा वैज्ञानिकों के मत में कोई अन्तर नहीं पड़ा।

भाषा किसी व्यक्ति की मान्यता की मुख्यापेक्षी नहीं है बुंदेली भी करोड़ों जन-मन की भाषा है। अंतः इसमें रचित महाकाव्य का प्रबंध काव्य की एक वृहद सूची है जिसमें 14वीं सदी में विरचित जगनिक का आल्हा-खण्ड बुंदेली भाषा का प्रथम महाकाव्य माना गया । इसकी प्रसिद्ध परमाल रासो से कहीं अधिक है। जो हिन्दी भाषा के साथ वीर गाथा काल की प्रतिनिधि काव्य कृति है। इसके बाद 14 से 16वीं सदी में भक्ति परक काव्य रचनाओं के समय में सं. 1842वी. में विष्णु दास कृत ''रामायन कथा'' तथा ''महाभारत कभा जैसी काव्य-कृतियों में बुंदेली को सौष्ठव के दर्शन होते हैं। रामायन कथा वस्तुतः रामकाव्य परम्परा का प्रथम भाषा ग्रंथ है। सत्रवीशताब्दी बुंदेलखण्ड में सांस्कृतिक उत्थान की शती रही। इस काल में महाकवि हरिसेवक मिश्र रचित 'कामरूप' महाकाव्य बुंदेली महाकाव्य परम्परा और बुंदेली काव्य वैभव की श्रेष्ठ कृतिमानी गई हैं।'' जो तत्कालीन पदमदवत जैसे ग्रंथ के समान युगीन परिस्थितियों और प्राचीन संस्कृति और प्रेम मार्गी रचना का श्रेष्ठ ग्रंथ है। इसके बाद पदमाकर ठाकुर, बोधा आदि के काव्य ग्रंथ इतिहास पटल पर आये। इसके बाद की परिस्थितियों ने रासों-काव्य की एक विस्तृत महाकाव्य श्रृंखला को जन्म दिया। कल्याण सिंह प्रधान का ''झाँसी का रासो'' (सन 1869 ई.) और काफी विलम्ब से प्रकाश में आया महाकवि ''मदनेश'' रचित महाकाव्य ''लक्ष्मीवाई रासो'' प्रमुख हैं। इसके बाद जो भी बुंदेली में लिखे काव्य-प्रबंधों का मूल्यांकन होना बाकी है। महाकवि ईसुरी महाकाव्य बुंदेली में लिखा डॉ. राम नारायण शर्मा झाँसी को विद्वानों में ईसुरी के जीवन दर्शन पर लिखा महाकाव्य की मान्यता प्रदान की है।

महा कवि और महाकाव्य- महाकवि की प्राचीन काल से चली आ रही प्रस्थापना को मानते हुए आज के सहित्यकारों का एक मत है कि महाकाव्य का कवि ही महाकवि नहीं होता वरन जो कवि महाव कविता, महान संदेश वाली कविता रचे, वह भी महाकवि कहलाने का पात्र है। डॉ. परशुराम शुक्ल की भी यही मान्यता है कि साहित्येतिहास में ऐसे अनेक उदाहरण हैं- ऐसे अनेक महाकवि है, जिन्होंने कोई महाकाव्य या प्रबंधकाव्य नहीं लिखा और इसके विरूद्ध ऐसे उदाहरण भी है जिन्होंने महाकाव्य लिखे किन्तु उन्हें कहाकवि नहीं माना गया, डॉ. कांति कुमार जैन ने स्पष्ट किया कि विद्यापति जैसे कवि को उनके काव्य की श्रेष्ठता के आधार पर उन्हें ''महाकवि'' कहा गया हैं, तो ईसुरी को उनकी काव्य-सौष्ठव और समग्र मानव विज्ञान जीवन के विभिन्न रूपों का वर्णन साहित्यिक बौविध्य की श्रेष्ठता प्रदान करता है इसीलियें ''ईसुरी'' एक कहाकवि है। इसमें अब एक मत है, जिस के पुष्ट प्रमाण ईसुरी काव्य का विश्वविद्यालयीन स्तर पर शोध व पठन-पाठन हैं।

महाकाव्य की प्रस्तावना में चरित्र के सर्वांगीण प्रस्तुति के साथ मानवीय सरोकारों व्यापारा व विद्याओं के साथ प्रकृति के विविध रंगों के चित्रण उल्लिण वत करना होता है। काव्य-कला की छंद विधान समाहितों की आवश्यकता के साथ सोद्‌देश्य काव्य की परिपाति होती है। उपरोक्त सभी महाकाव्य आवश्यकता गुण सम्यक कृति महाकवि ईसुरी महाकाव्य में निहित हैं। जिसका संक्षेप में विवरण प्रस्तुत है।

आलोच्य महाकवि ईसुरी काव्य कृति में एक महाकाव्य के सभी गुण विद्यमान हैं जो कृति को महाकाव्य की पहिचान

बनाने के लिए आवश्यक हैं।

1.यह एक महानोंद्देश्य को लेकर प्रणीत कृति है जिसमें ईसुरी को एक महाकवि निरुपित कर उनके काव्य में निहित धर्म-अर्थ काम व मोक्ष की प्राप्ति को अभिव्यक्ति प्रदान की गई है।

2. महाकवि ईसुरी महाकाव्य का नायक उत्तम धीरोदान्त श्रेणी का है। जो मानवीय गुणों से सम्पृक्त व्यक्ति के साथ समष्टि के कल्याण की अवधारणा को मानता है। नीति-रीति का पथ-प्रदर्शक एवं सामाजिक-आर्थिक-राजनीतिक-धार्मिक समाधानों के संदेश देता है।

3. इसमें महाकवि ईसुरी के जीवन का आद्योपांत वर्णन वंदन व जन्म शैशव, वचपन, किशोर व युवावस्था, प्रवास, तीर्थाटन, देशाटन के साथ कर्मक्षेत्र, प्रयाण एवं उपसंहार जैसे 11 अध्यायों में समायोजित है।

4. प्रकृति चित्रण इस कृति का सौंदयानुभूति परक है। वारहमासी वर्णन के साथ पट ऋतु चित्रण का उदाहरण प्रस्तुत है।

ताल तलैयन की लहरें वन लहर, लहर लहरायें।

अमराई में कोयल कूकें, कहू-कुहू कर गायें॥ (छंद 343)

5. विचार तत्व- काव्य की उपलब्धि मानी जाती है। आलोच्य कृति में विचारोत्पादकता के भाव प्रचुरता से देखने को मिलते हैं। यथा- सुर नर मुनिमन जीनें मोई।

माया रूप बचो नई कोई ॥ (288)

अव ई वस्ती में का राने।

जीमें इतई लोग उरानें॥ (368)

6. राष्ट्रीय भाव- सामाजिक दूषण, राजनीतिक बुराइयों का खुल कर इस महाकाव्य में उल्लेख कर स्वच्छ समाज व राष्ट्र भावनाओं को अभिव्यक्त किया है।

7. साहित्य रूप- महाकवि ईसुरी महाकाव्य में विद्वान लेखक ने साहित्य के वे सभी गुणों का समावेश किया है जो इस कृति को महाकाव्य की श्रेणी में रखते है इसकी भाषा प्रसाद गुण समान्वित है। भाषा में तत्सम बुंदेली तथा प्रचलित विदेशी भाषा के शब्दों का समुचित प्रयोग किया है। तत्सम शब्दों में लीला, रास, विद्यादान, वेद, छंद, माया, जीव, ग्राम, ज्ञान, ध्यान तथा मान आदि समाविष्ट हैं। वहीं पनघट घर, किशान, छिन-छिन, निछावर, परमाख्य, ईसुर, गुसाई, ननदी, भोर, दिसा, पंछी, नग्र आदि जैसे तद्भव शब्दों का प्रयोग काव्य में हुआ है। बुंदेली के बल्ला मताई, बन्न-बन्न, मैंनव, उसारो, हरा-हरा, बऊ, उन्ने, टोटका, कचुल्ला मोड़ो शब्दों को समाविष्टि है। विदेशी भाषा के शब्दों में तखत, ताउस, नामंजूर, अहसास, असर, मुसाहिब, कारिन्दे, बीबी, रजव, अदब, रंगरेजन जैसे शब्द इस महाकाव्य में देखने को मिलते है।

लोकोक्तियां व मुहावरों का प्रयोग- डॉ. शर्मा ने अपने महाकाव्य की भाषा में शब्द-शक्ति के संवर्द्धन में मुहावरों व लोकोक्तियों का यथोचित प्रयोग किया है यथा-

अमरौता खा के, सौन चिरैया उड़ गई, जाने को पार पराई,

टक टक देखें, जगा दई आग, लीप पोतसब न्याँज हो गओ,

भारी मोल, डार को चूकौ बंदरा, जूबी पातर कूकर कागे आदि

छंद- महाकवि ईसुरी महाकाव्य में भाषा के साथ छंदों की स्वतंत्र निष्पत्ति हुई है। इसमें मुख्यतः चौपाई, दोहों, के छंद, विधान का माध्यम बनाया गया है जिससे सभी वर्ग के पाठकों के लिये पठनीय बन काव्य सरल व सुरूचिपूर्ण है।

रस अलंकार- पाणिनी केअनुसार काव्य की आत्मा उसके भाव है जिस की स्पष्ट स्वीकरोक्ति इस महाकाव्य में हुई है। पूरे महाकाव्य में भाव प्रखरता स्पष्ट है। किन्तु काव्य की काया को अलंकृत व सरस बनाने हेतु डॉ. शर्मा ने इस महाकाव्य में रस और अलंकारों से काव्य को सुंदरता प्रदान की है।

निष्काम प्रेम-भाव- इस महाकाव्य का प्रदेय बना है इसमें दैविक, दौइक दोनों सौंदर्य भाव-वोध का प्रतिपादन हुआ है जो लगता है कि लेखक के अनुभव व चिन्तन से जुड़ा दिखता है। जिसकी विशेपता यह है कि इस महाकाव्य में दैहिक सौंदर्य निरूपण को कवि ने श्यामा और रजऊ के सौंदर्य वर्णन को प्राकृतिक उपादानों की सहायता से किया है और वस्त्राभूपण का वखान सौंदर्य व गति केंद्रित है जिससे पाठक की काव्य में तन्मयता वढ़ जाती है काव्य के प्रभाव जहाँ इसे प्रभावोत्पादक वनाते हैं वहीं रस अलंकार इसे विशेपता प्रदान करते हैं। इसीलिये महा कवि ईसुरी महाकाव्य में भावानुकूल एवं रसानुभूति के उत्कर्प वर्द्धन हेतु अपेक्षित समाहिती हुई है। जिसके प्रमाण रूप कुछ उदाहरण प्रस्तुत हैं-

अनुप्रास- ताल तलैया आँगर-बाँगर,

घाट घाट के सव कुल डाँगर।

पत्रक- ईसुर ईसुर को परसाद,
जैसे भये बालक प्रहलाइ। (116)
निरर्थक- हारन हार पहारन छाये
पुनसक्ति प्रकाश- बाल बाल सब रही भरी है।
दिपत नार ज्यों कोरव भरी है। (13)
निरर्थक पत्रक- टपका टपकत बरसत ऐसे,
जैसे दुखिया अँसुआ बरसें।
वात्सल्य रस- ईसुर टुकुर टुकुर सब देखें,
देख देख हरसे, अवले खें।
वीर रस- देश भक्त वीरों ने रन में,
प्रान निछावरकर दये।
सुतंत्रता हित सीस कटा कें,
गाथा अमिट लिखा गये। (25)

का त्योत्कर्ष के साथ इस महाकाव्य की परिणति भी उसी के अनुरूप हुई है। यथा-

फागन - फागन ज्ञान बता गये।
फड़ के रंग-रूप दिखला गये।
सिंगार रूप लावनियाँ गा गये।
गैलारेखौं गेल बता गये।

उपरोक्त विशेषताओं के आधार पर डॉ. रामनारायण शर्मा रचित महा कवि ईसुरी वास्तव में ईसुरी के जीवन-चरित्र पर आधारित श्रेष्ठ बुंदेली भाषा का प्रथम महाकाव्य है। इसमें बुंदेली भाषा-वैभव के कवि की चरित्र नायक प्रस्थापन्य मौलिक है। इसके लिए डॉ. शर्मा बधाई के पात्र हैं।

- सिविल लाइन्स, झाँसी
(रानी लक्ष्मी बाई पार्क के सामने)

छन्द

–डॉ. एस.बी.एल.पाण्डेय

(1)

माथे पै मोर मुकुट मंजु मणि माधव के,
मृदु मुस्कान मनमोहक, मन भावन है।
कटि पर पीताम्बर उर गल बैजयन्ती माल,
नैनन की चितवन अति हिय हरषावन है।
अंगुरिन अधरन मध्य बाँसुरी सुशोभित है,
हर इक स्वर ब्रह्म वेद मंत्र को उचारन है।
विनवऊँ पद कमल युगल नित्य धरूँ ध्यान श्याम,
यह पद रज कमल तो त्रिताप की नसावन है।

(2)

कालिन्दी कूल कहुँ करील कहुँ केलिकुंन्ज,
कोयल की कुहू कूक कर्णप्रिय भावन है।
शुक, पिक हिल मिल कर सब मधु कलरव करत है,
कान्हा को ऐसो कदम्ब प्रिय कानन है,
ग्वाल वाल ताल देत प्रमुदित उल्लास भर,
नाचत गोपाल जो त्रिलोक को नचावत है।
सुमिरन कर दिवस रैन, नित्य धरूँ ध्यान श्याम,
यह पद रज कमल तो त्रिताप की नसावन है॥

(3)

घुमड़ घुमड़ घूम घूम, घटा घन-आनन्द करे,
चपला की चमक चौंध चित्त सरसावन है।
विस्मय सब करत आज, जानत न कछू काज,
कैसी यह छटा छाई, भादों न सावन है।
सकुचत बृषभान लली, लाज से लजाय रही,
वरषाने नेह, श्याम बरसाने आवन है।
सतचित आनन्द कन्द, नित्य धरूँ ध्यान श्याम,
यह पद-रज कमल तो त्रिताप को नसाबन है।

(4)

चातक, चकोर, मोर, शोर न सुहाय कछू,
नयना अधीर भये आज कौन कारन है।
पीत गात लाज से कपोल भये लाल आज,
शुभ्र, स्याह, हरितरंग कौनऊँ न भावन है।
तन तो है ठिठक रहयो मन अति हुलसात रहो,
वरसाने श्याम रंग, बरसाने आवन है।
बाँकी छवि लखत धन्य, नित्य धरूँ ध्यान श्याम,
यह पद रज कमल तो त्रिताप की नसावन है।

-मऊरानीपुर (झाँसी)

बुंदेली भाषा में समाज संरचना के भाव

-डॉ. रामनारायण शर्मा 'कथाभूषण'

प्रकृति उर प्राकृत के संग-सूत्र के ''कुटूम्ब'' बनों बुंदेली में एक कथा बब्बा कौ कुनवा के आधार मै कुटूम्ब की रचना भई। बब्बा (ब्रह्मा) ने अपने बेटा के संग आई छाया को वरदान दओ कै तुम अपनों ''कुनवा'' पैदा करौ। आगे चल कें कुनवा से समाज बनों।

बुंदेलखण्ड की प्राचीनता जग-जाहिर है। सौ बुंदेली समाज की गाथा सोई पुरानी है। महाकाव्य में अरण्य जाति-समाज के सूत्र देखबे मिलत जो विभिन्न काल-परिस्थितियन के घाल-मेल से निमटत-उमरत आज के सामाजिक संरचना की पैचान बने हैं। ई समाज कौ केंद्र व्यक्ति है और व्यक्ति की अभिव्यक्ति ऊकी बोली है। जो अपने ऊग्रौ उन उन्सारे में भाषाबनी। बुंदेली पूरे मध्यप्रदेश की भाषा (बन्नी) है। जो समाज के विकास के संग रूप-रंग के बन्न बन्न को विधान की सरजना के आधार बनी। जी में समाज के कार्य कलाप भाषा ग्रंथन के रूप में रचे गये। जो स-हित (कल्याण कारी) के रूप में समाज की चिन्त वृत्ति के दससन के आधार बने। समाज की संरचना में बुंदेली की गाथा पुरानी है। जीकौ बखान सार-संक्षेप में करबो उचित है। जीसें समाज के रूप, जाति, गोत्र, प्रथा, संस्कार, सरोकार व विचारण में बुंदेली में रूप रंग पनपे और समय व समाज की चिन्त-वृत्ति के संवाहक रये।

समाज की परम्परा- सनातन से चली आ रई समाज की संरचना में वर्ण व्यवस्था कमोवेश आजऊँ समाज की संरचना में देखने मिलत। जिनमें ब्राह्म, क्षत्रिय, वैश्य और कारकुन से विविध वर्णों समाज पनपत रओ। ईकी झलक हमें रासो जैसे बुंदेली काव्य में मिलता है।

समाज की संस्कृति, सरोपकर व संस्कारन में मूल भाव विभिन्नता के संग भाषा में फूटे । सुरहिन की अमर गाथा में जे सब देखवे मिलत। ईमे भाषा काव्य और गद्य-पद्य चम्पू रूप कौ उदय दिखाई देत। बुंदेली की विशेपता ईमे देखबे योग्य है कै एकई मूलभाव समाज की बन्न-बन्न क्षेत्रन के बदल जाता। जैसे- सुरहनि की भगत दिन की ऊगन किरनकी फूटन सुरहिन वन खो जाय हो माँ यह दखिनी बुंदेल खण्ड में प्रचलित है। जोई गीत उन्तर पचिहनी बुंदेलखण्ड में यों गाओ जात-
''साँझ भई मैया करन की बैरा सुरइन वन को जाय हो माय''

ईने खुलासा हो जात के बुंदेली भाषा क्षेत्र समाज की संरचना के आधार पै रूप-सुरूप बदल देते। साँस के स्थान पै संजा औं कौ की जाँगा ''खो'' या खाँ, माँ की जगह माय रूप अक्षर लोकगीतकार नें रखे। बुंदेली समाज की विविन्नता में एकता के दरसन ई कानात में सोई मिलत- सौ दंडी और एक बुंदेल खण्डी। ऐसे समाज कौ सच चित्र लोककाव्य में दिखात लै सौ शिष्ट काव्य में नई मिश्रित। बुंदेली को लोक रूप समाज के जीवन व्यौपार, संस्कृति, खान-पान, रहन, सहन, पर्व-पूजा अनुष्ठान आदि में अधिक मुखर है जी को मूल शिष्ट भाषाकौ आधार बनो। गीत कथा सूक्ति ईके प्रयान हैं।

बुंदेली की मूल धारा बुंदेलखण्ड क्षेत्र में एक रूप में है पै सीमाई क्षेत्रन में भाषा ई रूढ़ियों, आचार, विचार, रीतिरिवाज तन-मन थोरे बदल जात। जो आर-पार के समाज के प्रभाव से बनत। सुरहिन की गाथा हरदौल कारस देव व राजा बोकरकाना की कथा बुंदेल खण्ड के पास के प्रदेश ब्रज राजस्थान छग आदि में मूल-रूप से देखबे मिलत। पै उते के समाज के मुख-मुख से कछू बदले रूप में। डॉ. रामस्वरूप श्रीवास्तव स्नेही ने भी मानों के साहित्य में बुंदेली की प्राणवन्ता गुणवन्ता तौ है पै गीतों की भाषा में काफी अन्तर देखने मिलत। जैसे ई गीत में ग्वालियरी बुंदेली की छाप स्पष्ट है-

चरखा काहौ मेरी मैना प्रेम से जी,
एजी कोई जल्दी से होय सुधार।
बढ़िया बढ़िया कातौ मेरी मैना सूत को जी,
ए जी कोई पहने सब परिवार।

ई में मेरी, जल्दी, होय, बढ़िया, पहने, परिपार, आदि को बुंदेली को असल रूप मोरी उलायतें होवै नौनों,

पैरो, पखार आयँ। कै कीबात है कै ब्रज बुल में समाज के मुख सुख की बुंदेली है। तो समाज व्यकि्ा की भाषाई प्रवृत्ति की देन होत। बुंदेली कौ तंवरी रूप तोमर राजा डूँगरसिंह के राज कवि, विष्णुदास के ग्रंथ रामायन औ महाभारत में देखबे मिलत। जैसे

जिन सै मंदिर रावर पासा विनसै काज पराई आसा।
विनसै विद्या कुसिपि पढ़ाई। विनसै सुन्दरि पर घर जाई।
विनसै रूख जो नदी किनारे। बिनसै घरू न चाये अनुसारे।
विनसै खीं आरसु कीजै। विनसै पुस्तक पानी भीजे।

जोई बुंदेली हवेली व शिष्ट रूप में बाद हरिराम व्यास

और गणेश कुंवर की वार्ता में एवं ब्रज-बुल रूप में दिखाई देत। जैसे- व्यास भागवत जो सुनै जा के तन-मन स्याम।

वक्ता सोई जनिये, जाके लोभ न काम।

समाज के सबई लोग अपनी उपासना के गीत अपनी बुंदेली भाषा में गाउत। जिनके प्रमाण देखियो-

1. **तीर्थाटन काव्य-**

चलन चलन सब कोउ कहै चलबो हासी न खेल।
चलबौ साँचौ ओई मौ, जीखों भैरों बताबे गैल हो॥

2. **हरबों ले गीत-**

भजन करो करध्यान, कोऊ जिन भजन बिसारो।
पग जो कहे कधु तीरथ कीरले कर जो कहे कछु दान।
राम भजन हिरदे में घर ले, कथा सुना दे कान।

3. **दिनरी गीत (किसान)-**

अरे अरे मनुआ ओरे करलै सब सो चिनार
काल कला पेछी रमजै है, तेरे ऊपरज मैं नइँ घास।

4. **कहारों के कहरवा भजन-**

रइया में भिदरिया मौंजे करै,
औई कौ पाली पियत रहत है।
ओई में टर्राय।
दुनियाँ ऊकी रइया भर की।
और न कब रिहाय।

5. **भजन-**

जिनके रामनाथ आधारा
सबरे संत पुल पार पैर गये,
बैठे रहत बाजारा।
वामुन-बनियाँ पीछे ठाकुर
तीनऊ करत बिचारा।
इन्हें तौ ऐसी सोहत नइयाँ,
करौ न भेद अपारा।
श्री रैदास जनेऊ पैरे
आठ गाँठ नौ तारा,
लालदास कहें सब तारबे
नवौ धरौ अवतारा।

इन भजनन ने बुंदेली के समाजी विचार के साथ बन्न-बन्न के रूप शोभित भये।

समाज अपनौ रूप रंग-दंग समय के अनुसार संवारत जो आगे के बुंदेली भाषा सौष्ठव में देखबे मिले। पद्माकर की समाज संरचना व राजश्रर्या रूप बसंत बखान में देखने मिलत जी में कूल, कुंज, वीर्थिन, नबोलिन में बसंत बरारयो है-

कूलन में कोलिन में कछारन में कुंजन में,
क्यारिन में कालन, कलानि किलकत है। आदि

परन्तु महाकवि ईसुरी के समाज कौ बसंत उतै कै पेड़ों की डारन, हारन, पहारन, पारन, बागन, तनक बंगलन बगर बजारन में छाओ है। ईसुरी लोक कवि है सो लोक सम्मत समाज की बात कर रये हारन, हद, पहारन, पारन, धाम, धवल, जल, धारन ईसुरी, मोर, झोर, के ऊपर लेगे मोर गुंल जारन। आदि

जब समाज की दिशा-दशा बदली। राष्ट्र की अस्मिता की चिंता के भाव जागे। ईकी झलक तब के बुंदेली काव्य में उपजै। ईश, शीश के गीतन की जांगा राष्ट्र गीतन ने ले लई। श्रृंगार, राग, वैराग, के सिरमौर, ईसुरी,ने खुल के सबई समाजियन को राह दिखाई। ईम परिवार नियोजन पर गई लरकन की रंग दाई काम धंधा की सीख जिनकों लगबे सब दिन जाड़ौ के बाद अर्थ की कमी

किसान की दशा- आसों दे गओ साल करोंटा आदि
दिशा बोध के बुंदेली काव्य रचों। राष्ट्र की कलपना,
दासताके भाव बुंदेली समाज में फैलायें-
दसा (1) हंसा फिरत विपत के मारे, अपने देस विचारे
विरोध (2) इनपै लगे कुलइयाँ घालन
महुआ मानुंस पालन

झाँसी मानिकपुर रोम लाइन के लिए पेड़ कटाई का विरोध।

दिशा- जो कोऊ समर भून में सोये।
जस बाँगा को होंगे।

अपने जीवन के अंत में कवि को अंगरेजन से मुक्ति की आसा बैध गईती। जैसी

इनको अंत राज कौ आगओ यदि

ईके अलाबा समाज में फैली फाग-फड़ के बुंदेली रूप ईसुरी गंगा धर, ख्याती आदि में रचे गढ़े। जीमें छंद वंदकी सुंदर छवि धारें बुंदेली भाषा को वैभव उपजो स्वतंत्रता कौ शंख नाद गूंज उठोतो। जो राष्ट्रीय कवि पं. घासीराम व्यास के स्वरों के देखिये-

1. बढ़े चला, मातृ भू की नमक अदाई हेतु,
भंय क्या है कालका, त्रिकाल, का विधाता का।
गोलियों का खाना, शीप फाँसी पै झुलाना।
मर जाना, पर वीरो, न लजाना दूध माता का।
2. दे दे निज शोणित सनेह उजियारे जिसे
बुझने न दीजे दिये मातृभूमि वेदी पै

आर्थिक दिशा बोध- समय के चाच रये समामान्तर लोक साहित्य में बुंदेली रूप देखबे बारे है-

जुनरिया मन भर की
पोता लाग रहा महाराज
जुनरिया हो गई मन भर की।
मुनसी आये पटवारी आये,
आये तैसीलदार, होन लगी कुरकी,
जुनरियाँ
लांगा बिक गयो, लंगरा बिंक गयो
बिक गई आंगिया तन, की की।
राजा के बांधन को सेला बिक गयो
फजियत हो गई घर की।
जुनरियाँ
ईके बाद समाज की दृढ़ता के स्वर गूंज उठे।
जबरदस्ती से लेहें सुराज
हमारौ कोऊ का करि है।
नगर बस्ती में गांधी महाराज
हमसों कोऊका करिहै। आदि

बुंदेली समाज के उभरते रूप डर पुननिर्मान की सहयात्रा पूरी करत बुंदेली ने अपने उन्सारे में भाषाई सुधार के साथ अन्य भापान के शब्द अपने में रचे-पंचे। जैसे- घड़ा, घिनौनी, घैला, हुरैया, हुरदसिया उज बक टेशन, सिंगल रेल आदि आज बुंदेली समाज के बोल बन गये। आज के समाज के आधार पै बुंदेली भापा के शब्दार्थ स्थान, स्थिति, वंश, गोत्र, कुल और क्षेत्र गुण पर बदले, जैसे बमोरया, गहरवार, गोत मियाँ, बनाकर, भदौरिया, खटोला आदि बन्न-बन्न की संज्ञा वनी। एर्अ तरा चम्मू गद्य, कथा-प्रसंग आदेश-पत्र से लेंके आज शुद्ध गद्य धारा चल निकारी।

ओर की व्यार डर सूरज (नई समाज) की उगन के संग बुंदेली हरां-हरां अपने बन्न-बन्न के रूप से सजी सुशोभित है जो ईगान में देखवे जोग्य है

एक रात बीत गई।
सूरज की उगन गई।
पूरब ने खोल दये द्वार
हरां हरांचल रई बयार।

- रामायण
693/3, सिविल लाइन्स,
झाँसी (उ.प्र.)

दोहे

स्व. निहाल तांबाँ

1. अंधी ममता देख के, सबको अचरज होय।
माँ लोरी गाती फिरे, बहरा बच्चा सोय॥
2. नदियाँ के इस दर्द का, कोई करे उपाय।
माथा रगड़े रेत पर, रेत खिसकती जाये॥
3. निकली अपनी नीड़ से, झपट ले गया बाज।
चिड़िया देती रह गई, बच्चे को आवाज॥
4. कहाँ गया वो आँगन मेरा, कहाँ गई दालान।
बटवारे में ढूँढ़ रहा हूँ, अपना एक मकान॥
5. होले होले रोती जाए, मन ही मन मुस्काए।
माँ के सोने की बाली से, बिटिया कान छिदाए॥
6. सोचा समझा कुछ नहीं, क्या कर बैठे आप।
उजियारे में आ गया, अंधियारे का पाप॥
7. धंधा अपना ईंट का, जो चाहे ले जाये।
मंदिर मस्जिद के अलग, भट्टे नहीं लगाये॥
8. बेचारा मजदूर कभी न, नींद की गोली खाये।
सर्दी के मौसम में ठंडी, धरती पर सो जाये॥

प्रस्तोता - कामता सागर
बाई का बगीचा, जबलपुर

बसंत की छटा

-भारतेन्दु अरजरिया

दरसहु दिशा गलियन में वहरही वसन्त वैर, आगई सुहावनी घरी।
कोयल की कूक सुनत शूल चुभे विरही मन, पीत वसन रूप की छरी॥
टिसुअन की डारन पै
शोभा अनयारी।
पीत वरन वारी।

आओ रितुरात आज, नूतन रिंगार साज
दुलहिन सी वगिया की अंकुरहि छटा छवि भरी।
आगई सुहावनी घरी।

साजे है रैन साज, मन भावन वजत वाज
युवा अंग अंगिया पै ओढ़नी सम्हारी, हरयारी प्रकृति की परी।
आगई सुहावती घरी।

इंदु धरा गगन आज, साजे शुभ सुखद साज
गर्वित है ध्वज तिरंग, विकसे है सुमन-सुमन, अरूण किरण संध्या उतरी।
दरसहु दिशा गलियन में, वह रही पवन, आगई सुहावनी घरी।

- 20 मैथिलीशरण गुप्त मार्ग,
महोबा (उ.प्र.)

लछई की लिडेर

परम्परागत बुंदेली पुरानी पद्धति के एक निर्धन कृषक-लछई की सत्य कथा

-भानुप्रताप शुक्ल

पुराने समय में कृषि कार्य, हल बैलों द्वार-सुगम, सस्ती, सरल पारम्परिक पद्धतियों से आत्मनिर्भर साधनों द्वारा सम्पादितकिया जाता था। आज पाश्चात्य संस्कृति के प्रचार प्रसार ने इसे पूर्णत: यांत्रिक, खर्चीला और जोखम भरा बना दिया है। इंजन, टैक्टर, थ्रेशर के अविष्कारों एवं ईजादों ने इसे भारतीय कृषक के लिये अति खर्चीला, पराश्रयी शक्ति सामर्थ से परे ही नहीं, अपितु उसके प्रयोग से अनभिज्ञ भी कर दिया है, जिससे कभी कभी उसे आर्थिक एवं शारीरिक क्षति भी उठानी पड़ती है।

इन पंक्तियों में पारम्परिक कृषि कार्य सम्पादन संबंधी खलिहान में गल्ला की मढ़ाई विषयक एक गरीब बुंदेली कृषक लछई की दिनचर्या का वर्णन किया गया है जो सामान्यत: विगत युग के अधिकांश कृषकों पर लागू होता है।

टटियँन के लाँकन के टूट रये 'सुमेर'।
सेड़न के लगगये बयारन में ढ़ेर॥
कंरबे श्रमघोर जुटे अन्न के कुंबेर।
जुटे अन्न के कुंबेर॥

(1)

नैं दई तरईयँन की छँईया में दाँय।
हो रई दुपरिया पै तनकऊ न भाँय॥
तप रई तबा सी, तरें सेंघरा -
वैंठे मलारे जे। टटिया पै गाँय॥
मोंड़ी लै आई कलेबा हाँ बेर।
टंटिंयन से लाँकन के टूट रये सुमेर
करबे श्रम घोर जुटे अन्न के कुबेर
जुटे अन्न के कुबेर॥

(2)

बालन की चरर-मरर चाँचर कौ राग।
लरसी-गुलाल भरे खेलत जे फाग॥
श्रम के रंगराग रंगो चोला लरबोर।
पगिया के छोरपरे सुरती केदाग॥
गोंनन के पैर गुँईया डारे तरेर।
टटिंयन सें लाँकन के टूट रये सुमेर।
करबे श्रम घोर जुटे अन्न के कुबेर।
जुटे अन्न के कुबेर॥

(3)

पुनियाँ ने छनुआ हाँतन पठा।
पोंचा दओ बासौ, महेरौ-मठा॥
खा के डकर गये, अदन सौ तपो
पी गये जे। नरवा को पानी उठा॥
इन कैसौ संतोषी को दई। दिलेर॥
टटिंयन से लाँकन के टूट रये सुमेर।
करबे श्रम घोर जुटे अन्न के कुबेर॥
जुटे अन्न के कुबेर॥

(4)

छोड़ रई दुपरिया, लू-लपटन की झार।
माँथे से चू रई, पसीना की धार॥
ठांड़े उसाबे तिवारे वै आज।
''हीरा औ मोती'' बिछा रई बयार।
सरस लई गोरी ने छापौ उखेर।
टटिंयन से लाँकन के टूट रये सुमेर
करवे श्रम घोर जुटे अन्न के कुबेर।
जुटे अन्न के कुबेर॥

(5)

मची मोंड़ा-मोंड़िन की, आपस मेंहोड़।
सांजौ सब ढ़ोन लगे, बना बना जोड़॥
मच गई खलबली, परी गद बद दिंखाय।
छिटियँन से छूटत न साँजे को छोर।
जुटी दैवे उसेंडा, लछई की लिडेर।
टटिंयन से लाँकन के टूट रये सुमेर
करबे श्रम घोर जुटे अन्न के कुबेर॥
जुटे अन्न कुबेर॥

(6)

भूसा के ब्यारे में लग गये पहार।
मारे पकर के पचा ऊ में चार॥
भेंसन हाँ बदलों बमूरनं की छाँव।
बछवन हाँ भर के अकरिया दई डार॥
डियूटी में कौनउ परो नईयाँ फेर॥
टटिंयन से लाँकन के टूटे रये सुमेर।
करबे श्रमघोर जुटे अन्न के कुवेर॥
जुटे अन्न के कुबेर॥

- संदीप साहित्य सदन, थाने
कंचनपु
टीकमग

बुंदेली मेला हटा (दमोह) म.प्र. 2009
पुरस्कार विवरण

1. **बधाई नृत्य** -
   प्रथम - जवाहर नवोदय विद्यालय हटा
   द्वितीय - नाहेलेश्वर मंडल नोहटा
2. **राई** -
   प्रथम - अमर सिंह गोविन्द सींग - छिरका बकेनी
   द्वितीय - प्रहलाद सिंह जगत सींग - टिकरिया
   तृतीय - झगड़ू अहिरवार पार्टी - हटा
3. **दलदल घोड़ी** -
   प्रथम - मकतूल भट्ट - दमोह
4. **सैरो** -
   प्रथम - सुनहरा पार्टी - सुनहरा वकस्वाहा
5. **कीर्तन** - कीर्तन मंडल अबदा
6. **जबाबी राई** -
   प्रथम - आनन्द दुबे पार्टी - मगरोन
   द्वितीय - रामपुर पार्टी - रामपुर बड़ा गाँव
7. **शेर नृत्य** -
   प्रथम - घसीटा बेलदार - हटा
8. **भजन-कीर्तन** -
   प्रथम - कौशल कीर्तन मंडल - हटा
   द्वितीय - अबदा कीर्तन मंडल - अबदा
9. **घोड़ा नृत्य** -
   प्रथम - अमानसींग - शहजाद पुरा
   द्वितीय - राजेश सोनी - हटा
10. **लोकगीत (कहरबा)**
    प्रथम - लोकगीत मंडल - जबेरा (मुन्ना लाल सुमन)
    द्वितीय - नोहलेश्वर लोकगीत मंडल - नोहटा
11. **ढिमर राई** -
    प्रथम - चुन्नीलाल - कार्टापुर
    द्वितीय - रामलाल कठिन - दमोह, परसोरिया
12. **झंगड़ वादन** -
    प्रथम - सुन्दर सेन एवं पार्टी - हटा
    द्वितीय - भगत सिंह एवं पार्टी - हटा
13. **बादन - (पारंपरिक)**
    प्रथम - फटाकत अली (बांसुरी) - गैसाबाद
    द्वितीय - अनन्तराम पटेल (तबला) - सकोर
14. **वादन - (लोक वाद्य)**
    प्रथम - प्रागी लाल रैकवार (केकड़ी) - मझगुवां पतोल
    द्वितीय - अशोक व्यास (बेंजो) - सोजना
15. **स्वांग** -
    प्रथम - सर्वेश्वर नेमा - हटा
    द्वितीय - सुनील नेमा - अभाना
16. **फाग - (देसी)**
    प्रथम - रामेश्वर मिश्रा - खमरगौर
17. **गारी** -
    प्रथम - गुलाबसा पार्टी - काईखेड़ा
18. **दादरा - (महिला)**
    प्रथम - महिला मंडल - बोटराई
    द्वितीय - महिला मंडल - तिदनी
19. **दिवारी** -
    प्रथम - मा.शा. बड़ा - हटा
20. **नाटक** -
    प्रथम - ताज नाटक पार्टी - भगटोन
21. **गम्मत** -
    प्रथम - कोमल सिंह रजपूत - गांधी वार्ड - हटा
22. **शालेय लोकगीत** -
    प्रथम - म.ल.बा - हटा
    द्वितीय - बड़ा हटा मा.शा. भानु प्रताप सिंह
23. **एकल गायन** -
    प्रथम - समर्थ प्यासी (अंकित प्यासी)
    द्वितीय - लक्ष्मी नारायण स्वर्णकार, शारदा संगीत मंडल - हटा
24. **शंख वादन** -
    प्रथम - डॉ. सी.एल. नेमा
    द्वितीय - गोविंद रावत
    तृतीय - शालिगराम (बाबा)
25. **रमतूला** -
    प्रथम - छोटा बसोर - हटा
    द्वितीय - सुदामा कुटवार

खेल - विधा

1. मेंढक दौड़ (शिशु वर्ग)
   प्रथम - अमित असाटी - महावीर स्कूल - हटा
   द्वितीय - भूपेन्द्र पटैल - महावीर स्कूल
   तृतीय - स्नेहा - जी.एस. कान्वेन्ट स्कूल - हटा
2. कुर्सी दौड़ (शिशु वर्ग)
   प्रथम - रागनी प्रजापति
   द्वितीय - राम विशाल अठया
   तृतीय - अपूर्व
3. चम्मच दौड़ (शिशु वर्ग)
   प्रथम - शिवम अहिरवार
   द्वितीय - रागिनी प्रजापति
   तृतीय - स्नेहा सोनी
4. जलेबी दौड़ (शिशु वर्ग)
   प्रथम - अमित असाटी
   द्वितीय - रागिनी प्रजापति
   तृतीय - रामविशाल अठया
5. बोरा दौड़ (बालक)
   प्रथम - राजेन्द्र अहिरवार
   द्वितीय - गोपाल बसोर
   तृतीय - रहीम खान
6. बोरा दौड़ (बालिका)
   प्रथम - मेघा
   द्वितीय - करिश्मा ठाकुर
   तृतीय - रीता रैकवार
7. त्रिटंगी दौड़ -
   प्रथम - अंकुश तिवारी + सुबोध चौधरी
   द्वितीय - अहिरवार + रामकिशुन
   तृतीय - गोपाल बसोर + अरूण बसोर
8. 100 मीटर दौड़ (बालक)
   प्रथम - दशरथ पटैल
   द्वितीय - रहीम खान
   तृतीय - रामकिशुन अहिरवार
9. 100 मीटर दौड़ (बालिका)
   प्रथम - रीता टेकराम-जवाहर नवोदय विद्यालय
   द्वितीय - अंजुल तंतुवाय
   तृतीय - सीता प्रजापति
10. रस्सी दौड़
    प्रथम - प्रतिभा सिंह-जवाहर नवोदय विद्यालय
    द्वितीय - निशा तंतुवाय
    तृतीय - फरीदा बी
11. लंगड़ी दौड़
    प्रथम - शाहरूख खान
    द्वितीय - शकील खान
    तृतीय - वहीद खान
12. सुई धागा दौड़
    प्रथम - अशिता असाटी
    द्वितीय - मनमोहन
    तृतीय - जितेन्द्र पटैल
13. आलू दौड़
    प्रथम - शैलेन्द्र साहू
    द्वितीय - हेमन्त अहिरवार
    तृतीय - महेन्द्र पटैल
14. अठ्ठू (सीनियर)
    प्रथम - अंकिता चौरसिया + रश्मि ठाकुर
    द्वितीय - फिजा + दीपा साहू
    तृतीय - रजनी रैकवार +
15. अठ्ठू (जूनियर)
    प्रथम - सम + श्रद्धा
    द्वितीय - श्वेता + पूर्वा
    तृतीय - कीर्ति + श्वेता
16. चपेटा (सीनियर)
    प्रथम - रौबी खान
    द्वितीय - फिजा खान
    तृतीय - रजनी रैकवार
17. चपेटा (जूनियर)
    प्रथम - पूजा प्यासी
    द्वितीय - दीपा साहू
    तृतीय - समष्टि
18. अखाड़ा प्रदर्शन
    प्रथम - बद्री विश्वकर्मा - बटियागढ़
    द्वितीय - मुन्ना सिंह - बटियागढ़
19. कबड्डी (बालक)
    विजेता - नवोदय विद्यालय - हटा
    उपविजेता - तेजगढ़

20. **कबड्डी**
विजेता - नवोदय विद्यालय
उपविजेता - हाईस्कूल

21. **कबड्डी (महिला)**
विजेता - तेजगढ़
उपविजेता - नवोदय

22. **खो-खो**
विजेता - नवोदय विद्यालय - हटा
उपविजेता - उत्कृष्ट हाईस्कूल - हटा

23. **गोला फेंक (बालक-सीनियर)**
प्रथम - शिवकुमार रजक
द्वितीय - शीतल सिंह
तृतीय - प्रताप सिंह

24. **गोला फेंक (बालिका-सीनियर)**
प्रथम - वीनस यादव
द्वितीय - आरती वर्मा
तृतीय - रोशनी जैन

25. **तवा फेंक (बालक-सीनियर)**
प्रथम - प्रताप सिंह
द्वितीय - शिवकुमार रजक
तृतीय - भूपेन्द्र

26. **तवा फेंक (बालिका-सीनियर)**
प्रथम - अश्मिता पटैल
द्वितीय - शिखा शर्मा
तृतीय - श्रद्धा सिंह

27. **100 मीटर दौड़ (बालक)**
प्रथम - विनोद अहिरवार
द्वितीय - मोती चक्रवर्ती
तृतीय - अनिल

28. **100 मीटर दौड़ (बालिका)**
प्रथम - मृणाल सिंह
द्वितीय - प्रतिभा राजपूत
तृतीय - अश्मिता पटैल

29. **वॉलीवॉल**
विजेता - जवाहर नवोदय विद्यालय
उपविजेता - जवाहर नवोदय विद्यालय

30. **चित्रकला**
प्रथम सुनील कुमार पटैल (व्यक्तिगत)

31. **चित्रकला (सीनियर)**
प्रथम - रिचा असाटी
द्वितीय - प्रिया असाटी
तृतीय - हरेन्द्र मोदी

32. **चित्रकला (जूनियर)**
प्रथम - समीक्षा अग्रवाल
द्वितीय - रिचा असाटी
तृतीय - गर्वेश मोदी

33. **रंगोली (जूनियर)**
प्रथम - समीक्षा अग्रवाल
द्वितीय - राशी असाटी
तृतीय - मेघा असाटी

34. **रंगोली (सीनियर)**
प्रथम - रेखा सिरोठिया
द्वितीय - रिचा असाटी
तृतीय - प्रिया असाटी

35. **चौपर**
प्रथम - काशीराम पटैल + पंडित जी (देवरीबारे)
द्वितीय - लल्ला मासाब + कन्हैयालाल गौतम

प्रेस क्लब द्वारा
प्रथम - मुजाहिद खान
द्वितीय - संजय जैन
तृतीय - भानू प्रताप सिंह - हरिभूमि

सांत्वना -
बृजेश श्रीवास्तव
अनिल शर्मा
घनश्याम प्रजापति - हरिभूमि
हरिशंकर साहू
सत्येन्द्र श्रीवास्तव

व्यंजन मेला - 2009

प्रथम - श्रीमति सोनी - बिर्रा की रोटी
द्वितीय - श्रीमति पूजा अग्रवाल - आटा लड्डू
तृतीय - श्रीमति राजकुमारी असाटी - गाजर का हलुआ
प्रथम- रीना व्यास
द्वितीय - सुगंधी जैन
तृतीय - रूचि अग्रवाल

त्रकार -

संजय जैन

भानू प्रताप सिंह

हरिशंकर

घनश्याम

अन्नू

बृजेश श्रीवास्तव

अवस्थी

सत्येन्द्र श्रीवास्तव

मुन्ना खान

कमलेश गौतम

ायाकार -

श्री संजय जैन

श्री घनश्याम प्रजापति

सांस्कृतिक कार्यक्रम सहयोगी :-

ामुख सहयोगी-

मनोज जैन

मनोज दुबे

जयकुमार जैन 'जलज'

दिग्विजय नेमा

बृजेश दुबे

मुरारी सोनी

मनीष चौरसिया

अन्य सहयोगी-

सर्वेश्वर नेमा

अभिषेक ताम्रकार पेंटर - हटा

बलराम रजक पेंटर - लुहारी

राजकिशोर पाण्डे

अनन्तराम पटैल

भूपेश गर्ग

रामकृष्ण श्रीवास्तव

रमेश श्रीवास्तव

भारती नेमा

सौरभ कोष्ठी मोनू

अनिल सोनी (जे.एस.के., बबलू)

अनिल सोनी. (शिक्षक, एम.एस. बड़ा - हटा)

श्री राम कुरेरिया
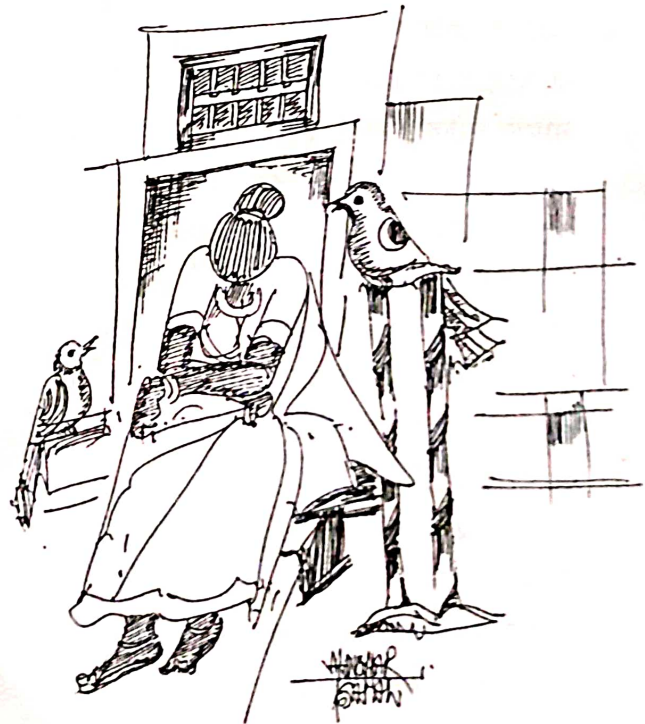
बुंदेली मेला आयोजन समिति वर्ष - 2010

(1) आयोजक:-

नगरपालिका परिषद हटा - दमोह (म.प्र.)

(2) संरक्षक मंडल:-

श्रीमति उमा देवी खटीक (विधायक, हटा)
श्री एच.के.जैन (जहवाहर नवोदय विद्यालय, हटा)
श्री डॉ. श्यामसुन्दर दुबे
(पूर्व प्राचार्य डिग्री कॉलेज, हटा)
श्री डी.एल. तिवारी (तहसीलदार एवं अध्यक्ष
गौरीशंकर मंदिर कमेटी, हटा)
श्री गोविन्दप्रसाद असाटी
(सचिव, गौरीशंकर मंदिर कमेटी, हटा)
श्री पं.राजकुमार दुबे
(सदस्य, गौरीशंकर मंदिर कमेटी, हटा)
श्री राजेश त्रिवेदी (पूर्व प्रशासक न.पा. हटा)
श्री जीवन तंतुवाय (पूर्व अध्यक्ष, न.पा., हटा)

(3) संयोजक:-

कुँवर पुष्पेन्द्र सिंह हजारी

(4) स्वागत समिति:-

श्री बाबूलाल तंतुवाय, अध्यक्ष, नगरपालिका, हटा
श्रीमति सरोजनी मोदी, उपाध्यक्ष, नगरपालिका, हटा
श्री अनंतराम नामदेव, ''पार्षद''
श्रीमति रश्मि ताम्रकार, ''पार्षद''
श्रीमति सरोजनी पाराशर, ''पार्षद''
श्री सुधारानी साहू, ''पार्षद''
श्री जगन्नाथ पटैल, ''पार्षद''
श्रीमति शोभारानी अहिरवाार, ''पार्षद''
श्री मनीष चौरसिया, ''पार्षद''

(5) मेला अधिकारी:-

श्री संजेश नायक
मुख्य नगरपालिका अधिकारी
नगरपालिका परिषद हटा

(6) सहायक मेला अधिकारी:-

श्री रामशंकर व्यास
राजस्व निरीक्षक नगरपालिका हटा

(7) मंच संचालन समिति :-

श्री जयकुमार ''जलज''
श्री शाह मुकेश जैन (ऐड.)
श्री दिग्विजय नेमा

(8) मंच साज सज्जा समिति:-

श्री मनोज जैन, शिक्षक
श्री रामकुमार असाटी
श्री पन्नालाल साहू
श्री दिलीप शर्मा
श्री दिलीप कुमार सेन

(9) सांस्कृतिक कार्यक्रम समिति:-

श्री चंद्रकांत यादव, संगीत शिक्षक
श्री मनोज जैन, शिक्षक
श्री लक्ष्मण सिंह राजपूत
श्रीमति भारती नेमा
श्रीमति सुधा जैन
श्री रामनाथ राय
श्री भगतसिंह ठाकुर

(10) प्रचार-प्रसार समिति:-

श्री कृष्णकुमार खत्री
श्री संजय जैन
श्री रवीन्द्र अग्रवाल
श्री कमलेश असाटी
श्री धनश्याम प्रजापति
श्री सुधीर सराफ
श्री मनोज चौरसिया
श्री रूप सिंह राजपूत
श्री भानुप्रताप सिंह

श्री हरिशंकर साहू

श्री अजीत अवस्थी

श्री अनिल ताम्रकार

श्री मुन्नालाल अहिरवाल

(11) निर्णायक समिति:-

पं. नर्मदा प्रसाद पुरानी

पं. श्री कन्हैयालाल गौतम

पं. श्री नारायण व्यास

पं. श्री गणेश व्यास

पं. मनोज दुबे

पं. श्याम सोनी

पं. बृजेश दुबे

पं. श्रीराम कुड़ेरिया

श्री गिरजाप्रसाद सेन

(12) खेल समिति:-

श्रीमति शोभारानी पार्षद

श्री पी.एन.सिंह

श्री संदीप दुबे

श्री सुशील सेलट

श्री अविन्द हजारी

श्री अजयपाल सिंह

श्री लखन मोदी

श्री रामेश्वर जडिया

श्री हरिप्रसाद सोनी

श्री प्रदीप सोनी

श्री हरेन्द्र पाण्डेय

श्रीमति सी.के.सिंह

श्री योगेश्वरी राजपत

कु. वर्षा राजपूत

(13) बुंदेली व्यंजन मेला समिति:-

श्री प्रमोद जैन

श्रीमति सुधा जेन

श्रीमति राजकुमारी असाटी

श्रीमति निवेदिता दुआ

श्रीमति संध्या जैन

श्रीमति सिंधुबाला जैन

श्रीमति किरण सोनी

श्रीमति आशा बजाज

श्रीमति उर्विजा बजाज

श्रीमति संजना बजाज

श्रीमति पुष्पा सिंह

श्रीमति कल्पना जैन

(14) भोजन व्यवस्था :-

श्रीमति जुलेखा बी "पार्षद"

श्री जगदीश अग्रवाल

श्री शिवकुमार गुप्ता

श्री सरमनलाल मोदी

श्री सरमन पटैल

श्री जुगल पटैल

श्री सुरेन्द्र अग्रवाल

श्री धनीराम साहू

श्री लटोरीलाल साहू

(15) मेला कार्यालय समिति:-

श्रीमति अवधरानी "पार्षद"

श्री क्यू खान "पार्षद"

श्री मोहनलाल साहू

श्री बलराम साहू

श्री कंदीलाल साहू

श्री रहीम खान

श्री पूरनलाल साहू

श्री मोहन अहिरवाल

श्री मोहन तंतुवाय

(16) प्रदर्शनी समिति

श्री महेश अहिरवार "पार्षद"

श्रीमति अलका सोनी "पार्षद"

श्री मनीष जैन "पार्षद"

श्री अफजल पठान "पार्षद"

श्री प्रहलाद व्या

श्री मोहन गगेले

श्री पप्पू खान

श्री लक्ष्मी तंतुवाय

श्री हीरालाल साहू

प्रतिक्रिया

स्वर्णबती सरिता के पूर्व तट पर श्री देव गौरी शंकर जू देव की छत्र छाया में बसा हटेशाह का हटा नगर मध्यप्रदेश की पावन धरा पर उपकाशी के नाम से आलोकित हो रहा है। परम आदरणीय, पूजनीतय डॉ. मनमोहन पाण्डे जी ने बुंदेली संस्कृति के उन्नयन संवर्द्धन हेतु कुं. पुष्पेन्द्र सिंह हजारी को प्रेरित किया। आपने बुंदेली सभ्यता की सूक्ष्म विधाओं को पत्रिका के रूप में जन-जन तक पहुँचाने का पूर्ण भार अपने कंधों पर लिया। आपने देश, प्रदेश के विभिन्न अंचलों के साहित्यकारों, कवि लेखकों को आमंत्रित कर उनकी रचनाओं को बुंदेली संस्कृति को प्रकाश में लाने के लिए उनके महत्व को दृष्टिगत रखा। आप 75 वर्ष की उम्र में भी एक युवा की भाँति निरंतर अथक प्रयास करते रहते हैं। आपने निस्वार्थ भावना से पत्रिका का संपादन किया। ''बुन्देली दरसन'' अपने कलेवर में विभिन्न सांस्कृतिक ऐतिहासिक, पौराणिक, दार्शनिक, रीति-रिवाज एवं बुंदेली सभ्यता का पूर्ण आवरण समेटे हुये है। मुझे पूर्ण विश्वास है कि यह स्मारिका निरंतर वट वृक्ष की भाँति चारों ओर अपनी शीतल छाया प्रदान करती रहेगी।

पचहत्तर की हुई निरापद-स्वस्थ्य प्रसन्न उमरिया,
हँसा हँसा कर योगी बन गये डॉ. मनमोहन भैया
साई दरवार खों धापित करके सौंप दओ जीवन को जरिया।

– डॉ. सी.एल.नेमा (स्वर्ण पदक)
एम.डी.आयुर्वेद
अश्वमेघ भवन (हटा)

आदरणीय भाई साहिव

डॉ. पाण्डेजी-हरि स्मरण

आप द्वारा प्रेपित (बुंदेली दरसन) पत्रिका उपलब्ध हुई। वास्तव में दरसन हृदय परसन है 'पढ़कर आनंद की अनुभूति हुई' पत्रिका में ऐसी रचनायें हैं जिनसे मैं अनविज्ञ था। जैसे राजकीय जगनिक राय, हटा की हटा दर्शनीय एवं प्रसंशनीय है। कवितायें बहुत ही आकर्षक हैं। कुछ तो बहुत प्रिय लगी। जैसे- पृष्ठ 44 पर 'बुंदेली गीत' चढ़ी हुयै नदिया नाँ ऐसे में जाव सुनौ जीजा जू।

भोर चले जइयो बस आज बने राव सुनौ जीजाजू॥

पृष्ठ- 46 पर ''गाँव बदल गयो अपनो'' पृष्ठ- 68 पर भ्रमरगीत और भी हैं। प्राणायाम देकर बड़ा हित किया है। आसन भी अति उपयोगी दिये हैं। मुझे दोहे बहुत पसन्द आये।

दोहा- भेजी पुस्तक आपने किया अनुग्रह भूर।
कीमत इस उपकार की देने में मजबूर॥
बुंदेली भाषा मधुर बोल रहा हूँ सत्य।
पढ़कर मैं तो हो गया वहुत-बहुत कृत कृत्य॥

– डॉ. कृष्णहरि पचौरी,
दीनदयाल नगर, सीहोर
मो. 9301163136

परम आदरणीय

पाण्डेय जी

प्रणाम

'बुंदेली दरसन' 09 का अंक कई मायनों में संग्रहणीय बन पड़ा है। पत्रिका उच्चकोटि की पठनीय सामग्री से ओत प्रोत है। हर वर्ग के पाठकों को पसंद आयेगी ऐसा मेरा विचार हैं। मुझे पहली बार पत्रिका देखने को मिली। संपादकीय कौशल एवं साम्रगी चयन प्रभावित करता है। सुन्दर साज-सज्जा, आवरण चित्र तथा छपाई सहराहनीय है। मैं पत्रिका के भविष्य की कामना करता हूँ।

मणि 'मुकुल'
वरिष्ठ साहित्यकार
आधारताल, जबलपुर, मो. 989360200

सम्मान्य:

डॉ. पाण्डेयजी

नमो नम:

बुंदेली जगत की शान (बुंदेली दरसन) द्वितीयांक वर्प 2009 हस्तगत कर गौरवांन्वित हुआ। अति आनंद आया। मनोरम, महकते आँखों के प्रस्फुटित पुष्प, रचनाओं, गीतों के गुंजन करते भ्रमर एक सुन्दर वाटिका सी शोभा वढ़ाते हैं। सुसम्पादकीय टिप्पणी अपने आप में वेजोड़ है। 105 पृष्ठीय सुडौल कलेवर में यदा कदा (बुंदेली उत्सव) के रंगीन छायांकन न.पा. हटा की सक्रियता, भव्यता की गौरव गाथा बताते हैं। शतवार बधाई के साथ कुछ बुंदेली मिठास युक्त निम्न पंक्तियों में आपके

लिये।

''बुंदेली दरसन'' है आई।
खूबई-खूबई खुशी है छाई॥
रंगीन गेट अप हँसरसौ दिखरयौ
का का कितनी लिख दें भाई॥
संरक्षक श्री सिंह ''हजारी''
निष्ठा-निष्ठा भी दिखलाई॥
अच्छौ मैटर संपादन खाँ
(सीकर) मेहनत पान्डे लाई॥

डॉ. एल.आर.सोनी, (सीकर)
ठंडी सड़क, दतिया

आदरणीय

डॉ. पाण्डेजी,

सादर नमस्कार

कुशलोपरांत आपकी कुशलता की कामना ईश्वर से सदैव करता रहूँगा।

'बुंदेली दरसन' का अंक मुझे प्राप्त हुआ। मैं हृदय से आपका आभारी हूँ। आपका संपादन स्तुत्य है। पत्रिका का अंक संग्रहणीय एवं शोध कार्यों हेतु बहुउपयोगी है। आशा है आप इस गुरूतर कार्य हेतु सदैव तत्पर रहेंगे।

राजीव नामदेव
राना लिधौरी, शिवनगर कॉलोनी,
टीकमगढ़ मो. 9893520935

आदरणीय

डॉ. पाण्डेय जी

सादर नमस्कार

आपके द्वारा सम्पादित आकर्षक कलेवर से परिपूर्ण (बुंदेली दरसन) पत्रिका दर्शनीय तो है ही पठनीय भी है। प्राप्त होते ही पन्ने उलट डाले बुंदेलखंड संबंधी विविध सामग्री देखकर मन प्रसन्न हो गया।

श्रेष्ठ संपादन हेतु मेरी हार्दिक बधाई स्वीकार कीजियेगा।

सादर, प्रणाम

हरिविष्णु अवस्थी
किले का मैदान, टीकमगढ़
फोन- 07683242530

''बुन्देली दरसन'' के लाने जौ मन ललचा रऔ।
होय अंक तौ भेजें पांडे! भैया ''मुकुल'' मंगा रऔ।

– कन्हैया लाल शास्त्री ''मुकुल''
महासचिव
सृजन भारती, विंध्याचल
खांदी - ताल बेहर, जिला-ललितपुर (उ.प्र.)

श्री युत पाण्डे

प्रणाम।

'हटा की आध्यात्मिकता' शीर्षक से आलेख 'बुंदेली दरसन' के नवीन अंक में पढ़ने को मिला। उसके लिए धन्यवाद। बुंदेलखंड के ऊपर बहुत अच्छी जानकारी जुटाई गई है। 'हटा नगर की ऐतिहासिकता के साथ वहां की ऐतिहासिक धरोहरों को जाना' अंक संग्रहणीय है।

आपके उधर का 'हजारी परिवार' बधाई का पात्र है। उनकी लगन, उत्साह और कलात्मक अभिब्यक्ति सराहनीय है, पत्रिका का मोनोग्राम अत्यन्त महत्वपूर्ण बन पड़ा, समझ की गंभीरता का घोतक है 'अनूठा भी है' मौलिकता के लिए धन्यवाद। श्रीमान जी आपका कुशल संपादन आलेखों का चयन और पत्रिका की साज-सज्जा बेहतरीन बन पड़ी है। बाल कलाकारों के मनमोहक चित्र स्मृति में रहेंगे। पत्रिका अपनी जीवन यात्रा में अग्रसर रहे, इसी कामना के साथ पुन: धन्यवाद

वीरेन्द्र सिंह चन्देल
चन्देल भवन, आलमपुर

श्री युत

प्रखर पुरूष डॉ. पाण्डेय जी

प्रेम प्रणाम

''बुंदेली दरसन'' स्मारिका की सुसज्जित वाटिका वीथियों में मेरा मन मत मत्त मधुप के समान सम्मोहित सा होकर स्पन्दन करता हुआ अठखेलियाँ खेलने लगता है। मनन करने पर प्रत्येक कविता में कवि की ललक एवं सविता झलक के दर्शन होने लगते हैं। कहीं साहित्यक तो कहीं बुंदेली तो कहीं बिखरी भाषा के जोड़ने का प्रयास अनायास की खास

खुशी उत्पन्न कर देता है। लेखकों की अपनी-अपनी युक्तियों की जोड़ की होड़ मन में भरोड़ पैदा करने लगती है। पत्रिका के आंतरिक एवं कलेवर पृष्ठों पर अंकित सशक्त चित्रों की विचित्र झलकियाँ छविगृहों में झलकने वाले सुसज्जित चित्रों की छवि को भी पीछे पछाड़ते हुई सी प्रतीत होती है। सुसुप्त हुई बुंदेली विधा को जगाने वाले भागी रहा आपका अथक प्रयास श्लाघनीय, संग्रहणीय, आत्मस्थापनीय एवं वन्दनीय है। बेतार की सितार में फिर से तार जोड़कर वागेश्वरी बजाने वाले बुद्धिवीर आप उस समय तक अधिक से अधिक बिन्दु जोड़कर प्रबल प्रयास करते रहें कि जब तक इस बुंदेली बसुधा परहोश, जोश, एवं कोष रूपी सिंधु श्रीमति पुनः उत्तंग तरंगे न दर्शाने लगें।

- ज्ञानी महिराज
- ब्रह्म कुंज, नल- नगर रनेह,
दमोह (म.प्र.) मो. 9893902928

प्रतिष्ठा में

माननीय,
डॉ. एम. एम. पाण्डेय
संपादक- बुंदेली दरसन (हटा)
नव वर्ष की मंगल कामनाएँ

माननीय,

आपकी पत्रिका (बुंदेली दसरन) के अवलोकन का सौभाग्य मिला। पत्रिका के प्रकाशन के साथ बुंदेली उत्सव या मेला का आयोजन श्लाघनीय है। बुंदेली भाषा और संस्कृति की जीवन्तता बनाएं रखने की आवश्यकता की पूर्ति हो रही है। आप और अन्य और जो भी आदरणीय जन मातृभूमि की सेवा में समर्पित भाव से संलग्न हैं उन सभी सपूतों को मेरा बन्दन-अभिनंदन है। आशा है आप सभी का भागीरथी प्रयास बुंदेली धरा पर सदैव सफल रहेगा।

भजनलाल महोबिया
रांझी, जबलपुर
मो. 9406066688

आदरनीय पाँडे जू,

अपुन के इतैके बुंदेली मेला में घूमघाम से होवे वारे नाँच गान, खेल तमासे देसी पहराबे में सजी धजी झाँकियन को झलकें देखकें मोय भारी खुशी भई। बुंदेलखण्ड के रीतिरिवाजन तीज-त्योहरन, किसा-कहानियन, खान-पान, आदर सत्कार अहानन-कहानन पर मनमुक्ती जानकारी दैवे वारी संजे यजे अंदाज बुंदेली दरसन की इतनी बड़ी पोथी कम समय में छपवाकें बुंदेलखण्ड की धरती मैया को मांथौ ऊंचौ करो, अपुन के इतने बड़े रिन से आवे बारी पीढ़ियाँ कभऊँ उरिन न हुइयें। बुंदेली दरसन की पुरानी पोथियाँ बच्चों हौंय तौ जरूर पौंचाइयौं, बड़ी, ललक है उने निहारने की।

बुंदेली मइया अपुन को अपनों सेवक बना के खूबई लंबी उमर दैवें। अपुन के सबई संगो-साथियन को मोरी जैराम जी, जै बुंदेलखण्ड की जरूरई कइयौ।

विन्तवार

प्रो. डॉ. कुंजीलाल पटैल (मनोहर)
33/558, रेडियों कॉलोनी के सामने,
पन्ना रोड, छतरपुर (म.प्र.) 471001
मो. 9425879773

आदरणीय पांडे जू,

सादर प्रणाम,

'बुंदेली दरसन' के संरक्षक श्री पुष्पेन्द्र सिंह हजारी जू नें, आयोजक मंडल नगर पालिका परिषद हटा के प्रबुद्ध सदस्यन नें, पूरे विधी विधान सें संजों कें, अपने बुंदेली धरा-धाम के कलाकार हाले-फूलें नईं समाँ रये। उनें अपनी कला प्रदरसन के लाने 'बुंदेली मेला-बुंदेली दरसन' के मंच पै ऐसौ-नौनौ मौका जो मिलौ है।

अपनी बुंदेली संस्कृति कौ तीर्थ जौ बुंदेली मेला-बुंदेली दरसन खूब फूलै फरै बेतवा धसान-केन गंगा मैया के अमृत जल से सरसित ई पुण्य धरती पै विराजीं मैहर की शारदा भुमानी सें हमाई जेई मनौती है।

मंगल कामनायें
आप कौ अपनौं
अशोक चतुर्वेदी

संस्थापक
लोक संस्कृति शोध संस्थानम्
गरौठा (झाँसी) उ.प्र.

मेले में पधारे मार्तण्ड मनीषी

श्री ग्या प्रसाद जी नायक 'बाबूजी'

हटा की छबीली छटा - श्रीदेव गौरीशंकर

बुन्देल केशरी महाराजा छत्रसाल

– हरिविष्णु अवस्थी

बुन्देल भूमि पाषाण रत्नों की जन्म दात्री के ही भाँति नर रत्नों की भी जन्म-दात्री है। अनेक ऋषियों-मुनियों की जननी जन्म भूमि ने अनेक योद्धाओं को भी जन्म दिया है, उनमें से एक स्वनाम धन्य हैं महाराजा छत्रसाल बुन्देला। जिन्होंने अपने बल एवं पौरुष से एक विशाल राज्य की स्थापना की थी। छत्रसाल के राज्य की सीमाओं से सम्बंधित निम्नलिखित दोहा तो अब बुन्देलखण्ड भू-भाग के सीमांकन के रूप में विद्वानों, इतिहासकारों द्वारा प्रयुक्त किया जाता है-

इत जमुना उत नर्मदा, इत चम्बल उत टौंस।
छत्रसाल सैं लरन की, रही न काहू हौंस॥

प्रचण्ड बाहुबल से, विशाल भू-भाग को, जीतकर राज्य स्थापित तो किया जा सकता है; किन्तु राज्य संचालन हेतु चाहिए बुद्धिमत्ता, उत्तम चरित्र, दूरदर्शिता एवं नीति निपुणता जैसे विशिष्ट मानवीय गुण। नैतिकता तो राजनीति की रीढ़ होती है। मानव इतिहास के सबसे विलक्षण राजनीति चाणक्य के अनुसार-

राज्य मूलं इंद्रियं जय:

अर्थात राजा का मूल है इंद्रियों को अपने बस में रखना, जितेन्द्रिय होना।

महाराजामें उपरोक्त सभी गुण विद्यमान थे। स्वर्गीय वियोगी हरि जी के अनुसार- ''महाराजा छत्रसाल जैसे वीर योद्धा थे वैसे ही कुशल शासक भी थे। उन्होंने बहुत कुछ अंशों में राम-राज्य स्थापित कर दिया था। प्रजा का पुत्रवत पालन करते थे। मदोन्मत्त को यथेष्ठ दण्ड देना और शरणागत दीन तथा गौ ब्राह्मणों की रक्षा करना उनका एक मात्र ध्येय था।''

महाराजा छत्रसाल महिलाओं की स्वतंत्रता के हामी एवं पर्दा प्रथा के प्रबल विरोधी थे। बुन्देलखण्ड का संक्षिप्त इतिहास के रचियता पं. गोरेलाल तिवारी के शब्दों में- ''यवनों के संसर्ग के कारण बुन्देलखण्ड में भी पर्दा प्रथा बढ़ रही थी परन्तु महाराजा छत्रसाल ने इसे रोकने का प्रयास किया और स्त्रियों को बिना पर्दा के निकलने का हुक्म दिया। उन्होंने स्त्रियों के प्रति दुर्व्यवहार करने वालों के लिए कठिन दण्ड की व्यवस्था की।'' छत्रसाल के समान उदार और प्रजा पालक शासक इस संसार में बहुत थोड़े ही हुए है।

महाराजा छत्रसाल का जितना अधिकार तलवार पर था, उतना ही अधिकार लेखनी पर भी था। वे करवाल और कलम दोनों के ही धनी थे। एक ओर जहाँ वे एक श्रेष्ठ योद्धा थे वहीं दूसरी ओर वे एक श्रेष्ठ कवि भी थे। युद्धकाल में उन्हें तलवार चलाने में जितनी दक्षता प्राप्त थी शांति काल में उतनी ही दक्षता उन्हें कलम चलाने (काव्य रचना करने) में प्राप्त थी। छत्रसाल वीरों की भांति कवियों का भी बहुत सम्मान करते थे। उनके दरबार में सौ से अधिक कवि थे। कवियों के सम्बन्ध में उनका कथन था कि-

आवत आप कृपा करकैं, छत्रसाल कहैं उठि आदर कीजे।
सारद कंठ बसै जिनके, तिनके ढिंग बैठ सुधारस पीजे।
तार जराय जवाहिर दै, गज बाजन कैं सनमानहिं कीजे॥
कीरत के बिरवा कवि हैं, इनकों कबहूं कुम्हलान न दीजे॥

कविवर भूषण की पालकी में कंधा देने की घटना तो हिन्दी साहित्य के इतिहास में स्वर्णाक्षरों में अंकित है।

स्वर्गीय वियोगी हरि जी ने संवत् 1983 विक्रमी (सन् 1926 ई.) में छत्रसाल की उपलब्ध रचनाओं का सम्पादन कर उन्हें छत्रसाल ग्रंथावली के नाम से प्रकाशित कराया था। उनकी भक्ति विषयक रचनाएँ भगवान श्री कृष्ण, भगवान श्री राम एवं बजरंगबली की विशुद्ध श्रृंगार एवं नीति विषयक छंदों का भी सृजन किया था।

उनकी राजनीति विषयक एक छंद दृष्टव्य है-

चाहौ धन, धाम भूमि, भूषन भलाई भूरि
सुजस सहूरजुत रैयत को लालियौ।
तोड़ादार, घोड़ादार सों प्रीतिकर,
साहस सों जीत जग क्षेत्र तेन चालियौ॥
सालियो उदंडनि को दंडनि को दीजो दंड
करिकै घमण्ड घाव दीन पै न घालियौ।
विनती छत्रसाल करैं होय जो नरेश देश,
रहै न क्लेस लेस मेरी कहयो पालियो॥

उपरोक्त छंद के भावों को निम्नलिखित दोहे में भी संजोया गया है-

राजी सब रैयत रहै, ताजी रहै सिपाहि।
छत्रसाल ता राज कौ, बार न बाको जाहि॥